उल्का

नीहार रंजन गुप्त

अनुवादक
प्रबोध कुमार मजुमदार



'उल्का' नीहार रंजन गुप्त का सब से अधिक प्रसिद्ध उपन्यास है। इसका नाट्य रूप तो और भी उत्कृष्ट है। इसी कृति के कारण नीहार बाबू ने बंगला-साहित्य-क्षेत्र में इतना यश पाया। मानव-मन के द्वन्द्व-संघातों से इसका कथानक भरा तो है ही, लेकिन इसमें नाटकीयता अपने स्वाभाविक रूप में इतनी अधिक है कि इसका कथा-सौन्दर्य सौ गुना बढ़ गया है।

राजीव घोष को अपनी कुरूपता के कारण जीवन में काफी दुःख भोगना पड़ा था। लेकिन अपने दृढ़ निश्चय और प्रयास से वे जीवन में सुप्रतिष्ठित भी हुए। उनको वैभव मिला, ख्याति मिली और मिली सुन्दरी पत्नी। उन्होंने आशा की थी, सुन्दरी पत्नी के गर्भ से जो सन्तान पैदा होगी वह मेरी जैसी कुरूप तो नहीं होगी। लेकिन भाग्य का परिहास! उनका पहला पुत्र उनसे भी ज्यादा कुरूप पैदा हुआ। उन्होंने नवजात पुत्र को ही मार डालना चाहा लेकिन अपने मित्र डा० सुहृद सरकार के कारण वे ऐसा न कर सके। डा० सरकार शिशु को ले गये। स्वामी विरजानन्द के आश्रम में उस शिशु का पालन-पोषण होने लगा। धीरे-धीरे वह बच्चा जवान हुआ और नाम पड़ा अरुणांशु। शकल-सूरत में दानव वह दिन की रोशनी में बाहर निकलने से डरता लेकिन प्रचंड बलशाली और निष्पाप निर्मल हृदय का अधिकारी। स्वामी जी मरते समय अरुणांशु को डा० सरकार का पता देकर यह भी बता गये कि उसके माँ-बाप हैं। लेकिन वे कहाँ हैं ?

अरुणांशु डा० सरकार के पास गया फिर एकदिन अपने माँ-बाप

की खोज में भी निकला। माँ-बाप मिले लेकिन वे अपनी पहली संतान को पहचान न सके। अपने छोटे भाई सुवीर के हाथ उसे लांछित भी होना पड़ा। खैर, वह डा० सरकार के घर ही रहने लगा। यहीं रहते हुए वह जान गया कि सुवीर और डाक्टर साहब की लड़की मीली में प्रेम है। दोनों की जल्द शादी होगी। इधर सुवीर बुरी संगत में पड़ कर गलत रास्ते पर काफी दूर बढ़ चुका था। एक दिन उसके बुरे साथियों ने उसे जान से मारने का जाल रचा। उन्हीं लोगों ने मीली का अपहरण किया लेकिन संयोगवश अरुणांशु को इसका पता चल गया। उसने गुंडों का पीछा किया। घटनाचक्र से सुवीर की जान बची और मीली का उद्धार हुआ लेकिन गुंडों के हाथ घायल अरुणांशु बच न सका। लेकिन उसके मरते समय उसे अपने माँ-बाप मिले। राजीव घोष ने दुनिया के सामने उसे अपना पुत्र स्वीकार किया, लेकिन वह तब कहाँ था? आसमान के टूटे तारे के समान, ज्वलंत उल्का के समान अंतरीक्ष में अग्नि-रेखा खींचता हुआ वह राख बनकर ओझल हो चुका था।

प्रस्तुत उपन्यास में वाद-विवाद या मतवादों का कोई द्वन्द्व नहीं है, बल्कि यह कुरूप मानव की मर्मस्पर्शी कथा सुनाता है। उस मानव की व्यथा कितनी अथाह होगी जिसे मानवता के सभी गुण तो मिले लेकिन मानव का सुन्दर रूप न मिला। सृजनहार का यह क्रूर परिहास पाठक-जन को अनायास छू जाता है। फिर कथा इतनी सुगठित है और नाटकीयता स्वाभाविक रूप से ऐसी ओतप्रोत है कि पाठक इस उपन्यास को पूरा पढ़े बिना छोड़ नहीं सकता और पूरा पढ़ने के बाद दोबारा पढ़ना चाहता है। हिन्दी पाठकों को ऐसा उपन्यास दे सकने में विशेष हर्ष है।

—प्रकाशक

उल्क

स्वप्न

मनोविज्ञानियों के अनुसार, कहते हैं, प्रत्येक मनुष्य के मन को तीन स्तरों या हिस्सों में बांटा जा सकता है। स्थूल या सज्ञान, अवचेतन और निर्ज्ञान। और कहा जाता है कि यह आखिरी वाले निर्ज्ञान मन की चाल-ढाल बड़ी ही अजीबोगरीब व रहस्यमय होती है। और जिसका असर कभी-कभी जब लोगों के काम और बरताव मे झलकने लगता है तब विस्मय का मानों कोई ओर-छोर नही रह जाता। और जिसके परिणाम स्थूल, वास्तव और सूक्ष्म कल्पना के तर्कों से भी, किसी-किसी क्षेत्र मे, विचारे नही जा सकते। ऐसी एक-एक विस्मयकारी घटनाएँ मनुष्य के जीवन में घट जाती हैं, जिनके कार्य-कारण के बारे में सोचने लगो तो थाह न मिले। लेकिन इसीलिए जिस प्रकार उसे पूरा-पूरा नकारा भी नहीं जा सकता उसी प्रकार सहज स्वीकृति मे उसे मान लेने में भी मन में दुबिधा का अन्त नहीं रह जाता। मनोविज्ञानियों के अनुसार किसी की पकड से बाहर मनुष्य का जो अत्यन्त सूक्ष्म मन है उसी के साथ स्थूल और परिदृश्यमान बाह्य रूप का एक बहुत ही निकट सम्पर्क या सिलसिले के अतिरिक्त यह कुछ और नहीं है। और वही सम्पर्क ज्यादातर क्षेत्रों में बड़े ही आश्चर्यजनक ढंग से शरीर और मन—दो अविभाज्य अंशों की सम्पूर्णता या समता को बनाये रखता है। हालांकि उसमें भी यह अजूबा है कि एक पकड और उपलब्धि से बाहर है तो दूसरा बेहद नजदीक, स्थूल और स्पष्ट। एक की मामूली-सी सिकुड़न भी आम नजरों को धोखा नहीं दे सकती जबकि दूसरे का थोड़ा-सा भी संकुचन या स्पन्दन बाहर से जानने या समझने का कोई जरिया नहीं। लेकिन मजा यह है कि ये दोनो मामले ही वंशानुक्रम से छूत की बीमारी

तरह ही प्रजनन के साथ ही साथ देह से देह में और मन से मन में उभर सकते हैं। उनमें से एक तो सामान्य प्रजनन नियमानुवर्तिता से, तो ारा सर्जक के सृष्ट जीव के अज्ञान या निर्ज्ञान मन या इच्छाशक्ति के अलंघ्य ाव के द्वारा प्रभावित होकर। या कहा जा सकता है कि मनुष्य की ज्ञान मनोलब्ध चिन्तनधारा जहाँ इच्छाधीन नहीं है उसी के अवश्यम्भावी श्य प्रभाव के द्वारा। हालांकि यह सारा का सारा मामला ही सृष्टि-तत्त्व ा एक अज्ञेय जटिल रहस्य है।

शरीर का डील-डौल काफी लहीम-शहीम होने पर भी राजीव में, बाह्य रूप कहने से जो समझा जाता है, वह कतई न था। भद्दा कहने पर हालांकि बहुत कुछ ही समझा जा सकता है। जिस प्रकार कभी वह देह के किसी विशेष अंग हाथ-पैर और नाक-मुख के गठन में गड़बड़ी के कारण या समग्र देह के अधूरेपन में जो कि यूं चाहे प्रकट न भी हो लेकिन बहुधा बोल-चाल, चलने-फिरने और निगाहों में बहुत ही भद्दे ढंग से प्रकट हो जाता है। बदन पर मढ़ी चमड़ी पर एक अस्तर काले रंग पर ही यह सदा निर्भर नहीं करता।

क्योंकि राजीव के बदन का रंग काला तो था ही नहीं बल्कि जिसे उजला गोरा रंग कहा जाता है वही था। बावजूद इसके, उसके शरीर के आकार और गठन में जो असामंजस्य था वही राजीव के बाह्य रूप को केवल कुरूप बनाये हो यही नहीं, उसे देखते ही मन में एक प्रकार का विकर्षण सा उत्पन्न होने लगता था।

ऊँचा लम्बा कद और भरा हुआ चेहरा। छोटा-सा लोमश माथा, छोटी छोटी आँखें, घने रोएँदार जुड़ी भवें। नाक जरा फैली हुई-सी, नथूने के छेद बड़ी-बड़ी, मोटे भारी काले होंठ, ऊपर वाली पांत के दांत जरा ब बड़े। चौकोर फैला-सा जबड़ा। सब कुछ मिल-मिलाकर मानों शरीर बाहरी रूप को बुरी तरह से विकृत बनाये हुए था। इसके अलावा गले आवाज भी खुरदरी और भारी थी। बड़े होकर ज्ञान आते ही यह दैहिक भ पन मानों उसके अचेतन मन पर अपने ही आप एक विराग ले आया थ यह विराग अगर सिर्फ उसके मन के भीतर ही सीमित रहता तो कोई ह

नहीं थी। लेकिन इसी के साथ-साथ इर्द-गिर्द, परिचित-अपरिचित प्रत्येक व्यक्ति की साफ-साफ या तो कभी पीठ पीछे उस सूरत की आलोचना उस विराग में इंधन डालती रही। चुनांचे उसकी उम्र जितनी बढ़ती रही, इस दुनिया के न केवल सारे कुरूप व्यक्ति ही बल्कि सारी कुरूप वस्तुओं के प्रति उसका विराग अपने प्रति उस विराग को खौफनाक शक्ल देने लगा। यह कुछ-कुछ उसके अनजाने ही, उसके अपने निर्ज्ञान मन के प्रभाव से ही।

साथ ही साथ शायद उसी कारण से ही राजीव के अवचेतन से ऊर्ध्व जो निर्ज्ञान मन है उसमें उस मनसजात विराग के अज्ञात और अनतिक्रम्य प्रभाव से चन्द विकृत कल्पनाएं आकर आप ही आप जुटने लगीं।

और शायद इसीलिए राजीव के अवचेतन मन में जो घृणा की वस्तु थी उसी के प्रति उसके निर्ज्ञान मन का एक अजीब-सा आकर्षण और ममत्व-बोध था।

जिस कारण राजीव समझ भी नहीं पाता था कि अपने अनजाने ही वह हर कहीं सचालित हो रहा है।

और यही उसका स्वाभाविक मनोधर्म है।

वंश-परम्परा से प्रजनन-बीज के क्रोमोज़ोम के प्रभाव से ही राजीव के शरीर में अपने पिता का रूप जरा अधिक मात्रा में झलक आया था। राजीव के पिता वृन्दावन घोष का चेहरा भी कोई खूबसूरत नहीं था, काफी-कुछ राजीव सा ही लोमश और बलवान था। साधारण मध्यमवर्गी घर। वृन्दावन का वैसा ही हाल था। लेकिन वृन्दावन अक्ल के तेज थे। मगर अक्ल को वे काम में नहीं लगा सके थे। यानी मौका नहीं मिला। और व्यर्थता का वह क्षोभ उन्होंने अपने पुत्र राजीव से ही मिटाना चाहा।

राजीव अपने पिता से भी अधिक कुत्सित रूप लेकर जन्मा और पहले ही बता चुका हूँ, यह उसके पिता के शरीर के विशेष विचित्र अंश के गठन के असामंजस्य के कारण था।

वृन्दावन के पास पिता से मिला हुआ एक छोटा-मोटा कारोबार था।

राजीव को उस कारोबार में न घसीटकर वृन्दावन घोष ने उसे पढ़ा-लिखाकर इससे भी अधिक विस्तृत पटभूमि में छोड़ देना चाहा था।

लेकिन पढ़ने के लिए स्कूल-कालेज जाते वक्त अक्सर राजीव को अपने भद्दे चेहरे के बारे में जो निर्दय दबी हुई बातचीत सुनाई पड़ती थी, क्रमशः उसी ने उसे न केवल अपने ऊपर, बल्कि जरा-जरा करके दुनिया की सारी बदसूरत चीजों के बारे में आजिज कर डाला। और दरअसल उसी वक्त से उसने मन में सौगन्ध खा ली थी कि इस शर्म और जलालत को मुझे एक दिन अपनी जिन्दगी से मिटा ही देना पड़ेगा चाहे वह किसी भी तरकीब से क्यों न हो।

लिहाजा अपने पिता की मृत्यु के बाद जब वह छोटा-सा कारोबार उसके कब्जे में आया तो लिखना-पढ़ना छोड़कर उसने सम्पूर्ण रूप से अपने को उस कारोबार में डाल दिया। तेज दिमाग और तरह-तरह के छल-छन्दों के जरिये उसने उस छोटे से कारोबार को चन्द सालों में ही एक बहुत बड़े कारोबार में बदल दिया। आयात-निर्यात का एक बड़ा-सा कारोबार राजीव और उसके एक गुजराती पार्टनर अगरवाला के सम्मिलित प्रयास से बन खड़ा हुआ।

जमकर बैठने के बाद राजीव को सबसे पहले जो बात याद आयी वह थी शादी कर घर बसाने की।

पत्नी के चुनाव में भी उसके अवचेतन मन और कुछ-कुछ उसके निश्चित मन ने प्रभावित किया।

विशाल कारोबार, मोटा बैंक बैलेन्स, इसलिए खुद बदसूरत होते हुए भी पत्नी-चुनाव के मामले में कोई भी बात हायल न हो सकी।

काफी देख भालकर गरीब के घर से बेमिसाल हसीन कमला को वधू बनाकर घर ले आया।

ताजे कोमल फूलों के एक गुच्छे की तरह ही कमला का वेऐत्र सुन्दर मुखड़ा था। राजीव की तरह लम्बी-चौड़ी नहीं, ठिगने कद की भरे हुए

बदन वाली। सब से बड़ी बात, कमला का दिल बड़ा ही कोमल और स्नेह-प्रवण था।

लम्बी खूबसूरत लड़कियाँ भी कई राजीव ने देखी थीं लेकिन छोटी नाटी कमला को ही पसन्द कर वह घर ले आया।

राजीव ने घर बसाया।

बिलकुल भिन्न चेहरे-मुहरे, शारीरिक कद-काठ, और भिन्न प्रकृति और मानसिक चिन्तन-प्रक्रिया लेकर राजीव और कमला का विवाहित जीवन आरम्भ हुआ।

राजीव उद्धत, क्रूट, बेपरवाह, संघातप्रिय और तीखे व्यक्तित्व वाला और कमला शान्त, नम्र और निर्विवादी।

फिर भी इस देश की नारियाँ जिस प्रकार अपने पति की इच्छा के अनुसार अपने को संपूर्ण रूप से निछावर कर देती हैं उसी प्रकार कमला ने भी पति के प्रखर व्यक्तित्व के सम्मुख अपने को बेझिझक सौंप दिया था।

नीतिशून्य, द्विधा व सकोचशून्य राजीव का व्यक्तित्व प्रचंड था जिसके सामने कमला मानों हमेशा बेरौनक-सी रहती थी जिस प्रकार प्रखर सूर्यालोक में खद्योत।

कमला जानती थी कि पति के जीवन में उसकी आवश्यकता बहुत कम है और जीवन में कमला की बस जितनी जरूरत है उससे तनिक भी ज्यादा राजीव उसे स्वीकारेगा नहीं इतना समझने में भी उसे कोई दिक्कत नहीं हुई।

इसलिए दिल का संयोग कहने से पति-पत्नी के जीवन में जो समझा जाता है उनके परस्पर के जीवन में वह कभी पनप ही नहीं सका।

विशेष रूप से राजीव के मन का एक अंश इतना प्रोज्वल और प्रखर था कि उस ओर ताकने में भी कमला को डर लगता था। राजीव के जीवन की गति आँधी-सी प्रचंड और दुर्वार थी। और अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए

पनी प्यारी से प्यारी चीज को त्यागने में वह जरा-सा भी हिचकता या कुचाता नहीं था।

कोई भी वाधा या प्रतिकूलता उसके लिए वाधा या प्रतिकूलता नहीं होती थी।

सिर्फ यही नहीं, गम्भीर और स्वल्पवाक राजीव के साथ वहुत निकट से या घनिष्ठ भाव से मिलने-जुलने की हिम्मत कमला को कभी नहीं पड़ी। कमला देखती थी, राजीव की आमदनी काफी है पर कोई फिजूलखर्च नहीं। चरित्र में वहुत सारे असामंजस्य हैं लेकिन कोई वुरे फेल या नशा नहीं है। उसके चरित्र में एक अजीव-सी पवित्रता थी और लोहा जैसी कठिन दृढ़ता। राजीव एक अनोखी धातु से वना हुआ था।

खब्त या शौक राजीव का एक ही था। व्यापार से सम्वन्धित काम से अवकाश पाते ही वह दुनिया भर की मनोविज्ञान की किताबें या क्राइम व उसी किस्म की तरह-तरह की किताबें लेकर पढ़ा करता था। इन सब पुस्तकों की एक अच्छी-खासी लाइब्रेरी भी थी राजीव की।

इनसान की सनकों की जैसे कोई इन्तहा नहीं, मानव-मन के वैचित्र का भी शायद कोई आदि-अन्त नहीं है।

यह सारी किताबें राजीव पढ़ा करता था और उसके मन के अवचेतन में कितने ही प्रकार की विचित्र कल्पनाएँ घूमा-फिरा करती थीं।

किसी-किसी वक्त ऐसी चिन्ताएँ उसके मन में झाँक जाती थीं जो शायद विस्मय को भी नीचा दिखा दे। सारी दुनिया में दोस्त या मन के सव से नजदीकी रिश्तेदार राजीव का एक ही था।

उसके कालेज का एक सहपाठी डा० सुहृद सरकार।

दोनों में उम्र का कुछ फर्क होने पर भी और शारीरिक गठन व मानसिक चिन्तन-पद्धति में दोनों भिन्न प्रकृति के होने पर भी दोनों में एक अजीव-सी घनिष्ठता वन गयी थी।

राजीव था दीर्घ वलिष्ठ पुरुष।

और सुहृद था ठिगना, नाटा, दुवला-सा आदमी।

राजीव था गंभीर और स्वल्पवाक। व्यक्ति-स्वतंत्रता में दृढ़ और अनमनीय। और मानों उसमें स्नेह और ममता का लेशमात्र नहीं था।

लेकिन सुहृद था मजाकिया, वाक्कुशल, अत्यन्त स्नेहशील और अति मात्रा मे सत्यनिष्ठ। और इस सत्यनीति के लिए वह हँसते-हँसते अपने जीवन की श्रेष्ठ प्रिय वस्तु को भी छोड सकता था। लेकिन दोनों ही साफगो थे।

राजीव दिन भर अपने व्यापार के काम मे लगा रहता था। और सुहृद था जनाने रोगों का विशेषज्ञ। एक छोटा-मोटा नर्सिंग होम था उसका। उसी में मरीजो को लेकर वह व्यस्त रहता था। राजीव ने विवाह कर लिया था लेकिन उस वक्त भी सुहृद ने शादी नहीं की थी। जरा जम कर बैठे विना वह शादी नहीं करेगा यही उसकी मन्शा थी।

दिन भर दोनों अपने-अपने कामों मे व्यस्त रहने पर भी रात को दोनों दोस्त घड़ी की सूई की तरह ही आ मिलते थे।

गर्मी, जाड़ा, बरसात—किसी भी मौसम मे उनकी इस नियमित मुलाकात में कोई बाधा नहीं आ पाती थी।

कभी-कभी राजीव के लाइब्रेरी-कक्ष मे बैठे दोनों दोस्तों में बहस-मुबाहसा चलता रहता था। बहस करते हुए सुहृद कभी बिगड़ भी जाता था लेकिन राजीव कभी गुस्साता नहीं था। शान्त स्वर मे मुस्कराकर कहता था, तुम कुछ भी कहो डाक्टर, मैं जो दता रहा हूँ उसमें तर्क है।

हुँह! तर्क नहीं, उसे अपनी जिस्मानी ताकत कहो। सुहृद कहा करता था।

नहीं। बदन की ताकत नहीं, बल्कि कह सकते हो यह मेरे मन का बल है।

मैं मानने को तैयार नहीं।

कमजोर का यही सबसे अचूक हथियार होता है।

कहते-कहते राजीव अपने मित्र की ओर देखकर मुस्करा पडता था।

हँसते क्यों हो? सुहृद के गले मे क्रोध का आभास।

तुम खफा क्यो होते हो डाक्टर? देखता हूँ कि तुम्हारे मस्तिष्क के स्नायु-कोष उत्तेजित हो उठे हैं। आओ—एक कप काफी पीकर उनको ठंडा कर

लिया जाय। कहते हुए राजीव घंटी का बटन दबाता और नौकर से काफी ले आने को कहता।

राजीव के मन में जो विचित्र अद्‌भुत कल्पनाएँ कभी-कभी उसे चंचल कर देती थीं उस बारे में सुहृद कहता था, सुनो राजीव, मनुष्य के अवचेतन मन से अलग और एक मन है जिसे मनोविज्ञानी कहते हैं, निर्ज्ञान मन। उसका असर अक्सर मनुष्य के कर्म और आचरण पर पड़ता है। इन सब उद्‌भट कल्पनाओं से अगर मुमकिन हो तो कतरा कर चलने की ही कोशिश करना।

कतरा कर चलूं। क्यों ? मैं चाहता भी तो हूँ इसे। वही कल्पना अगर मैं कभी देख सकूं कि साकार रूप ले चुकी है तभी मैं तुम लोगों की इस बात को स्वीकारूँगा कि निर्ज्ञान मन की अनुभूति और उसके बाह्य-प्रकाश में एक प्रकृत सामंजस्य या सम्पर्क है। तुम लोगों के इस प्रकार के पकड़ के बाहर वाले निर्ज्ञान मन और मनुष्य के व्यावहारिक चरित्र में एक रैशनालिटी है।

सुहृद हँस पड़ता था।

राजीव कहता था, हँसते क्यों हो डाक्टर ?

हँसूँ न तो क्या करूँ ? तुम्हारा सारा का सारा ही ऐबनार्मल है।

यह क्या कोई बहुत हैरत-अंगेज बात है ?

नहीं ?

कतई नहीं, क्योंकि हर जीनियस कुछ मात्रा में ऐबनार्मल होता है।

बहाने से सच्ची बात को ढाँपने की कोशिश मत करो राजीव। ऐबनार्मलिटी कहकर जिसकी शाबाशी तुम लेना चाहते हो उसकी अपनी एक सीमा या लिमिट है यह जान लेना।—डाक्टर ने दृढ़ स्वर में जवाब दिया।

हँसते-हँसते राजीव ने कहा, सच ?

जी हाँ, जब वह स्वाभाविक का दायरा लाँघ जाता है तभी उसे हम विकृति कहते हैं। व्याधि। डिज़ीज।

हाँ, सो तो कहोगे ही। तुम लोगों के विज्ञान की पहुँच वहीं तक तो है। आज यह बात बेशक कह रहे हो तुम लेकिन सचमुच कभी ऐसा ही कुछ घटित हो जाय तो उस दिन शायद उसे तुम बरदाश्त नहीं कर सकोगे।

सुहृद के कहने का एक और कारण था।

कारण—राजीव के मन की सारी कल्पनाएँ एक विकृत रास्ते पर ही चला-फिरा करती हैं यह खबर राजीव के निकटतम मित्र और चिकित्सक सुहृद से छिपी नहीं थी।

राजीव कहता था, दुनिया में ऐसे लोग बहुत कम ही हैं जिनमें कुछ न कुछ विकृत अनुभूति या चेतना नहीं है। चोरी, डकैती, जालसाजी या कत्ल—ये सारी वृत्तियां जिनमें हैं वे ठीक आम लोगों के दर्जे में नहीं आते। वे कुछ तो ऐवनार्मल होते ही हैं और उनकी अक्ल जरा दूसरों से अधिक और प्रखर ही होती है।

हालांकि यह भी सही है कि चोरी या डकैती कहने से मैं मामूली चोर-डाकुओं को भिन्न नहीं कर रहा हूं। असली ब्रेन न होने पर इन साहसी कार्यों में योग देना सम्भव नहीं होता।

सुहृद मित्र की बातों पर नाराज हो उठता था और कहता था, उन आदमियों के ब्रेन को अगर तुम ब्रेन कहते हो तो मुझे कुछ भी कहना नहीं है।

राजीव अपने मित्र की बात का विरोध करता था, अफसोस डाक्टर, तुम मेरी बात पकड़ ही नहीं सके। ब्रेन कहने से मैंने उनकी कर्मशक्ति और चिन्तन-शक्ति की ओर ही संकेत किया है।

यह तो एक ही बात हुई—

नहीं, भई नहीं। और चोरी-डकैती की बात करते हो—कौन है इस दुनिया में जो यह काम नहीं करता?

मतलब?

मतलब बहुत आसान है। सभी चोर हैं, सभी डाकू हैं, यही मैं कहना चाहता हूं। जरा-सा शक्ल में रद्दोबदल है। जिस सभ्यता या समाज-व्यवस्था में साम्य नहीं है इक्वेलिटी नहीं है उस समाज और उस जगत् में सभी चोर और जुल्मी हैं। अनुचित अत्याचार और कानून से तुम लोगों ने जिस सभ्यता और समाज-व्यवस्था का निर्माण किया है वह क्या शुरू से आखिर तक एक बहुत बड़ा जुल्म नहीं है—

रुको-रुको वे-सिर-पैर की हाँकने की भी एक हद होती है।

कहते हुए सुहृद डाक्टर फिर गरमा गया था।

फिर भी राजीव ने मित्र का तर्क स्वीकारा नहीं। हँसते-हँसते अपना वहस शान्त स्वर में जारी रखे रहा।

जातक

उस दिन रात को भी दोनों मित्रों में वातें हो रही थीं।

राजीव की पत्नी कमला के शीघ्र ही वच्चा होने वाला है।

उस अनागत सन्तान के वारे में ही दोनों मित्रों में वातें हो रही थी। राजीव कह रहा था, मेरी कल्पना क्या है जानते हो डाक्टर ? मेरी पहली सन्तान मुझ जैसा कुरूप नहीं होगी। वह कमला का रूप लेकर सुन्दर होगी, मेरा कद-काठ लेकर लम्वी-चौड़ी। अकूत शक्ति का अधिकारी होगा वह वच्चा। उसके मस्तिष्क में रहेगी अद्भुत शक्ति।

सुहृद ने हँसते-हँसते जवाव दिया, इसका उलटा भी तो हो सकता है। तुम्हारी शक्ल-सूरत और भाभी का शान्त-सुहाना स्वभाव भी तो वह पा सकता है।

नहीं, नहीं, मुझ जैसा कुरूप वह नहीं होगा—कहते-कहते राजीव मानों अपने अनजाने ही सिहर उठा।

सचमुच अगर उसकी औलाद उसी तरह वदसूरत आ गयी तो—राजीव से अधिक सोचा न गया। उसका दिल धड़कने लगा। चूँकि राजीव का चेहरा वेहद वदसूरत था, तभी न वह काफी देखभाल कर वहुत ही गरीव गृहस्थ

की बेजोड़ रूपवती इस कन्या कमला को चुनकर शादी कर लाया था कि अपनी कुरूपता पर वह विजय पा सके।

और अपना चेहरा कुरूप होने के कारण राजीव के दिल में एक लज्जा और दुख का बोध था, यह बात किसी और के, यहाँ तक कि उसकी पत्नी के न जानने पर भी एकमात्र घनिष्ठ मित्र सुहृद से अनजानी न थी।

और केवल सुहृद को छोड़कर इस बारे में अगर कोई भी जरा-सा इशारा करता तो वह फौरन आपे से बाहर हो जाता था।

चूंकि राजीव सुहृद को दिल से चाहता था और सुहृद के प्रति राजीव की एक कमजोरी रहने के कारण ही शायद वह सुहृद के खिलाफ कोई विरोध का भाव नहीं रखता था।

अनागत सन्तान के बारे में कमला के स्वप्न और कल्पना क्या थी यह मालूम न होने पर भी सुहृद डाक्टर जानता था कि राजीव कैसा विभोर है। और जानने के कारण ही एक चिकित्सक होने के नाते उसके डर का कोई ओर-छोर नहीं था। यदि राजीव सामान्य स्तर का व्यक्ति होता तो कोई बात नहीं थी लेकिन उसके मन की गति किन विचित्र रास्तों से गुजरा करती है यह दूसरा कोई न भी जाने पर सुहृद से छिपी न थी और यही कारण था उसकी शंका का। राजीव सरीखे उग्र कल्पना वाले आकस्मिक स्वप्न-भग के विपर्यय से टूट-बिखर जाते हैं! उनकी चिरन्तन चिन्तन-धारा के व्यतिक्रम से वे ही सबसे अधिक आघात पाते हैं। और उस आघात को सहने लायक शक्ति तब तक उनमें नहीं रह जाती।

राजीव की स्त्री कमला को जिस रात प्रसव-वेदना आरम्भ हुई उस दिन शाम से ही बाहर आंधी-पानी का जोर था।

एक लेडी डाक्टर, एक धाय और नर्स तो थी ही, सुहृद डाक्टर स्वयं शाम से राजीव के घर पर ही मौजूद था।

राजीव अपने शयन-कक्ष में वेकली और वेचैनी लिये चहलकदमी कर रहा था। समय जितना ही विलम्बित होता जाता, उसकी वेचैनी भी वढ़ती ही जाती।

वगल के कमरे में ही डाक्टर, धाय और नर्स कमला को लेकर व्यस्त हैं। रात की खामोशी बीच-बीच में कमला की हल्की कराह से पीड़ित हो रही है और वह अस्पष्ट-सा यातना-क्लिष्ट स्वर कानों में आते ही मानों राजीव की वेचैनी वढ़ जाती।

एक रात और एक दिन वेहद कष्ट भोगने के वाद दूसरी रात को वगल के कमरे से एक नवजात शिशु की रुलाई की तरह एक दवी हुई-सी गुंगुंआहट सुन पड़ी। राजीव चौंक पड़ा। यह एक दिन और एक रात लगता राजीव इस कमरे में ही चहलकदमी करता रहा है। दोनों कमरों के वीचवाले दरवाजे के सामने जाकर अधीर प्रतीक्षा में राजीव खड़ा हो गया। हाँ, नवजात शिशु के प्रथम स्वर जैसा ही लग रहा है यह अस्पष्ट गुंगुंआहट। लेकिन सुहृद कमरे से निकल क्यों नहीं रहा है? अभी तक वह क्या कर रहा है। क्या वह जानता नहीं है कि इस खवर के लिए राजीव कितना वेताव वैठा है।

फिर एक समय दरवाजा खुल गया और डाक्टर सुहृद खामोश राजीव के कमरे में दाखिल हुआ। वेताव राजीव ने मित्र के चेहरे की ओर घोर प्रत्याशा से ताका। लेकिन डाक्टर के सारे चेहरे पर मानों चिन्ता की एक काली छाया छाई हुई है। इस क्षण राजीव को लगा कि सुहृद कितना अधिक संजीदा वना हुआ है। उत्कंठित राजीव से एक भी वात न कर उसकी ओर सिर्फ एक वार ताककर डाक्टर धीरे-धीरे चलकर खुली खिड़की के सामने खामोश खड़ा हो गया। उत्कंठित राजीव मित्र को कमरे में प्रवेश करते देखकर ही आगे वढ़ गया था। और अधीर व्याकुल स्वर में उसने पुकारा, डाक्टर!

सुहृद ने कोई जवाव नहीं दिया, सिर्फ एक वार मित्र की ओर देखा। फिर राजीव ने पूछा, क्या खवर है डाक्टर?

धीमी आवाज में डाक्टर ने कहा, हालत अभी नाजुक है। एक इंजेक्शन दिया गया है ..अभी अभी सो रही हैं।

लेकिन डाक्टर, हुआ क्या ? लडका या लड़की ?

राजीव के उत्कंठा भरे प्रश्न से सुहृद ने मित्र की ओर एक गूंगी दृष्टि से देखा, कहने को होकर भी कोई शब्द उसके मुंह से न निकल सका। वह पहले जैसा ही राजीव के मुंह की ओर खामोश देखता रहा।

इससे राजीव की उत्कंठा और भी बढ़ गयी। अधीर आग्रह से उसने फिर डाक्टर से सवाल किया।

क्यो, तुम चुप क्यों हो डाक्टर ? बताओ न, लडकी है या लडका ?

आनाकानी कर इस बार मानों लार लील कर ही सुहृद बोल पड़ा—हाँ, लडका ही है...लड़का ही...। कहते-कहते सुहृद रुक गया।

तो। तो क्या ? जिन्दा है न। दबी आवाज मे राजीव ने इस बार पूछा। मारे उत्कंठा के मानो वह टूट-बिखर गया।

हाँ। ...जिन्दा ही है। सुहृद फिर अपनी बात खत्म किये बिना ही रुक गया।

क्षणभर में राजीव ने कुछ सोचा। इसके बाद ही डाक्टर के मुंह की ओर देखकर मानों अपने आप से ही वह बोला, मैं जाऊँ। एक बार उसे देख आऊँ। कहते हुए राजीव के दरवाजे की ओर बढ़ते ही अचानक सुहृद ने उसे हाथ से रोका, राजीव !

विस्मित राजीव ने मित्र के मुख की ओर देखकर पूछा, क्या मामला है डाक्टर ?

कुछ भी नहीं। मैं कह रहा था कि अभी रहने दो, जरा देर बाद—

नहीं। नहीं—तुम तो भाई, सभी कुछ जानते हो। ये कई महीने कितनी उम्मीदें लिये मैं इसी दिन का रास्ता जोह रहा था।

लेकिन मैं कह रहा था कि तुम्हारी बीवी अभी तक अस्वस्थ है...। डाक्टर सुहृद ने फिर मित्र की बेताबी पर बाधा डाली।

होने दो। मैं अपने बेटे को एक बार देखकर ही चला आऊंगा डाक्टर ! मैं उसे कतई परेशान नही करूंगा।

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक बार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुँदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है ?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुँह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर काँपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था। आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजीव

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके कांपते होंठों से निकले, यह क्या ! यह क्या !

और अगले ही क्षण दोनो हाथो से मुँह ढाँपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोप मानो उस समय एक प्रबल कम्पन से बवंडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दु ख, ये सारी अनुभूतियाँ मानो एक ही साथ उसके चेतन मन को चारो ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हों। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? वाकई देखा है या कही आँखो की भूल तो नही है। वह जाग रहा है या कहीं नीद में कोई दुःस्वप्न तो नही देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। *किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप, वीभत्स और भयकर हो* सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनो की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नही। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मासपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कही यह स्वप्न तो नही है। दृष्टि-भ्रम तो नही है। कही उसने गलत तो नही देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अधीर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमो से ही बेबोल राजीव कमरे मे आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोषों में मानों एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक बार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुँदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुँह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर काँपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजीव

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके कांपते होठों से निकले, *यह क्या ! यह क्या !*

और अगले ही क्षण दोनों हाथों से मुँह ढाँपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानों उस समय एक प्रबल कम्पन से ववंडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुःख, ये सारी अनुभूतियाँ मानो एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हों। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? *वाकई देखा है या कहीं आँखों की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं* नींद में कोई दुःस्वप्न तो नहीं देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप, वीभत्स और भयंकर हो सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नहीं। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मांसपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। दृष्टि-भ्रम तो नहीं है। कहीं उसने गलत तो नहीं देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अधीर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमों से ही बेबोल राजीव कमरे में आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचंड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोषों में मानों एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक बार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुँदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है ?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुँह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर काँपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था। आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजीव

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके कांपते होंठों से निकले, यह क्या! यह क्या!

और अगले ही क्षण दोनों हाथों से मुंह ढांपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानों उस समय एक प्रबल कम्पन से बवंडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुःख, ये सारी अनुभूतियां मानो एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हो। यह क्या हुआ? क्या देखा उसने? वाकई देखा है या कहीं आंखों की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं नींद में कोई दु:स्वप्न तो नहीं देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है? आदमी। किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप, वीभत्स और भयंकर हो सकता है! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नहीं। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक बीभत्स मांसपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ्! क्या देखा राजीव ने? क्या देखा उसने? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। दृष्टि-भ्रम तो नहीं है। कहीं उसने गलत तो नहीं देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अधीर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमों से ही बेबोल राजीव कमरे में आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचंड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोपों में मानों एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक बार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुंदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुंह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर कांपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था। आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजीव

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके कांपते होठों से निकले, यह क्या ! यह क्या !

और अगले ही क्षण दोनों हाथों से मुँह ढाँपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानों उस समय एक प्रबल कम्पन से बवंडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुःख, ये सारी अनुभूतियाँ मानों एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हों। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? वाकई देखा है या कहीं आँखों की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं नींद में कोई दु:स्वप्न तो नहीं देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप, वीभत्स और भयंकर हो सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नहीं। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मासंपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। दृष्टि-भ्रम तो नहीं है। कहीं उसने गलत तो नहीं देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अधीर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमों से ही बेबोल राजीव कमरे में आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचंड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोषों में मानो एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक बार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुँदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुँह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर काँपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था। आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजीव

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके कांपते होंठों से निकले, यह क्या ! *यह क्या !*

और अगले ही क्षण दोनों हाथों से मुंह ढांपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानो उस समय एक प्रबल कम्पन से बवंडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुःख, ये सारी अनुभूतियां मानो एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हों। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? वाकई देखा है या कहीं आंखों की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं नींद में कोई दुःस्वप्न तो नहीं देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप, वीभत्स और भयंकर हो सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नहीं। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मांसपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। दृष्टि-भ्रम तो नहीं है। कहीं उसने गलत तो नहीं देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अधीर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमों से ही बेबोल राजीव कमरे में आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचंड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोषों में मानो एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक बार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुँदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुंह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर काँपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था। आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजीव

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर और घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके कांपते होंठों से निकले, यह क्या ! यह क्या !

और अगले ही क्षण दोनों हाथों से मुँह ढाँपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानो उस समय एक प्रबल कम्पन से बवंडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुख, ये सारी अनुभूतियाँ मानो एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हों। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? वाकई देखा है या कहीं आँखों की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं नींद में कोई दुःस्वप्न तो नहीं देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप, वीभत्स और भयकर हो सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नहीं। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मासपिड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। दृष्टि-भ्रम तो नहीं है। कहीं उसने गलत तो नहीं देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अधीर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमों से ही बेबोल राजीव कमरे में आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचंड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोषों में मानो एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक बार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुँदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुँह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर काँपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था। आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजीव

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके काँपते होठों से निकले, यह क्या! यह क्या !

और अगले ही क्षण दोनों हाथों से मुँह ढाँपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानों उस समय एक प्रबल कम्पन से बवडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुःख, ये सारी अनुभूतियाँ मानो एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हों। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? वाकई देखा है या कहीं आँखों की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं नींद में कोई दुःस्वप्न तो नहीं देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप, वीभत्स और भयंकर हो सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नहीं। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मांसपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। दृष्टि-भ्रम तो नहीं है। कहीं उसने गलत तो नहीं देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अधीर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमों से ही बेबोल राजीव कमरे में आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचंड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोषों में मानों एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक बार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुंदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है ?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुँह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर काँपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था। आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजीव

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके कांपते होठों से निकले, यह क्या ! यह क्या !

और अगले ही क्षण दोनों हाथो से मुँह ढाँपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानो उस समय एक प्रबल कम्पन से बवंडर मचाये हुए हो।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुःख, ये सारी अनुभूतियाँ मानो एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हो। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? वाकई देखा है या कहीं आँखो की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं नींद मे कोई दु:स्वप्न तो नही देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप, वीभत्स और भयंकर हो सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नही। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मासपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नही है। दृष्टि-भ्रम तो नही है। कही उसने गलत तो नही देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अघोर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमो से ही बेबोल राजीव कमरे मे आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोषों में मानो एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक वार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुँदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है ?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुँह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर काँपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था। आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजी

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके कांपते होंठों से निकले, यह क्या ! यह क्या !

और अगले ही क्षण दोनों हाथों से मुँह ढाँपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानों उस समय एक प्रबल कम्पन से बवंडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुःख, ये सारी अनुभूतियाँ मानो एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हों। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? वाकई देखा है या कहीं आँखों की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं नींद में कोई दुःस्वप्न तो नहीं देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। *किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप,* वीभत्स और भयंकर हो सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नहीं। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मांसपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। दृष्टि-भ्रम तो नहीं है। कहीं उसने गलत तो नहीं देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अघोर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमों से ही बेबोल राजीव कमरे में आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचंड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोषों में मानो एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक वार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुंदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके काँपते होंठों से निकले, यह क्या ! यह क्या !

और अगले ही क्षण दोनों हाथों से मुँह ढाँपकर लड़खड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानो उस समय एक प्रबल कम्पन से बवंडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुःख, ये सारी अनुभूतियाँ मानो एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हों। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? वाकई देखा है या कहीं आँखों की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं नींद में कोई दुःस्वप्न तो नहीं देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुत्सित, वीभत्स और भयंकर हो सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नहीं। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मांसपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। दृष्टि-भ्रम तो नहीं है। कहीं उसने गलत तो नहीं देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अधीर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

ते कदमों से ही बेबोल राजीव कमरे में आकर एक लम्बी गत ्न के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

और अनुभूति में एक प्रचंड उथल-पुथल मचाकर उस समय स्नायुकोषों में मानो एक आग का दरिया बहने लगा। एक

राजीव फिर दरवाजे की ओर बढ़ा।

डाक्टर ने मानों आखिरी बार बाधा देने की कोशिश की, राजू सुनो। सुनो—

एक मिनट भाई...मैं सिर्फ एक बार देखकर ही चला आऊँगा। कहते हुए तब तक राजीव बगल के कमरे में दाखिल हो गया था।

एक विषाद भरी करुण दृष्टि से डाक्टर अपने मित्र के जाने के रास्ते की ओर देखता रहा। एक ठंडी साँस उसके सीने को झकझोरती बाहर निकल आयी।

स्वप्न भंग

कमरे के एक कोने में एक बिस्तर पर कमला लेटी हुई है, सीने तक कम्बल से ढका हुआ है। दवा के असर से सो रही है...आँखें मुँदी हुई।

बगल ही में नर्स खड़ी है, आँखों के इशारे राजीव ने कमला के बारे में पूछा। नर्स ने भी इशारे से जता दिया, फिलहाल डरने का कुछ नहीं है।

राजीव ने अब नवजात बेबी के बारे में पूछा—बेबी कहाँ है?

नर्स शुरू में राजीव के सवाल से कुछ हक्की-बक्की-सी होकर उसके मुँह की ओर देखने लगी। फिर आँखों के इशारे ही नजदीक की छोटी पलंग पर नवजात बेबी को दिखाकर वह एक बगल सरककर खड़ी हो गयी।

अधीर आग्रह से राजीव उस क्रेडेल की ओर काँपते पैरों से बढ़ गया।

एक छोटे-से कम्बल से बेबी का प्रायः पूरा चेहरा ही ढका हुआ था। आग्रह और उत्तेजना से हाथ से बेबी के चेहरे पर से कम्बल हटाते ही राजीव

अपने अनजाने ही एक आर्तनाद कर घोर घृणा से एकाएक दो कदम पीछे हट आया।

सिर्फ दो अस्फुट दर्द भरे शब्द उसके कांपते होठों से निकले, यह क्या ! यह क्या !

और अगले ही क्षण दोनों हाथों से मुंह ढांपकर लडखड़ाते हुए राजीव कमरे से बाहर निकल आया। सिर के भीतर सारे स्नायुकोष मानो उस समय एक प्रबल कम्पन से बवंडर मचाये हुए हों।

घृणा, निराशा, व्यर्थता, आक्रोश, लज्जा और दुःख, ये सारी अनुभूतियाँ मानों एक ही साथ उसके चेतन मन को चारों ओर से आघात पहुँचा कर उसे उसी दम पागल बना देना चाहती हों। यह क्या हुआ ? क्या देखा उसने ? वाकई देखा है या कहीं आँखों की भूल तो नहीं है। वह जाग रहा है या कहीं नींद में कोई दुःस्वप्न तो नहीं देख लिया है। यह भी क्या मुमकिन है ? आदमी। किसी आदमी का बच्चा क्या कभी इतना कुरूप, वीभत्स और भयंकर हो सकता है ! वह, वह राजीव की प्रथम सन्तान है। उसके इतने दिनों की कल्पना और इतने स्वप्नों का वास्तव रूप है। नहीं। नहीं—वह क्या आदमी का बच्चा है, एक वीभत्स मांसपिंड मात्र है। प्राणी-जन्म का एक निर्दय मखौल है। उफ् ! क्या देखा राजीव ने ? क्या देखा उसने ? साथ ही साथ उसे लगा कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। दृष्टि-भ्रम तो नहीं है। कहीं उसने गलत तो नहीं देखा।

वह रहा उसका बच्चा।

उसकी इतनी कल्पना, इतनी अधीर प्रत्याशा की यह प्राप्ति।

डगमगाते कदमों से ही बेबोल राजीव कमरे में आकर एक लम्बी रात और एक दिन के बाद मायूस की तरह धप्प से सामने के एक सोफे पर बैठ गया।

सारी चेतना और अनुभूति में एक प्रचंड उथल-पुथल मचाकर उस समय उसके मस्तिष्क के स्नायुकोषों में मानो एक आग का दरिया बहने लगा। एक

असह जलन की विपक्रिया उसके शरीर में खून के जर्रे-जर्रे में फेनिल हो उठी। राजीव समझ नहीं पाया कि यह दाह घृणा, विराग, निराशा या आक्रोश का है।

क्या करे, अब वह क्या करे ?

अचानक दोनों हाथों से उसने अपना मुँह ढाँप लिया, मानों सभी की नजरों से अपने को पूरा-पूरा छिपा लेना चाहता हो।

सुहृद मानों राजीव की प्रतीक्षा में ही अब तक जड़-सा कमरे में खड़ा था। हालाँकि राजीव उस क्षण कमने में डाक्टर की उपस्थिति भी भूल चुका था। कुर्सी पर बैठने के बाद राजीव ने जब दोनों हाथों से अपना मुँह ढाँप लिया तो धीर शान्त कदमों से सुहृद राजीव के सामने खामोश जाकर खड़ा हो गया।

मुँह ढाँपकर क्या राजीव रोने की कोशिश कर रहा है ?

नहीं। उसकी आँखों में आँसू नहीं, आग के तीव्र दाह से मानों सब भाप बन कर उड़ गये हैं। प्रत्याशा की निर्मम निर्दय व्यर्थता से दोनों आँखें रेगिस्तान जैसी खुश्क और रूखी हो गयी हैं।

सारे दिल में मरुस्थल की प्यास हाहाकार बन घुमड़ रही है।

धीरे-धीरे सुहृद राजीव के बहुत निकट आकर खड़ा हो गया।

फिर धीरे-धीरे स्नेह से राजीव के झुके हुए सिर पर एक हाथ रखकर ममत्व-भरे स्वर में पुकारा, राजीव !

राजीव की सारी देह एक बार मानों उस स्पर्श से काँप उठी, फिर पत्थर की तरह स्थिर हो गयी।

उसने कोई आहट नहीं दी। नहीं दे पा रहा है।—एक कीच सने रेंगते जीव की तरह थोड़ी देर पहले देखा वह वीभत्स लोथड़ा मानों उसकी आँखों के सामने जाग उठा। उफ् ! कितना भयानक है !

राजीव पागल जैसा ही फिर एक अजीब-सी पाशव आर्त चीख में फूट पड़ा अन्तर की अवरुद्ध वेदना से।

इसके बाद ही अचानक कुछ-कुछ पागल जैसा ही विह्वल दृष्टि से डाक्टर

का एक हाथ दबाकर दबे रुदन के स्वर में बोल पड़ा, ओह ! कितना भयानक ! कितना भयानक ! सच ! सच बताओ डाक्टर, क्या सचमुच कमला ने उस घिनावने भद्दे लोथड़े का जन्म दिया है ! मैं—मैंने क्या देखा ? सचमुच क्या मैं—

कहते हुए राजीव फिर दोनों हाथों से अपना मुंह ढाँपकर काँप उठा। डाक्टर को बिलकुल इसी का भय था। इसलिए बिना कुछ बोले वह राजीव के कन्धे पर हाथ रखकर उसे खामोशी से तसल्ली देने की कोशिश करने लगा।

राजीव फिर अपने आप से ही बोल पडा, नही। नही—अब सोचा नही जाता। वाकई सुहृद, मुझसे अब सोचा नही जाता। वह। उसी के लिए क्या इस लम्बे अरसे तक—। कहते-कहते राजीव फिर ठहर गया। मौत से अधिक यन्त्रणा से राजीव का सारा शरीर मानो दो-एक बार काँप उठा। उसे लगने लगा आज तक इतनी बड़ी हार शायद उसकी नहीं हुई। अस्फुट दर्द भरे स्वर में फिर वह बोला, सोचा नहीं जाता। सचमुच सुहृद, मुझसे अब बिलकुल सोचा नही जाता। वह। उसी के लिए ये कई महीने रातदिन सपना देखता रहा हूँ।...

शुरू मे डाक्टर की समझ मे नहीं आया कि किस तरह राजीव को तसल्ली दे। इसीलिए कुछ देर वह भी बुत-सा बना राजीव के बगल मे खड़ा रहा।

राजीव के मानसिक द्वन्द्व को वह समझता है। कुछ समय पश्चात् स्नेह-कोमल स्वर में वह बोला, क्या करोगे बताओ भाई। जब जन्मा ही है—

जन्मा है ! भूतग्रस्त आदमी जैसा ही उसने सुहृद की ओर मुँह उठाकर देखा। असह विराग से मानों उसने अपने को एक झटका दिया और बोल पड़ा, नहीं, नहीं। —जन्मा नही। कोई नही जन्मा।

राजीव।

राजीव ने मित्र की पुकार पर कोई आहट नहीं दी। मायूस-सा बैठा रहा। सुहृद से भी कुछ बोला नहीं गया। स्तब्ध क्षण बीतते रहे।

आधीरात की खामोशी को दीवार पर टँगी खूबसूरत-सी घड़ी के पेंडुलम की एकरस टिक-टिक टूक-टूक कर रही है।

समय समुद्र में मानों एक-एक बुल्ले उभर कर फिर उसी क्षण विला जा रहे हैं।

बगल का कमरा मानों पत्थर-सा जमा खड़ा है।

एकाएक फिर एक समय राजीव उठकर खड़ा हो गया। उतावला-सा कमरे के एक छोर से दूसरे छोर तक चहलकदमी करने लगा।

राजीव !

राजीव ने सुहृद की पुकार पर घूम कर देखा। आँखें लाल सुर्ख। दो रात की जगार का थकान, व्यर्थता का एक भयानक आक्रोश खून में उबल पड़ना चाहता है।

राजीव मित्र की ओर बढ़ आया और दबी जबान में बोला, डाक्टर !

बताओ।

तुम।—एकाएक दोनों हाथों से राजीव सुहृद का एक हाथ पकड़ लिया। डक्टर ने महसूस किया कि उसके दोनों हाथ काँप रहे हैं।

हाँ तुम—सिर्फ तुम्हीं मुझे इस विपत्ति, इस अपमान और इस लज्जा से बचा सकते हो भाई। बोलो भाई, बोलो, मेरी मदद करोगे ?

राजीव।

हाँ डाक्टर—उसे, उसे मेरी आँखों के सामने से हटा ले जाओ डाक्टर !

राजीव ! सुहृद मानों सिहर उठा।

हाँ, हाँ, तुम ही अगर चाहो तो मुझे बचा सकते हो डाक्टर ! प्लीज़—

क्या पागल-सा बक रहे हो राजीव !

पागल ! अचानक राजीव बड़े ही अजीब ढंग से मानों हँस पड़ा। पागल। नहीं, अभी तक मैं पागल नहीं हुआ। लेकिन वह अगर मेरी आँखों के सामने रहा तो बेशक मैं पागल हो जाऊँगा। जैसे भी हो उसे तुम अभी खत्म कर डालो।

छीः छीः। क्या कह रहे हो तुम राजीव ! भला क्या तुम उसके बाप नहीं हो ? क्या वह तुम्हारा बेटा नहीं है ?

बेटा। हाँ—बेटा ही है। कितनी ही आशाओं और अरमानों का। कहते-

कहते अचानक राजीव किमोनो की जेब में हाथ डालकर मुट्ठी भर चमचमाती गिन्नियाँ निकाल कर हाथ को डाक्टर के सामने पसारते हुए कहा, यह देखा, मेरी औलाद। उसी की आवभगत के लिए इनको लेकर प्रत्याशा में प्रतीक्षा कर रहा था। कितने ही तूफान, कितनी ही आँधियों को पार कर मैं आया हूँ। इसीलिए तो चाहा था कि सारी निराशा, सारी बाधाएँ, सारे दुःख और सघर्ष को लाँघकर बिलकुल जन्म के क्षण से उसे सफलता मे प्रतिष्ठित कर दूँ। लेकिन जब नही हो सका, वह अधिकार लेकर जब उसने जन्म नहीं लिया, तो उसे खिसक जाना पड़ेगा ही। और सिर्फ अपने ही लिए नही, उसके अपने कल्याण के लिए मैं उसे अकुर मे ही खत्म कर देना चाहता हूँ।

इस बार धीरे-धीरे और अधिक सयत स्वर में सुहृद ने कहा, पागलपन मत करो राजीव ! देखने मे बदसूरत हुआ है तो—

बदसूरत ! उसे तुम बदसूरत कह रहो हो डाक्टर ! भयानकता की भी शायद एक सीमा होती है लेकिन वह तो शायद उसे भी पार कर गया है। नही। नही—उसे मेरी आँखो के सामने से कैसे भी हो हटा देना पड़ेगा ही।

गहरी सहानुभूति और स्नेह से मानो सुहृद का स्वर नम हो आया। उसने कहा, राजीव। मैं तुम्हारे मन की दशा को महसूस कर रहा हूं लेकिन करोगे भी क्या भाई। भाग्य पर तो किसी का वश नही चलता।

जवाब में राजीव विकृत स्वर मे बोल पडा, महसूस कर रहे हो ? नही डाक्टर, तुम महसूस नही कर सके, तुम महसूस नही कर सकते। और सिर्फ तुम ही क्यो, कोई भी महसूस नही कर सकेगा।

क्यो नही महसूस कर पाऊँगा। लेकिन किया क्या जाय बताओ, भाग्य पर तो मनुष्य का कोई वश नही चलता, भाग्य अगर—

मुँह उठाकर राजीव ने अपने मित्र की ओर देखा।

फिर काँपते हुए उत्तेजित स्वर मे बोल पडा, क्या कहा ? भाग्य ! ...

हाँ, यह बता रहा था कि—

सुहृद की बात खत्म न हो सकी कि मानो एक प्रचड थपेडे से उसे रोक कर क्रुद्ध दमित स्वर में राजीव बोल पड़ा, भाग्य ! कायर और कमजोर ही

भाग्य की दुहाई देकर अपनी व्यर्थता और नाकामयाबी के लिए तसल्ली पाना चाहते हैं डाक्टर। लेकिन अपने सपनों को मैं सदा सफल बनाता आया हूँ। मैं भाग्यवादी कायर नहीं हूँ। —

सपने हमेशा सपने ही होते हैं राजीव। इसके अलावा—

नहीं-नहीं—कहा नहीं कि मुझे दूसरों की बातों की कोई जरूरत नहीं है। इसीलिए मैं कह रहा था डाक्टर, मेरे आज के इस क्षोभ को कोई भी महसूस नहीं कर सकता। सिर्फ मैं ही नहीं, क्या कमला ने भी उस अनागत सन्तान के बारे में सपने नहीं देखे हैं ? इसलिए कह रहा था, एक बार सोच-कर देखो, जब उसका होश लौट आयेगा, उस समय वीभत्स मांसपिंड को अगर वह देख ले। कहते हुए राजीव फिर मानों आप ही आप सिहर उठा। दृढ़ स्वर में बोला, सुहृद ! तुमसे मिन्नत करता हूँ, वह होश में आने से पहले ही जैसे भी हो उसे—

बार-बार राजीव के इस प्रकार के अनुरोध से अब की बार सुहृद सच-मुच बड़ा दुखी हुआ। झुँझलाते स्वर में बोल पड़ा, तुम क्या बौरा गये हो राजीव ! यह सब अंट-शंट क्या बक रहे हो तुम ? तुम्हारे औरस से जन्म लिया है इस सन्तान ने।

औरस से ? हाँ, बिल्कुल इसी वजह से मैं उसे बरदाश्त नहीं कर पा रहा हूँ। उसने केवल मुझ ही को नहीं ठगा, जन्म के साथ-साथ अपने आप को भी ठग चुका है।

लेकिन कुछ भी कहो, अपने जन्म के लिए वह कोई खुद जिम्मेवार नहीं है।

जिम्मेवार नहीं ? बेशक जिम्मेवार है। और इसीलिए उसे मेरी आँखों के सामने से हट जाना पड़ेगा।

राजीव !

हाँ। गुच्छेभर फूलों का रूप लेकर उसने जन्म क्यों नहीं लिया ?

यह उसका दुर्भाग्य बेशक है। लेकिन सुनो राजीव, आज तुम्हें यह सुनना भला भी न लगे फिर भी मैं तुम्हें सच्ची ही बात बताऊँगा कि उसके उस चेहरे के लिए अगर कोई सचमुच जिम्मेवार है तो वह तुम हो।

जानता हूँ।

हाँ तुम। तुम्हारी विकृत व्यक्ति-स्वाधीनता, तुम्हारी अस्वाभाविक उद्भट कल्पनाएँ, तुम्हारे निर्ज्ञान मन की विकृत अनुभूति और कामना ही तुम्हारे औरसजात इस निरपराध बच्चे के चेहरे पर प्रतिबिम्बित हुई है। दोष उसका नहीं, तुम्हारा है। उसकी माँ के दावे और उसकी सत्त्वा को तुमने अपनी उद्भट कल्पना और विकृत व्यक्तित्व से दबा दिया था—यह उसी का परिणाम है, उसी की प्रतिक्रिया है।

क्या कह रहे हो तुम डाक्टर?

ठीक ही बता रहा हूँ। सोचकर देखो, कितने ही दिन मैं तुमको चेतावनी देता रहा हूँ।

लेकिन मैं तो—

हाँ, तुम अपने निर्ज्ञान मन का एक पहलू ही सोचते रहे हो, उसका कोई दूसरा पहलू भी हो सकता है यह तुम सोच नहीं सके, सोचना चाहा ही नहीं। तुम्हारी सृष्टि ने आज तुम्हें धोखा दिया है इसलिए तुम अपना होश गँवाये दे रहे हो।

नहीं। नहीं। तुम कुछ भी कहो, उसे मैं स्वीकार ही नहीं कर सकूँगा। किसी कदर नहीं।

राजीव! सुनो। मेरी बात सुनो।...

तुम्हारी बात मान लूँ तो मुझे जो नुकसान उठाना पड़ेगा—उसका मुआवजा दे सकोगे। सुहृद्। तुम नहीं समझोगे, नहीं समझोगे।...

एक घंटा और बीत गया।

सुहृद ने कई तरह से राजीव को समझाना चाहा पर राजीव मानों तुला हुआ है।

वह बिल्कुल स्थिरप्रतिज्ञ है।

रात और बढ़ने लगी।

घड़ी का दोलक वैसा ही एकरस टिक-टिक शब्द करता चला जा रहा है।

राजीव के मस्तिष्क के कोप-कोष में आँधी का तांडव जारी है।

कोई नहीं समझेगा। कोई भी समझ नहीं सकेगा उसका असली दर्द कहाँ है, उसे किस बात की शर्म है। हकीकत में उसकी हार कहाँ है।

होश में आने के समय से जो निर्दय आलोचना और श्लेष उसकी बद-सूरती के बारे में कभी खुले में या कभी आड़ से उसे दिन ब दिन घायल करते रहे हैं, उसके पौरुष, उसके व्यक्तित्व और उसके अजेय आत्माभिमान को निर्मम आघातों से चूर-चूर करते रहे हैं—और जिस घाव से उसके दिल में बूंद-बूंद असह ग्लानि की लज्जा रिसती रही है—उस लज्जा को वह आज सब के सामने कैसे स्वीकार ले।

उसी ग्लानि और लज्जा की चोट से ही न उसने अपने दिल को अपने ही आत्मज के प्रति बदले की भावना से भर दिया है!

डाक्टर को वह कैसे समझावे कि कितनी बड़ी निराशा और कितनी बड़ी लज्जा से आज यह निर्मम चोट वह अपने-आप पर ही उन्मादी-सा करने जा रहा है।

उससे बेहतर क्या यह नहीं होगा कि कमला होश में आने पर यह जान ले कि उसने मृत सन्तान का ही जन्म दिया था।

हाँ, इस दुःस्वप्न को जिस तरह से भी हो अपने भविष्य जीवन से मिटा ही देना पड़ेगा।

राजीव का सारा दिल फिर से निर्मम और कठोर बन गया।

लम्बा गठा हुआ शरीर फौलाद-सा तनकर सीधा हो गया।

निर्मम शपथ से आँखों की पुतलियाँ मानों वहशी जानवरों जैसी धधकने लगीं।

आज उसने मनुष्य की आदिम प्रकृति को कोंच-कोंचकर उभारा है। आदिम पाशव रिपु को।

राजीव उठकर खड़ा हो गया।

बगल के कमरे की ओर वह बढ़ चला जहाँ शायद वह भयानक दुःस्वप्न आराम से सो रहा है।

सुहृद ने चौंककर राजीव की ओर देखा।

किसी अजाने डर से उसका दिल धडक उठा—उस क्षण राजीव की ओर देखकर।

किसी कदर वह पुकार सका, राजीव !

आखिरी पंजा मारने से पूर्व कोंचा हुआ शेर जिस प्रकार थोड़ी-सी आहट पर ही गर्दन टेढी कर ताकता है राजीव ने भी सुहृद की ओर उसी ढग से देखा।

कहाँ जा रहे हो ?

बगल के कमरे में।

सुहृद आगे बढ आया। हाथ फैलाकर दरवाजा रोककर वह खड़ा हो गया।

फौलाद जैसे सख्त हाथो से राजीव ने बाधा देने वाले सुहृद के फैले हुए हाथ पकडे। वज्रकठोर स्वर मे बोला, हाथ हटा लो डाक्टर !

राजीव !

हाथ हटा लो डाक्टर ! रास्ता छोडो।

तुम। तो तुम सचमुच — बात मानो पूरी नही कर सका सुहृद।

हाँ। आई हैव डिसाइडेड वन्स फॉर ऑल ! जब तुमसे नही होगा तो मैं अपने ही हाथों अपनी लज्जा को—

राजीव !

निर्मम निःशब्द हँसी से राजीव के चेहरे की पेशियाँ भयकर बन गयीं। शान्त स्वर में बोला, हाँ, तुम हटो डाक्टर ! रास्ता छोडो।

तो। तो तुम उसे किसी भी हालत मे स्वीकारोगे नही ?

फिर वही निःशब्द ·निर्मम मुस्कान राजीव के होठों के छोर पर खेल गयी। उसने कोई जवाब नही दिया।

अच्छी बात है। हटो। जो कुछ करने का है मुझ ही को करने दो।

तुम।

हाँ, जाओ। तुम इस कमरे से चले जाओ।

अच्छी बात है। एक घंटे की मोहलत मैं तुम्हे दिये जाता हूँ। राजीव कमरे से निकल गया।

स्वामी जी

बाहर उस समय आँधी-तूफान का तांडव जारी था। कमरे के दरवाजे-खिड़कियों पर लगे शीशे के पल्ले हवा के थपेड़े से काँप रहे थे।

कुछ देर तक मायूस सा सुहृद स्तब्ध अकेला उस कमरे में खड़ा रहा।

अचानक एक बात सुहृद को याद आ गयी।

सुहृद ने देर नहीं की। दरवाजा ठेलकर बगल के कमरे में गया। कमला के बिस्तर की ओर बढ़ गया। दवा के असर से कमला गहरी नींद सो रही है।

फिर आगे बढ़कर उसने नवजात बच्चे को देखा। वह भी सो रहा है।

धाई को पहले ही बिदा कर दिया गया था।

नर्स के साथ दबी आवाज में डाक्टर ने कुछ बातें कीं। फिर आगे बढ़कर क्रैडेल से सोते नवजात बच्चे को अच्छी तरह कम्बल से लपेटकर सावधानी से अपने सीने में ले लिया।

नर्स ने कमरे की रोशनी बुझा दी।

सुहृद कमरे से निकल गया।

सारा मकान मानों नींद की खुमारी में सुन्न खड़ा है। कहीं कोई आवाज नहीं। जीने से उतरकर सुहृद सीधे बाहर पोर्टिको के सामने आकर खड़ा हो गया।

पोर्टिको के सामने उस समय भी उसकी छोटी-सी टू-सीटर गाड़ी खड़ी

थी। गाड़ी का दरवाजा चाभी से खोलकर पहले नवजात शिशु को पीछे की सीट पर कम्बल ओढ़ाकर लिटा दिया, फिर दरवाजा बन्द कर सामने की सीट पर आकर बैठा और गाड़ी स्टार्ट कर दी।

सांय सांय शब्द करती हवा झपट्टा मारे जा रही है।

लगातार बारिश हो रही है।

गाड़ी चलाकर सुहृद बड़ी सडक पर आ गया।

दुमजिले की खिड़की से उस समय आँखों की एक जोड़ी बाहर की ओर टकटकी लगाये थी।

क्षणभर की बिजली की दमक मे दिखाई पडा, छोटी-सी एक गाडी आंधी-पानी में रात के घने अँधेरे मे मानो बिला गयी।

एक ठंडी सांस को दबाता हुआ राजीव खिड़की के पास से हट आया। कमरे में एक खूबसूरत डोम मे हरी बत्ती जल रही है।

कमरे भर में हल्की-सी रोशनी और छाया।

जेब से सोने की सिगरेट-केस निकालकर राजीव ने एक सिगरेट सुलगायी। फिर एक सोफे पर आकर बैठ गया।

आह!

राजीव ने आँखें मूंद ली। शरीर के जोड़-जोड मानों ढीले पड़ गये हैं। पपोटे मानों सीसे के बने हों, ऐसे भारी होकर नीचे गिर रहे हैं।

दो-दो रातें उसने एक बार के लिए भी पलकें झपकायी नहीं।

कितनी ही उत्कंठा में पिछले अड़तालीस घंटे उसके बीते हैं।

खैर! प्रतीक्षा का अन्त हुआ।

हाथ की जलती सिगरेट बगल की तिपाई पर रखे चाँदी के ऐशट्रे पर रखकर राजीव ने आँखें बन्द कर ली।

नींद।

विस्मृतिदायिनी निद्रा।

बैरकपुर पीछे छोड़कर जरा-सा आगे बिलकुल गंगा के तट पर स्वामी विरजानन्द महाराज का स्वर्गाश्रम है। विरजानन्द ने दुनिया भर के अभागे अनाथों को लेकर यह आश्रम बनाया है।

स्वामी जी का असल नाम है मन्मथ घोषाल।

एक ही दिन में चार घंटे के व्यवधान में जब मन्मथ की बीवी और दो पुत्र हैजे से मर गये तो मन्मथ मानों शोक से दिग्भ्रान्त से हो गये। क्षणभर में उन्हें लगा, सब कुछ झूठा है, सब धोखा है।

केन्द्रीय सरकारी दफ्तर में मोटी तनख्वाह की नौकरी कर रहे थे मन्मथ, उनसे एक दिन भी आगे नौकरी न की जा सकी। नौकरी छोड़कर मन्मथ उद्भ्रान्त-से कुछ दिनों तक देश-देश भटकते रहे। फिर अन्त में एक संन्यासी से उनकी भेंट हुई और उन्हीं के परामर्श से गंगा के किनारे आकर इस निर्जन स्थान पर आश्रम का निर्माण कर अनाथ बेबस बालकों को लेकर दिन बिताने लगे। साल भर पहले मन्मथ से—अर्थात् वर्तमान विरजानन्द महाराज से सुहृद की भेंट हुई थी।

वही भेंट धीरे-धीरे घनिष्ठता में बदल गयी। भेंट के बाद अक्सर सुहृद आश्रम में आता था। स्वामी जी के साथ विभिन्न विषयों पर बातचीत करता था।

रात समाप्त हो रही है।

महाराज अपने शयन-कक्ष में बैठे वीणा पर सुर साधने में मगन थे। आश्रम के और सभी लोग अपने-अपने कमरों में गहरी नींद में अभी भी सुप्त थे।

स्वामी जी को देखने से लगेगा कि उनकी उम्र पचास के नीचे ही है। लेकिन बालों में अब भी कोई सफेदी खास दिखाई नहीं पड़ती।

लम्बे-लम्बे बाल कंधों तक उतर आये हैं। मुखड़े पर और आँखों में एक अनोखी शान्त स्वर्गीय ज्योति है।

गेरू रंग की एक धोती पहने हुए और बदन पर उसी रंग की एक फतूही। गोरे-चिकने पुरुष के शरीर पर गेरू वस्त्र उनके व्यक्तित्व को और भी प्रखर बना रहे थे।

ऐसे ही समय बाहर के कमरे की सांकेतिक घंटी हल्की-सी टन-टन आवाज कर उठी।

रात खत्म होने की है, इतना मुँह-अँधेरे कौन आ गया? आश्रम में कोई भी अभी नींद से जागा नहीं है। दरवाजा भी कौन खोलेगा? महाराज स्वयं ही वीणा को फर्श पर एक ओर उतार कर खड़े हो गये। लम्बा बरामदा तय कर सदर में आ दरवाजा खोलते ही देखा सामने डाक्टर सुहृद खड़े हैं और सीने के पास कम्बल में लिपटा कुछ जतन से थामे हैं।

विस्मित महाराज ने पूछा, कौन? डाक्टर! इस वक्त?

मुस्कराकर डाक्टर ने कहा, किसी विशेष विपत्ति में पड़ने के कारण ही इस बेवक्त आपकी शरण में आना पड़ा महाराज!

विपत्ति का मामला क्या है डाक्टर?

सीने से चिपकाये हुए नवजात लोथड़े जैसे शिशु की ओर संकेत करते हुए सुहृद ने कहा, इस अभागे बच्चे को अपने चरणों में स्थान देना होगा महाराज!

महाराज मानों तैयार ही थे। दूसरा कोई प्रश्न किये बिना ही परम स्नेह से दोनों हाथ पसार कर कहा, लाओ, दो—

सुहृद ने सावधानी से शिशु को महाराज के हाथों में दे दिया।

शिशु को सीने में लेकर महाराज बोले, आओ, आओ, डाक्टर, मेरे कमरे में आओ।

महाराज शिशु को गोद में लिये आगे चले। सुहृद डाक्टर उनके पीछे-पीछे [illegible]

दोनों आकर महाराज के कमरे में प्रवेश किये।

कमरे की रोशनी में केवल एक बार बच्चे की विकृत शक्ल की ओर देखकर महाराज ने सुहृद की ओर देखा, आश्चर्य है। वाकई सृष्टि का कैसा अद्‌भुत रहस्य है डाक्टर !

जी। और इसी कारण, उसके इस विकृत रूप के कारण ही उसके पिता ने उसे अपनी सन्तान के रूप में स्वीकृति नहीं दी। सुहृद ने मद्धिम स्वर में कहा।

विस्मय से महाराज स्तम्भित रह गये।

चन्द लमहे उनके गले से कोई आवाज नहीं निकली।

इसके बाद फिर बोले, क्या कहते हो डाक्टर, बाप—

जी, बाप। उसके उस बीभत्स रूप ने ही आज अपने बाप के स्नेह से उसे वंचित कर दिया—अभागा !

विरजानन्द ने धीमे स्वर में कहा, अभागा वह नहीं है डाक्टर। अभागा वह है जिसने केवल बाहरी विकृत रूप देखकर उसके जन्म तक को अस्वीकार कर दिया है—लेकिन उसकी माँ, माँ भी क्या उसे—

उसकी माँ ? क्या कहने को होकर भी डाक्टर चुप हो गया।

स्वामी जी ने कहा, हाँ, उसकी माँ ?

आज मैं चलता हूँ महाराज। फिर एक दिन आकर मैं आपसे सारी बात बताऊँगा। उसका परिचय भी दूँगा। सुहृद ने झुककर महाराज की पदधूलि ली।

ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे। अच्छी बात, तुम अब जा सकते हो डाक्टर।

सुहृद डाक्टर कमरे से निकल गया।

महाराज ने फिर एक बार बच्चे को देखा, फिर कमरे से निकलकर आश्रम के अन्दर की ओर जाकर एक बन्द दरवाजे के सामने पुकारा, लक्ष्मी। लछमी बाई—

कमरे के भीतर से साथ ही साथ धीमी आवाज आयी—आयी महाराज!

और थोड़ी ही देर में दरवाजा खोलकर एक अधेड़ उम्र की बिहारी महिला सामने आकर खड़ी हो गयी !

मुझे बुला रहे थे महाराज ?

हां। क्या कुछ काम कर रही थी ?

जी नहीं महाराज, आपकी उपासना वाले कमरे की जरा सफाई कर रही थी।

अच्छा, इधर आओ, यह देखो—आओ, नजदीक आओ, फिर एक नया आगन्तुक आ गया।

लक्ष्मी कौतूहल से आगे बढ़ आयी। लेकिन स्वामी जी की गोद में कम्बल में लिपटे उस बीभत्स मानव-शिशु की ओर नजर पड़ते ही मानों वह अपने अनजाने ही सिहर उठी।

महाराज ने कहा, अगर इसे देखकर तुम्हारे मन में घृणा होती है तो रहने दो लक्ष्मी। मैं इसके पालन-पोषण की कोई दूसरी व्यवस्था ही किये लेता हूँ।

लक्ष्मी को अपने भ्रम का बोध हुआ और वह पछतावे के स्वर में बोल पड़ी, मुझे क्षमा कर दें महाराज।

नहीं, नहीं, तुम तो मुझे मानती हो लक्ष्मी। किसी की भी मर्जी के खिलाफ कभी मैंने—

मुझे क्षमा कर दें महाराज ! उसे दे दीजिए मुझे। मैं ही उसे पालूँगी। लक्ष्मी ने हाथ बढ़ाकर महाराज की गोद से उस अभागे को अपने सीने से ले लिया। फिर बोली, आशीर्वाद करें महाराज कि मैं इसे जीवित रख सकूँ।

आशीर्वाद। यह जान लो लक्ष्मी कि इस आश्रम में जितने बच्चे पाले जा रहे हैं उन सबसे ज्यादा अभागा यह है। उनके मां-बाप मर चुके हैं। लेकिन इसके मां-बाप रह कर भी नहीं हैं। उन लोगों ने इसे त्याग दिया है।

हूँय !

हां, इसीलिए मैं कह रहा था कि इसे अगर अपने मातृत्व से तुम जीवित रख सकोगी तो उन्हीं का आशीर्वाद तुम्हें मिलेगा जिनके आशीष से बढ़कर दुनिया में कोई दूसरी चीज नहीं है।

दिन व दिन

लछमी वाई ने जन्म क्षण से ही पितृ-मातृ-परित्यक्त अभागे उस विकृत मांसपिंड सरीखे नवजात वच्चे को गोद में ले लिया।

और उसी के स्नेह से और गोद में वह अभागा मानव वड़ा होने लगा। वह मरा नहीं, जीवित ही रहा।

धीरे-धीरे वह शिशु थोड़ा-थोड़ा करके दिन व दिन वड़ा होने लगा। लेकिन जितना ही उसका शरीर वढ़ने लगा दिन व दिन उसका चेहरा उतना ही अधिक वीभत्स वनने लगा। उसकी ओर देखने पर भी वदन में झुरझुरी आ जाती।

कोई मानव-शिशु इतना वदसूरत और इतना वीभत्स हो सकता यह मानों सचमुच कल्पना से परे की वात हो।

आश्रम में कोई उसे अच्छी निगाहों से नहीं देख पाता और न वरदाश्त कर पाता केवल लछमी और स्वामी जी को छोड़ कर।

विरजानन्द ने उसका नाम रखा अरुणांशु। नवोदित सूर्य-किरण। उसे वह अंशु कहकर पुकारते।

शुरू-शुरू में अरुणांशु के पालन-पोषण में लछमी को वहुत सारी असुविधाओं का सामना करना पड़ता था।

पहली वात तो यह कि दुर्भाग्य से ऐसा अनोखापन लेकर कोई इससे पूर्व आश्रम में आया नहीं था, फिर इतनी कम उम्र में भी कोई आश्रम में नहीं आया था।

ज्यादातर ही दो-तीन-ढाई, चार-पाँच-छह वर्ष के वच्चे या वालक-वालिकाएँ ही आश्रम में आते रहे हैं, इसलिए दूसरों के मामलों में लछमी को लालन-पालन या देखभाल की जो जिम्मेवारी लेनी पड़ी है उससे कहीं ज्यादा जिम्मेवारी अरुणांशु के मामले में आ पड़ी है।

और न जाने क्यों दिन जितने ही वीतते गये उस अभागे वच्चे के लिए लछमी की ममता भी मानों वढ़ती गयी।

हाय ! यह अभागा मानव कहलाने के भी योग्य नहीं ।

लेकिन अरुणायु जितना ही बड़ा होता गया, लक्ष्मी की आँखों में एक बात साफ हो गयी । यह बालक मानो संसार के अन्य दस बालकों जैसा नहीं है ।

दैहिक वैचित्र के साथ-साथ ईश्वर ने मानो उसके दिल को भी एक विचित्र धातु से बनाया था ।

दूसरे बालकों की तरह कारण-अकारण उसमें कोई चंचलता और चपलता नहीं है ।

काफी कुछ गंभीर-सा, अद्‌भुत शान्त-सा ।

देखने में बदसूरत जानवर जैसा, आश्रम के दूसरे समवयस्क या ज्यादा अवस्था वाले लड़के मौका पाते ही उस पर अत्याचार करते थे । कितनी ही बार दस-बारह लड़कों ने घेर कर उसे मारा-पीटा है लेकिन लक्ष्मी ने उसे एक बूँद आँसू गिराते या जरा-सी शिकायत करते कभी नहीं सुना ।

आश्रम के केवल दो व्यक्तियों से ही अरुणायु प्यार करता था—एक थी उसकी लक्ष्मी मायी और दूसरे थे आश्रम के अध्यक्ष महाराज विरजानन्द । और दो ही वस्तुओं के प्रति उसका आकर्षण था—एक तो महाराज के सामने बैठकर उनका वीणा बजाना सुनना । दूसरा, बीच-बीच में अकेला चुपचाप गंगा के किनारे जाकर बैठ रहना । और एक बात भी अरुणायु में लक्ष्मी ने गौर किया है । सहसा ही मानो उसके दिमाग में खून सवार हो जाता था । और उस समय वह आश्रम के पीछे महाराज की जो फुलवाड़ी है उसमें जाकर निर्दय हाथों से पौधों को उखाड़ डालता था या फूलों को नोचकर निष्ठुर हाथों से उनको पीस डालता था ।

महाराज ने भी यह लक्ष्य किया था । क्योंकि उस पर सदा उनकी तेज निगाह थी । किन्तु उस वक्त उसे वे डाँटते नहीं थे बल्कि प्यार से पुचकार कर अपने कमरे में ले जाते थे और तरह-तरह की कहानियों के द्वारा उसके दुर्दम मन को शान्त करते थे ।

इसी प्रकार से अरुणांशु के जीवन के दस वर्ष बीत गये। ऐसे ही समय सिर्फ दो दिन के बुखार में लछमी बाई मर गयी।

लछमी की मृत्यु पर आश्रम के सभी बालक रोये लेकिन किसी ने अरुणांशु को रोते नहीं देखा। पत्थर की मूर्ति-सा बना वह अपनी पालिका जननी लछमी के शव के पास बैठा रहा।

तीन दिन तक उसने एक दाना भी नहीं छुआ।

महाराज ने अब और भी सघनता से अंशु को अपने पास खींच लिया।

और कहने को उसी दिन से अरुणांशु मानों छाया की तरह ही महाराज के पीछे-पीछे फिरने लगा।

महाराज ने उसे ककहरा सिखाया, और धीरे-धीरे पाठ भी पढ़ाने लगे। देखा गया कि जानवर-सा भयानक होने से क्या, उसकी मेधाशक्ति बहुत विस्मयकारी है। सब-कुछ जानने और सीखने के लिए इस बालक में गजब का आग्रह और धीरज है।

सवेरे शाम महाराज उसे पढ़ाते हैं और महाराज जब दूसरे कामों में व्यस्त रहते हैं, वह साथ ही साथ परछाईं-सा उन बलिष्ठ सुदर्शन महाराज के बगल में घूमता रहता। महाराज भी मानों उसी में मशगूल हो गये थे।

एक दिन महाराज के बचपन के एक मित्र ने आश्रम में आ महाराज के बगल में उसे देखकर पूछा, ऐसे अद्‌भुत जीव कहाँ से जुटा लाये मन्मथ ?

महाराज ने कहा, जिन्होंने तुमको और मुझको सिरजा है इसको भी उन्होंने सिरज़ा है भाई।

तुम्हारा ख्याल है कि तुम इसे भी इन्सान बना लोगे ?

बेशक ! बाहरी चेहरा ही मनुष्य का एकमात्र परिचय नहीं होता अविनाश। इसका बाहरी चेहरा देखकर ही तुम आतंकित हो रहे हो लेकिन शायद तुम्हें यह मालूम नहीं कि बहुत से सुदर्शन शरीर के भीतर इससे कितना ही गुना भयानक और भद्दा दिल छिपा हुआ है। वे भी अगर इन्सान के नाम से चलते-फिरते हैं तो केवल बाहर के भद्दे चेहरे के लिए यह मानव-समाज में क्यों खारिज हो जायेगा ?

मित्र आगे कुछ भी न बोल सके।

सारे आश्रम भर में यानी अपने परिचय-जगत के अन्दर केवल महाराज ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जो उसके वास्तव में सगे हैं, यह बालक अरुणांशु भी समझ गया था।

क्योंकि होश में आने के बाद से उसने गौर किया है कि आश्रम के बाकी सब लोग उसे बुरी निगाह से देखते हैं। तनिक भी उसे बरदाश्त नहीं कर पाते।

केवल वे बरदाश्त ही न कर पाते हों ऐसी बात नहीं, उससे घृणा भी करते हैं, देखते ही दुरदुराने लगते हैं।

और जरा सा भी मौका हाथ लगा न ये उसकी दुर्गत बनाने में हिचकते नहीं। लड़कों की टोली तो मौका पाते ही उसे मारने दौड़ती है।

उस दिन एक अप्रिय घटना घट गयी।

रात के शायद दस या साढ़े दस बजे होंगे।

महाराज अपने कमरे में बैठे गीता पाठ कर रहे थे ऐसे समय आश्रम के दूसरे लड़कों द्वारा भगाया हुआ अंशु भागते-भागते महाराज के कमरे में घुस कर दोनों हाथ पसारे उनसे लिपट गया।

क्या ? क्या हुआ है अंशु ? महाराज चौंक पड़े।

वे—वे सभी मुझे मारते-मारते ले आये हैं।

कहते न कहते ही आश्रम के एक शिक्षक श्यामानन्द और आश्रम के चार-पाँच लडके एक ही साथ कमरे में प्रवेश किये।

महाराज ने उनकी ओर देखकर प्रश्न किया, क्या बात है ? मामला क्या है ?

विमल नाम के एक लड़के ने कहा, उसने श्यामल को डराया है महाराज।'

अंशु ने क्षीण स्वर में कहा, नहीं महाराज, मैंने नहीं डराया।

विनोद नाम का एक चौदह-पन्द्रह साल का लड़का बहुत ही तेज और'

रूखी आवाज में बोल पड़ा—डराया नहीं ! फिर झूठ बक रहे हो।

नहीं महाराज। सचमुच मैंने डराया नहीं।

दूसरा लड़का अब बोल पड़ा, तेरी सूरत तो भूत जैसी है—तुझे किसी को डराने की जरूरत ही क्या—तुझे देखते ही डर के मारे हाथ-पैर ठंडे हो जाते हैं—राच्छस कहीं का।

विरजानन्द ने टोकते हुए कहा, तुम चुप हो जाओ विमल ! कितनी ही बार तुम लोगों को मैंने बताया है कि आदमी का बाहरी रूप ही असली चीज नहीं है। आदमी होकर आदमी की बाहरी शक्ल-सूरत पर कभी निर्दय व्यंग नहीं करोगे।

विमल ने जवाब दिया, वह जाता ही क्यों है ? जिसे देखने पर सबको डर लगता है, क्यों वह--

विरजानन्द ने कहा, छीः विमल। अंशु बेटा, क्या हुआ है बताना। महाराज ने अरुणांशु को अपने निकट खींच लिया।

अंशु महाराज का अभय पाकर मृदु कुंठित स्वर में बोला, बेचारे श्यामल को आज पाँच दिन से बुखार है। उसके आसपास कोई भी नहीं था। उसके सिरहाने बैठकर मैं पंखा झल रहा था—

हाँ। फिर—

बुखार के झोंके में उसने पानी माँगा—मैंने उसे पीने के लिए पानी दिया, उसी समय श्यामल मेरे मुँह की ओर देखकर—कहते-कहते एकाएक मानों लज्जा और क्षोभ से अंशु ने अपना विकृत वीभत्स मुख ढाँप लिया।

इस बार शिक्षक श्यामानन्द जरा आगे बढ़कर झुँझलाये स्वर में बोले, तुम तो जानते ही हो कि वे तुम्हें देखकर डरते हैं—। इसके अलावा यह भी तुम जानते हो, श्यामल काफी बीमार है। डाक्टर ने कहा है कि किसी प्रकार की उत्तेजना की बात न होने पावे और तुम हो कि अपनी वह भोंडी सूरत लेकर—

अत्यन्त अप्रसन्न दृष्टि से श्याभानन्द के मुख की ओर देखते हुए इस बार महाराज ने कहा, छीः छीः, तुम्हारे मुँह से भी यह सुनना पड़ेगा ऐसा कभी

नहीं सोचा था श्यामानन्द। तुम भी और बाकी लोगों की तरह उस कुदर्शन रूप के नीचे जो कल्याण-स्निग्ध हृदय है उसकी टोह न पा सके।

लेकिन स्वामी जी—श्यामानन्द ने विरोध जताना चाहा।

नहीं श्यामानन्द। अपराध उसका नहीं है। किसी से अगर अपराध हुआ हो तो वह तुम्हीं लोगों से हुआ है। अवश्य ही इतनी रात गये तुम लोग कोई भी श्यामल के पास नहीं थे—इसीलिए अरुणांशु में जो चिरन्तन यथार्थ मानव है उसी के सेवापरायण दोनों हाथ श्यामल की रोगशय्या के बगल में आप ही आप उसका रोगक्लिष्ट स्वर सुनकर बढ़ गये थे। सन्यास ले लिया है श्यामानन्द तुमने लेकिन सन्यास के श्रेष्ठ धर्म की टोह आज तक नहीं लगा सके। जाओ तुम लोग। जाओ—

कुछ दुखी से होकर ही सब लोग इसके बाद कमरे से निकल गये। इस बार महाराज ने अंशु को अपनी बाँहों में खींच लिया।

महाराज के स्नेह-स्पर्श से अंशु की आँखों के कोर क्षणभर के लिए नम हो उठे लेकिन साथ ही साथ अपने को कठोर कर निम्न शान्त स्वर में बोला, श्यामल ने पानी माँगा तभी—तभी मैं उसे पानी देने गया था महाराज। समझ नहीं सका था कि बुखार के झोंके में भी वह मुझे पहचान लेगा, और डर जायगा—

अंशु के सिर पर हाथ फेरते हुए महाराज ने कहा, अफसोस मत करो अंशु, अफसोस मत करो। जानता हूँ। मैं जानता हूँ अंशु, तुम इन्सान हो और आज तुमने इन्सान का ही परिचय दिया है। आज बेटा, उन लोगों ने सिर्फ तुम्हीं को आघात नहीं किया। आज उन लोगों ने तुम्हारे हमारे उनमें से हर एक के दिल में बसने वाले भगवान पर ही निर्मम आघात किया है। ऐसा ही होता है अंशु, ऐसा ही होता है।

कुंठित कंठ से अंशु बोला, मैं जानता हूँ महाराज कि मैं देखने में बदसूरत हूँ, भयंकर हूँ—वे सभी मुझे देखकर डरते हैं लेकिन क्या वे नहीं जानते, क्या वे समझते नहीं कि बदसूरत होने पर भी मैं उन सभी से कितना प्यार करता हूँ—फिर भी, फिर भी वे मुझे देखकर डरते क्यों हैं? वे मुझे समझ क्यों नहीं

पाते महाराज ?

आज की तरह इतनी बातें इससे पूर्व शायद अंशु ने कभी नहीं की थीं। इस बार महाराज ने कहा, तुम दिल मत छोटा करो अंशु। आदमी होकर भी आदमी पर जिन लोगों ने इस तरह चोट की है, ऐसा दुख पहुँचाया है, उसी के प्रतिकार की शपथ लेकर जो लोग युग-युग में आते रहे हैं उनको भी इसी प्रकार दुख और आघात सहना पड़ा है। तुमने तो श्री चैतन्य देव के बारे में सुना है, श्री रामकृष्ण के बारे में सुना है। मनुष्य से प्यार करना है तो उनके दिये हुए आघात भी सहने पड़ेंगे। तुम तो नहीं जानते हो बेटा, जो हाथ तुम दान करने को पसारोगे उसी हाथ को वे मरोड़ देंगे। बार-बार उसे तोड़ने की कोशिश करेंगे।

नहीं, आपकी ये बातें मैं भूला नहीं।

हाँ, भूलना नहीं। अपने अन्तर में जो मनुष्य है उसे भी मत भूल जाना। कभी न कभी वे अपनी भूल समझ जायेंगे। सत्याश्रयी के सम्मुख सभी को कभी न कभी सिर झुकाना ही पड़ता है। आओ, आज फिर तुम्हें तुम्हारा वह गाना गा कर सुनाता हूँ—कविगुरु का लिखा वह गीत। दीवार से वीणा उतारकर उसके तारों से सुर निकाल वे उदात्त कंठ से गाने लगे।

भला किया तूने यह निरदय
यही किया है भला।
ऐसे ही हृदय में भड़काओ
तीव्र दहन की ज्वाला॥

न जाने क्यों महाराज के कंठ से गाना सुनना अरुणांशु को बहुत भाता। खास तौर से कविगुरु का यह गीत।

यह गाना उसे इतना प्रिय है कि बारबार सुनकर भी मानों उसके सुनने की साध पूरी नहीं होती।

अरुणांशु के वीभत्स विकृत शरीर के भीतर जो दिल है वह इतना नर्म

और इतना कोमल है कि बाहर के वीभत्स विकृत शरीर के साथ वह कही पर भी मेल नही खाता।

किसी के दिल को तनिक सा भी दुखा नही सकता है वह।

दूसरों के मामूली दुख-दर्द से ही उसकी आँखों मे आँसू आ जाते।

अरुणाशु के इस यथार्थ परिचय के बारे में दूसरे लोग अनजान रहने पर भी महाराज विरजानन्द के लिए ऐसा नही था और इसी कारण शायद विरजानन्द अंशु को अपनी आत्मा से भी अधिक चाहते थे।

और बाहर का कोई अरुणाशु का यह परिचय नहीं जानता था। शायद इसीलिए वह सदा अपने स्नेह भरे हाथों को बढ़ाकर अभागे इस बालक को हर प्रकार के आँधी-तूफान, दुख और वेदना के आघात से बचाने को अपनी ओट में लिये रहते थे।

महाराज वीणा बजाकर गाना गा रहे हैं और तन्मय हो सामने बैठा अरुणाशु सुन रहा है।

यह तुमने भला ही किया निरदयी। अजी तुमने भला ही किया। इसी तरह से मेरे दिल में तुम तीव्र दहन की ज्वाला उभारो।

गाना सुनते हुए तन्मय अरुणाशु की आँखो के कोर से उसके अनजाने ही आँसू ढरक कर उसके दोनों गालों और ठोडी को भिगो रहे हैं यह शायद उसे मालूम भी नही।

किसी समय गाना खत्म हो गया। दीपक की रोशनी मे सामने बैठे अरुणाशु के मुख की ओर देखकर महाराज सचमुच विस्मित हो गये। यही पहली बार उन्होंने अरुणांशु की आँखों मे आँसू देखे।

धीरे-धीरे अरुणाशु के सिर पर एक हाथ रखकर स्नेह भरे स्वर मे उन्होंने कहा, यह क्या अरुणाशु, तुम्हारी आँखो मे आँसू कैसे?

झटपट मानो काफी शर्माकर अरुणाशु ने आँखो से आँसू पोंछा और मुस्कुराया।

नही, अरुणाशु, तुम रोओ मत। जो बलशून्य कमजोर होते हैं वही रोते हैं। यह जान लेना कि तुम ससार मे किसी से भी छोटे नही हो। जिसे चोट

ही नहीं सहनी पड़ी उसे तो दुनिया की सबसे बड़ी खबर ही न लग पायी।

इसके बाद और निकट खींचकर कहने लगे, वीणा तुम्हें बड़ी अच्छी लगती है, है न ?

जी।

अच्छी बात। कल से तुम्हें वीणा बजाना सिखाऊँगा अरुण। दुनिया के लोगों के हाथ जब भी अपमान और अत्याचार तुम्हें असहनीय लगने लगे, ग्लानि से हृदय पूर्ण हो उठे—देखना, इस वीणा-यंत्र के सुर-निर्भर से ही तुम्हें सान्त्वना और शान्ति मिलेगी। सब लोग तुम्हारे साथ चाहे विश्वासघात करें, चाहे आघात पहुँचायें पर यह तुम्हें शान्ति देगी, आश्वासन देगी। एक बात और याद रखना अंशु, क्षमा से बढ़ कर इस संसार में कोई दूसरी चीज नहीं है। चाहे वह कितना ही बड़ा अपराध क्यों न हो। जिस दिन इस बात को समझ लोगे उसी दिन जान सकोगे कि यह पृथ्वी कितनी सुहावनी है। यहाँ का सभी कुछ कितना सुन्दर है।

महाराज की उस दिन की बातें अरुणांशु के मन में एक नया सन्देशा ले आयीं। पुस्तक के काले-काले अक्षरों पर झुक कर उसके अज्ञात रहस्य की तलाश में अरुणांशु लग गया। महाराज धीरे-धीरे अरुणांशु के दिल के दरवाजे पर दस्तक दे-देकर उसे सजग बनाने लगे। अक्षरों से परिचित कराकर उन्होंने मानों उसे एक दूसरे ही जगत के सम्मुख खड़ा कर दिया। सिर्फ यही नहीं, अन्तर के तार-तार पर सुर का स्पर्श देकर उसी के साथ-साथ बालक के मनोजगत की सूक्ष्म अनुभूतियों में भी कम्पन जगा दिया। एक तरफ पाठ्य पुस्तक तो दूसरी ओर वीणा। सुर और कथा, कथा और सुर। अरुणांशु मानो इसे नये तौर से आविष्कार किया। तभी से लिखाई-पढ़ाई के साथ वीणा-साधना भी चलने लगी। न जाने क्या सोचकर महाराज ने अरुणांशु के हाथों में एक ही साथ वीणा और पुस्तक दी थी—वही जानते हैं लेकिन यह देखा गया कि चन्द महीनों के अन्दर ही यह बालक मानों असाध्य साधन करने लगा। अपने अन्तर की निष्ठा और एकाग्रता लेकर देखते ही देखते चन्द महीनों में अरुणांशु ने जिस प्रकार वीणा बजाने में उत्कर्षता प्राप्त

कर ली उसी प्रकार लिखाई-पढ़ाई में भी वह बहुत आगे बढ़ गया। स्वामी जी भी मानो अरुणाशु के बारे में काफी निश्चिन्तता अनुभव करने लगे। आजकल ज्यादातर वक्त स्वामी जी वीणा नही बजाते, हालांकि पढ़ते समय बेशक मदद करते। अरुणाशु बजाता रहता। महाराज बैठे-बैठे सुनते रहते।

अरुणाशु पढ़ता रहता, महाराज बगल में बैठे जरूरत पड़ने पर संशोधन करते रहते। जन्म-गत विकृत दानव सदृश चेहरे के साथ बीच-बीच में बालक के मन में जिस द्वन्द्व का उदय होता था और जिसके लिए स्वामी जी इन दिनों सचमुच कुछ चिन्तित हो उठे थे, लिखाई-पढ़ाई और संगीत के प्रति बालक का आकर्षण देखकर स्वामी जी समझ गये कि अरुणाशु अपने विकृत चेहरे को लेकर कभी-कभी जो विचित्र अन्तर्द्वन्द्व मे पड़ जाता है उसे शायद वे बालक के मन की गति को दूसरी ओर परिचालित कर क्रमशः शान्त और सहनशील बनाने मे समर्थ हो जायेंगे। वातावरण और अनुप्रेरित चिन्तन द्वारा मनुष्य की स्वाभाविक बालसुलभ मनोवृत्ति और चिन्तनधारा को सहज, सुन्दर और स्वाभाविक विकास की दिशा मे ले जाया जा सकता है—इस सत्य का विकास ही मानो स्वामी जो क्रमशः अरुणाशु में लक्ष्य किया।

और इसी प्रकार और भी बहुत से वर्ष बीत गये।

और इधर वयोवृद्धि के साथ-साथ अरुणाशु का जन्मगत विकृत अवयव मानो क्रमशः और भी विकृत, भयावह और वीभत्स हो उठने लगा।

कोई श्मशानचारी प्रेत भी देखने मे ऐसा कुदर्शन, ऐसा डरावना नही होता। मनुष्य का जिक्र ही क्या।

ऊँचा सा प्रशस्त माथा, भौंहे करीब-करीब हैं ही नही।

क्षुद्र-क्षुद्र गोलाकार दो पुतलियाँ, वे भी जरा भेंगी — तिस पर उनमे से एक जरा ऊपर तो दूसरी जरा नीचे।

पसरा चौकोर जबड़ा।

ऊपर वाला होंठ छोटा होने के कारण ऊपर के मसूड़े के बड़े-बड़े दाँत मानों मुँह चिढ़ाते जैसे लगते हैं।

नीचे का होंठ अस्वाभाविक रूप से मोटा और भारी होने के कारण जरा नीचे की ओर लटक गया है।

माथे की बायीं तरफ एक भद्दी-सी बतौरी — मांसपिंड मानों-गुम्मड़ के आकार में लटक रहा है।

गला छोटा सा—बदन भर में हाथ-पैरों में अत्यधिक बाल।

लेकिन कदकाठ देखने से ही लगता कि इस देह में बड़ी शक्ति है।

दोनों पैर जरा टेढ़े होने के कारण अंशु जब चलता है तो पैरों को जरा घसीट कर हिलते-डुलते थप-थप करते हुए।

दूर से देखने पर लगता मानों एक दीर्घाकार वीभत्स दानव चल रहा है।

मृत्यु

नित्य-प्रवहमान काल की धारा दिन, रात्रि, मास और वर्ष के परिक्रमण से आगे बढ़ती जाती।

पृथ्वी के कोष-कोष में परिवर्तन के साथ-साथ जीव-जगत के कोष-कोष में भी परिवर्तन की क्रिया सक्रिय रहती।

और इसी प्रकार से पच्चीस वर्ष की लम्बी अवधि निकल गयी।

आश्रम के साथ-साथ इन्हीं पच्चीस वर्षों में बहुतों में बहुत सारा परिवर्तन आ गया है।

पच्चीस वर्ष पहले एक आँधी-पानी वाली रात्रि की अन्तिम घड़ियों में सुहृद डाक्टर ने स्वामी जी के हाथों में जिस नवजात असहाय पितृ-परित्यक्त मांसपिंडवत् शिशु को सौंप दिया था, फिर आश्रम में पालिका लक्ष्मी मायी के स्नेह और करुणा से माँ की गोद से गिरा हुआ जो बच्चा जी गया था—क्रमशः स्वामी जी की दया और स्नेह से पल कर वह आज एक बलवान युवक में परिणत हो गया है। ज़ाहिर है कि वह देखने में और भी बदसूरत और भी डरावना हो गया है। लेकिन वही आज उसका सारा परिचय नहीं है। वह कदाकार दानव सरीखा मनुष्य स्वामी जी की शिक्षा और स्नेह से एक अनोखे सुन्दर हृदय का अधिकारी बन गया है। आज वह शान्त, धीर, क्षमासुन्दर पुरुष है। अध्ययन और संगीत में ही वह आज आत्मसमाहित सा है।

उस दिन आधीरात को।

कई रोज से महाराज अस्वस्थ थे।

अस्वस्थ स्वामी जी का एकान्त कक्ष।

सब लोग अपने-अपने कमरों में नींद में अचेतन हैं, केवल अरुणांशु ही महाराज विरजानन्द की रोगशय्या के पास जाग रहा है।

कहने को शाम से ही उस दिन कमरे में कोई दूसरा नहीं है, सिरहाने पत्थर की मूर्ति सा बना अरुणांशु बैठा है। उस दिन स्वामी जी की अस्वस्थता मानों काफी बढ़ गयी थी।

महाराज बिस्तर पर लेटे हैं। गेरू चादर से सीना तक ढका हुआ है। मृत्यु के आमने-सामने पहुँचकर भी मानो उनके मुखड़े पर एक अमल स्निग्ध शान्ति विराज रही है। दोनों आँखें मुंदी हुई।

सिरहाने एक मोमबत्ती दिपदिपाती जल रही है।

गहरी रात की घड़ियाँ मानो मोमबत्ती के बदन से गल-गल कर नीचे झड़ी जा रही हैं।

कमरे भर में छाया और प्रकाश की एक अद्भुत पहेली जैसी छायी हुई है। उसमें कुछ तो स्पष्ट है तो कुछ धुँधला।

धीरे-धीरे एक वार स्वामीजी ने आँखें खोलीं, पुकारा, अंशु।

जी महाराज।

अरुणांशु वगल ही में बैठा था। झटपट आगे वढ़ आया।

रात कितनी हो गयी अंशु ?

दूसरा पहर वीतने ही वाला है महाराज।

थके स्वर में महाराज ने कहा, मुझे जरा वीणा वजाकर सुनाओगे अंशु।

अरुणांशु ने दीवाल से वीणा उतार ली और अपनी गोद में लेकर बैठ गया। उँगलियों के स्पर्श से सुर झंकृत हो उठा।

वजाने में अंशु के हाथ वड़े मधुर हैं।

अरुणांशु का वीणा-वादन सुनते हुए महाराज ने फिर अपनी आँखें वन्द कर लीं। क्लिष्ट, यातना से कातर चेहरे पर मानों एक स्निग्ध प्रशान्ति उतर आयी।

वजाना खतम हो जाने पर विरजानन्द ने कहा, वाह वहुत सुन्दर ! केवल सुर के माध्यम ही अव्यक्त भाषा व्यक्त हो सकती है यह तुम्हारी वीणा ने सिद्ध किया है अंशु। सचमुच यह अनोखा है। अंशु, तुम्हारी वीणा-साधना सार्थक है। अव मुझे कोई खेद न रहा।

अरुणांशु ने मुँह उठाकर महाराज की ओर देखा।

हाँ, अव मैं निश्चिन्त होकर आँखें मूंद सकता हूँ। जाने से पूर्व दो वातें कह जाना चाहता हूँ अंशु।

व्याकुल स्वर में अंशु ने कहा, ऐसा न कहें महाराज, आपके सिवा इस दुनिया में मेरा दूसरा कौन अपना है—

क्लान्त कोमल कंठ से महाराज ने कहा, मनुष्य कोई अमर तो होता नहीं वेटा। कर्म और योग से जव तक मेरी मुक्ति नहीं होती उतने दिनों तक ही जन्म और मृत्यु के माध्यम से वार-वार इस जीवन का परिक्रमण होता रहेगा। यही प्रकृति का नियम है। छीः, आँसू नहीं गिराते। सुनो, मैं जो कहना चाहता हूँ—

नहीं महाराज, मैं कोई रोया नहीं। कहते-कहते शायद विवश आँखों से

झरते आँसुओं को रोकते हुए अरुणांशु ने महाराज विरजानन्द के मुँह की ओर देखकर कहा, बताइए महाराज, क्या बताना चाहते थे आप।

विरजानन्द को बोलने में कष्ट हो रहा था। फिर भी धीरे-धीरे विलम्बित ढंग से वे बोलने लगे, बहुत दिनों से तुम्हें बताने की इच्छा रहने पर भी तुम्हें यह बात आज तक न बता सका था अंशु। अरुणांशु ने उद्ग्रीव होकर महाराज की ओर देखा। महाराज ने कहा, तुम्हारे होश में आ जाने के बाद से बहुत दिनों से ही सोचता रहा हूँ कि तुम्हारा सच्चा परिचय तुम्हें बता दूँगा, लेकिन—

अरुणांशु मानो चौंककर बोल पडा, मेरा परिचय।

हाँ, तुम्हारा परिचय। इस अनाथ-आश्रम में दूसरों की तरह सयाने होकर तुमने भी शायद यही सोच लिया था कि तुम भी अनाथ हो। लेकिन यह सब नहीं है अंशु। न तुम परिचयशून्य अनाथ हो और न अज्ञातकुलशील ही।

विरजानन्द की बातों से मानो अरुणांशु चौंक पड़ा। फिर कुछ-कुछ आर्त-स्वर में ही वह बोल पड़ा, मैं अनाथ नहीं। क्यों महाराज, क्या मैं सचमुच गोत्र परिचयशून्य नहीं हूँ?

नहीं अंशु। तुम्हारे माता-पिता—

मेरे माता-पिता—अरुणांशु व्यग्र कंठ से बोल पड़ा।

क्षीण स्वर में विरजानन्द ने कहा, हाँ, तुम्हारे माता-पिता हैं—भद्र समाज में भद्र वंश में तुम्हारा जन्म है।—और जहाँ तक मुझे लगता है आज भी, आज भी शायद वे जीवित ही हैं।

यह सब क्या सुन रहा है अंशु। तो क्या सचमुच वह विश्व का अपमानित नाम-गोत्रशून्य एक अनाथ बालक नहीं है। उसका भी परिचय है, उसकी भी स्वीकृति है। पथ के जंजालों से वह बटोरा हुआ नहीं है।

सदा से स्वल्पभाषी संयमी अरुणांशु भी स्वामी जी के मुँह से यह बात सुनकर अपने को रोक न सका। व्याकुल स्वर में वह बोला, बताइए, बताइए महाराज, वे कौन हैं? कौन, कौन हैं मेरी माँ और कौन हैं मेरे पिता। उनका परिचय क्या है? वे जीवित हैं या मृत। —आँधी जैसा ही एक के बाद दूसरे

प्रदन की झड़ी सी लग गयी। फिर कुछ रूठे हुए वेदना से दुखी स्वर में वह बोला, और सभी जब मेरे थे तो मैं इस आश्रम में क्यों पड़ा हूँ महाराज ? बताइए, बताइए—

अरुणांशु के सिर पर सस्नेह एक हाथ रखकर महाराज पहले की ही तरह धीरे-धीरे बोलने लगे—नियति के निग्रह से ही तुम आज अनाथ-आश्रम में पाले गये हो अंशु। स्वामी जी कहने लगे, और-—और जितना मुझे मालूम है उन लोगों ने तुमको परित्याग किया था, तुम्हारे उस—

बताइए—बताइए महाराज !

तुम्हारे उस विकृत चेहरे के लिए ही।—महाराज से और कुछ कहा नहीं जा सका। एक अस्पष्ट आर्तनाद-सा मानों अरुणांशु के सीने को झकझोरता निकल आया। मानों अचानक ही दुख, लज्जा, मर्म-पीड़ा से आज फिर से अरुणांशु अपने रूप के वारें में सचेतन हो गया।

अफसोस मत करो बेटा, यह सचमुच उन लोगों का बड़ा ही दुर्भाग्य है कि उन लोगों ने भी बाकी दस व्यक्तियों की तरह केवल तुम्हारा बाहरी रूप ही देखा था। लेकिन तुम में भी फूल जैसी संभावना हो सकती है यह उन लोगों ने एक बार भी नहीं सोचा था।

अरुणांशु चुप ही किये रहा। वह मानों पत्थर बन गया था।

पच्चीस वर्ष पहले आँधी-पानी वाली रात की अन्तिम घड़ियों में मैं बैठा वीणा बजा रहा था कि आश्रम के बाहर की घंटी बजी। स्वामी जी मानों बड़े ही कष्ट से क्लान्त और अवसन्न कंठ से कहने लगे—

अरुणांशु अपनी सारी इन्द्रियों से स्वामी जी की बातों को आत्मसात करता रहा।

दरवाजा खोलते ही मेरे एक परिचित डाक्टर ने तुम्हें लाकर मेरे हाथों में सौंप दिया। और उसी समय उन्होंने कहा था कि तुम्हारे माता-पिता जीवित हैं। उससे अधिक उन्होंने उस दिन कुछ भी नहीं बताया। और न मैंने जानना चाहा। फिर भी उन्होंने कहा था, बाद में आकर एक दिन तुम्हारे, बारे में सारी बातें वह मुझे बता जायेंगे। जरा-सा दम लेकर फिर बोलने लगे,

इससे अधिक परिचय तुम्हारा मुझे कुछ कहना नहीं है। क्योंकि इससे अधिक मैं भी कुछ न जान सका।

क्यों महाराज ?

क्योंकि तुम्हें यहां रख जाने के बाद मैं तुम्हें तुम्हारी लछमी मायी के हाथो में छोड़कर दो साल के लिए हिमालय भ्रमण करने चला गया था। लौट आने के बाद वे आश्रम मे एक बार आये बेशक थे लेकिन उस बारे मे कोई भी बात नही हो सकी। हालांकि मैंने भी कुछ पूछा नही। तुम्हारे बाप ने जब तुम्हे त्याग ही दिया है तो सोचा, नाहक उनका पता लेकर क्या होगा? जो बाप होकर अपनी सन्तान को त्याग सकता है, सन्तान को वैसे बाप की क्या जरूरत ?

महाराज।

हां बेटा अशु, मैंने यही सोचकर इस बारे मे कोई चर्चा ही नही की। और उस डाक्टर ने भी नही की, हालांकि न आने पर भी वे अक्सर तुम्हारा कुशल समाचार पत्र के जरीये लेते थे। बहरहाल इससे भी पांच साल बाद वह डाक्टर अपनी पत्नी के एक महीने का बच्चा छोडकर स्वर्गवास करने चली जाने के कारण अपने अशान्त मन को शान्त करने के लिए बच्चे को ननिहाल छोड़कर योरोप चले गये थे। सात साल के बाद वे योरोप से लौट आये। उनके आने की खबर मुझे अखबार के जरीये ही मिली। पता नहीं क्या कारण था कि उनके योरोप से वापस आने के बाद केवल एक ही पत्र मुझे मिला था। और कोई पत्र मुझे आज तक नही मिला। उस पत्र मे उन्होंने सूचित किया था कि अगर कभी जरूरत पडे तो तुम्हारी सारी जिम्मेवारी लेने को वह तैयार हैं और वैसी आवश्यकता पड़े तो बिना किसी झिझक के उनको सूचित करूं। हालांकि इस पत्र का मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। देने की जरूरत भी आज तक महसूस नही की। लेकिन आज समझ रहा हूं कि मेरी गैर-मौजूदगी में शायद तुम्हारे लिए यहां रहना सभव न होगा।

यह मैं जानता हूं महाराज।

इसीलिए कह रहा था कि मेरा ख्याल है कि तुम मेरी मृत्यु के

बार उस डाक्टर से जाकर मिल सकते हो।

महाराज, मैं उन डाक्टर जी के पास जाऊँगा।

हाँ जाना। और तुम्हें पहचान लें इसलिए मैंने एक चिट्ठी लिखकर उस दराज में रख छोड़ी है—डा० सुहृद सरकार के नाम, उनका पता है ३।१ हाजरा रोड, कलकत्ता। चिट्ठी लेकर उनके हाथों में देना—वे—

बाकी बात वह समाप्त नहीं कर सके। उनकी बातें लड़खड़ाकर अस्पष्ट हो गयीं और इसके उपरान्त ही एक हिचकी सी लेकर महाराज का सिर तकिये पर ढुलक गया।

महाराज! महाराज!

व्याकुल हो अरुणांशु ने महाराज का तकिये पर ढुलका हुआ सिर अपने हाथों में ले लिया।

लेकिन कोई भी आहट नही मिली।

अरुणांशु को मानों रोने का अवकाश ही नहीं मिला। क्षण भर पहले अपने जीवन का जो अभूतपूर्व इतिहास उसके सामने खुल गया था उसकी आकस्मिकता से वह विह्वल और विमूढ़ सा हो गया था।

पत्थर सा स्तब्ध बैठा रहा वह। इस आकस्मिक उथल-पुथल से उसके जीवन के सबसे दुखभरे क्षणों की वेदना भी मानों भाप बनकर उड़ गयी थी। सिर्फ निःस्पन्द महाराज का सिर अपने दोनों हाथों में लिये अरुणांशु बैठा रहा।

मोमबत्ती की लौ अब भी दिपदिपा रही है।

एक अद्‌भुत सी छाया दीवार पर काँप रही है।

आधीरात का सन्नाटा।

अरुणांशु को दिल तोड़कर रुलाई आ रही है लेकिन आँखों में तो कोई आँसू नहीं। वह रो नहीं पा रहा है।

संसार का प्रथम और अन्तिम सगा व्यक्ति आज उसे कंगाल लाचार बना कर चल दिया फिर भी उससे रोया नहीं जा रहा है।

मृत्यु।

यही क्या मृत्यु है?

क्या इसी का नाम मृत्यु है ?

स्वामी जी कहते थे, मरण, तुहुँ मम श्याम समान। कहते थे अविनाशी आत्मा की मृत्यु नहीं होती। सिर्फ एक देह से दूसरी देह में रूपान्तर मात्र। क्या यही है वह मृत्यु।

कोई भी न रहा। इस संसार में, इस विशाल संसार में सगा कहने को उसका कोई न रहा।

वह आज अकेला है।

स्वामी जी ने झूठ नहीं कहा। वह तो जानता ही है और भली भाँति जानता है कि आश्रम का दरवाजा भी आज से उसके लिए हमेशा के लिए बन्द हो गया। अब यहाँ उसके लिए कोई स्थान नहीं।

अचानक ऐसे ही समय उसे महाराज की अन्तिम बातें फिर याद पड़ गयीं।

उसका परिचय है। वह नाम-गोत्रहीन परिचयशून्य अनाथ नहीं है। कोई मानो उसे कानों में कहता, अरे अभागे, तेरी माँ है तेरा बाप है, तो तू आज भी यहाँ क्यों पड़ा रहेगा ?

हाँ, उसकी माँ है, उसका बाप है। है। है। है।

लेकिन कहाँ, कितनी दूर। किस अनजाने अनपहचाने घर में ? वह क्या इसी दुनिया में है ?

वह घर कैसा है देखने में ? किस तरह से उनका वह घर वह ढूँढ पायेगा ? किस रास्ते जाने से वहाँ पहुँचा जा सकता ? किस पथ के सिरे पर वह घर है जिस घर के लिए अपने अनजाने ही उसके दिल में इतने दिनों की रेगिस्तानी प्यास जमी हुई थी ? दराज में रखे महाराज के उस पत्र की बात याद आ गयी उसे।

डा० सुहृद सरकार।

धीरे-धीरे सस्नेह महाराज का सिर उपाधान पर लिटा कर अरुणांशु उठ खड़ा हो गया। एक बार महाराज के मृत शान्त मुखड़े की ओर देखा [illegible] मुँदे नयनों की ओर। मृत्यु नहीं, मानो परम शान्ति में महाराज [illegible]

फिर आगे बढ़कर ऊपर वाले ड्रायर को खोलकर [illegible] लिफाफा मिला।

ऊपर पता लिखा था :

डा० सुहृद सरकार, एम० डी०

३।१ हाजरा रोड,

कलकत्ता ।

अपनी निगाहों की सारी प्यास लेकर टकटकी लगाये अरुणांशु लिफाफे पर स्वामी जी के लिखे अक्षरों की ओर देखता रहा । कितने ही दुःख-दुर्दशा के बाद मानों आज वह अपनी आँखों के सामने आनन्द की एक उज्ज्वल शिखा देख रहा है ।

तो फिर देर किस बात की ? अभी इसी क्षण अरुणांशु बाहर निकल सकता है। जीवन का एक अध्याय तो समाप्त हुआ । अब नया अध्याय आरम्भ होगा ।

अरुणांशु तैयार होने लगा ।

कुरता पहन लिया और जेब में पत्र डाल लिया। और खोल में महाराज की दी हुई वीणा डाल ली ।

वीणा। उसकी वीणा। इस संसार में उसका अन्तिम सहारा और आखिरी सान्त्वना ।

फिर आगे बढ़कर मृत्युशान्त महाराज के शायित शरीर के चरणों के पास जाकर खड़ा हो गया ।

झुक कर उसने महाराज के चरणों में प्रणाम किया फिर चुपचाप उस आधीरात के अँधेरे में ही अरुणांशु घर से निकल पड़ा ।

चुपचाप सड़क पर आकर खड़ा हो गया । पच्चीस वर्षों की स्मृतियों से भरा वह आश्रम आधीरात के धुँधलके में अस्पष्ट रूप से करुण लग रहा था।

दूसरे गृह से भी वह विताड़ित हुआ।

लेकिन उस दिन सामने आश्वासन था, आश्रय था। लेकिन आज ?

सीमा और प्राचीरों से घिरा एक विशेष स्थान एक दिन जिसके संसार को चारों ओर से घेरे हुए था, आज उसका वह संसार मानों चारों ओर से खुल गया।

मानो विपुल विश्व ही अरुणांशु के सामने हो—असीम, अनादि, अनन्त। इस विपुल विश्व में किस जगह वह घर है कौन जाने, जिस घर के उद्देश्य में आज वह निकल आया है।

सिर्फ अँधेरा।

और पथ। पथ बल खाता हुआ चला गया है।

अरुणांशु चलता ही चला जा रहा है।

क्या इस पथ का कोई अन्त नहीं।

रात का अँधियारा भी धीरे-धीरे फीका पड़ने लग गया।

आकाश के पूर्व प्रान्त में जरा-जरा करके भोर के प्रथम प्रकाश का आभास दिखाई पड़ने लगा। प्रभात मानों उदय दिगन्त में नये तौर से जन्म ले रहा है।

रास्ते के दोनों ओर पेड़ों की शाखों पर नींद से जागे पंक्षियों के डैना फटकने के शब्द और चह-चह सुनाई पड़ने लगे।

थका-माँदा अरुणांशु रास्ते के किनारे एक पेड़ के नीचे टेक लगाकर बैठ गया।

लेकिन बैठने से उसका काम नहीं चलेगा, उसे आगे बढ़ते जाना है।

यह पथ तो उसे तय करना ही है। उसे वह घर ढूंढ़ ही लेना पड़ेगा। उठकर फिर वह चलने लग गया। अन्त में चलते-चलते किसी समय अरुणांशु श्यामबाजार के नुक्कड़ पर आ पहुँचा।

चारों तरफ बड़े-बड़े मकान। एक दूसरे से सटे, गँजे। और इधर-उधर सब रास्ते चले गये हैं। क्या इसी का नाम शहर है ?

लेकिन वह ३।१ हाजरा रोड कहाँ है कौन जाने ? जिस घर में डा०

सुहृद सरकार हैं। एक मात्र वही उसके जन्म का परिचय जानते हैं। उसका सारा समाचार।

जिस शहर में वह चल रहा है उसकी किसी बात के साथ ही अरुणांशु परिचित नहीं है। तो कैसे वह डा० सुहृद सरकार का पता ढूंढ निकालेगा?

चलते-चलते थकान भी बहुत बढ़ गयी है।

भूख भी बड़े जोर की लगी है पर जेब में एक भी पैसा नहीं है।

आते वक्त जल्दबाजी में रुपया-पैसा कुछ भी वह साथ नहीं ले आ सका है। क्या किसी से माँगने पर उसे कोई दो कौर खाने को नहीं देगा।

लेकिन इससे पूर्व सुहृद सरकार को ढूंढ़ निकालना होगा। डा० सुहृद सरकार।

इससे पूर्व अरुणांशु ने इस विचित्र और विशाल कलकत्ते के बारे में केवल सुना ही भर था, पर न तो उसे आँखों से देखा था और न इस शहर का कुछ भी वह जानता-पहचानता था।

कौन जाने हाजरा रोड किधर है?

चौराहे के नाके पर खड़े होकर अरुणांशु ने सामने की ओर देखा।

देखा चार तरफ चार रास्ते चले गये हैं। कौन उसे बता दे कि हाजरा रोड किधर है?

न जाने क्या सोचकर बायें ओर का रास्ता पकड़े चलते-चलते अरुणांशु देशबन्धु पार्क के सामने जा पहुँचा।

एकाएक अरुणांशु को दो अधेड़ सज्जन दिखाई पड़े। वे लोग बातें करते हुए पार्क की तरफ हो आ रहे थे। शायद वे प्रातःभ्रमण पर निकले हैं।

जरा तेज चाल से अरुणांशु उन सज्जनों की ओर बढ़ा।

अजी, महाशय जी, सुनते हैं। सुनिए!

उनमें से एक सज्जन अरुणांशु की पुकार सुनकर पलट कर खड़े हो गये: क्या है?

लेकिन अगले ही क्षण अरुणांशु के चेहरे पर नजर पड़ते ही शायद विराग से उन्होंने मुँह सिकोड़ लिया और रूखी आवाज में पूछा, क्या है? क्या चाहिए?

सुनिए, कृपया बता दें कि ३।१ हाजरा रोड कहाँ है ? कुंठित अरुणांशु ने पूछा ।

यह तो श्यामबाजार है । हाजरा रोड यहाँ कहाँ है ।

तो कहाँ किस ओर हाजरा रोड है कृपया बता दीजिए ।

मालूम नहीं, ढूंढ़ लो ।

विराग भरे स्वर में ये चन्द बातें कह कर वह सज्जन बगल वाले सज्जन से बोले; चलो जी अविनाश । सवेरे-सवेरे जितने मनहूस—

जरा तेज चाल से वे सामने की ओर बढ़ चले ।

आगे बढ़ते हुए उन सज्जनों की बातें अरुणांशु को स्पष्ट सुनाई पड़ीं ।

दूसरे सज्जन उस समय अपने साथी प्रथम सज्जन को सम्बोधित कर कह रहे थे, देखा जी विपिन, कैसी सूरत है इसकी । मानों यह निगोड़ा कब्र से निकला भूत हो ।

उसकी पसलियों को झकझोर कर एक साँस शायद निकल आयी ।

अरुणांशु फिर चलने लगा ।

थकावट से दोनों पैर जवाब देने लगे । दर्द से टीस रहे हैं ।

अब तो चला नहीं जाता । लेकिन न चल सकने से कैसे चलेगा । तो जरा विश्राम की जरूरत है । सामने ही एक चबूतरा वाला मकान देखकर अरुणांशु आगे बढ़कर उस चबूतरे पर ही बैठ गया ।

और थकान से न जाने कब उसका निढाल शरीर वहाँ पसर गया । उसने बगल ही में वीणा रख दी ।

नींद से क्लान्त आँखें खुद ही बन्द हुई जा रही हैं ।

शायद पन्द्रह मिनट भी उसने नहीं सोया होगा कि अचानक एक लाठी से कोंचे जाकर अरुणांशु की नींद टूट गयी ।

चौंक कर हड़बड़ाते हुए वह उठ कर बैठ गया । बेवकूफ सा आँखें फैला-

कर देखने लगा।

एक बहुत ही रूखा और खुरदरा स्वर सुनाई पड़ा, साला भूत ! मरने की दूसरी कोई जगह नही मिली। भाग, भाग यहाँ से। इस दरवाजे पर मरने आ गया है। भाग, भाग यहाँ से। मामला समझने मे उसे देर नही लगी।

सामने एक नौकर किस्म का आदमी हाथ में लाठी लिये खड़ा है।

चल ! चल भाग यहाँ से ! सुबह-सुबह अलसेट। उस समय भी कर्कश स्वर मे वह बड़बड़ा रहा था।

झटपट वीणा उठाकर अरुणायु ने मानो भागकर जान बचायी।

रास्ते में उतरते ही चन्द लावारिस कुत्ते भूंकते हुए अरुणायु का पीछा करने लगे—शायद उसका बदसूरत चेहरा देखकर ही।

सामने ही एक टूटे खडहर जैसे मकान के नीचे वाले खस्तादम कमरे में जाकर अरुणायु छिप गया।

कुत्ते उस समय भी भूंक रहे थे।

छोटा सा अप्रशस्त स्थान।

अँधेरा।

एक सड़ायँध हवा को भारी किये हुए है।

लावारिस गायें शायद रात को यही पनाह लेती हैं।

गोबर और धूल से सराबोर उस गन्दगी मे कही पैर रखने की जगह नहीं है।

उसी मे अरुणायु धप्प से बैठ गया।

थोडी देर बाद ही उस धूल-मैल-गोबर में ही अरुणायु लेट गया और सोने लगा।

उसकी नींद टूटते-टूटते तिपहर हो आयी थी। उस ढहे खडहर के टूटे कमरे में एक दम घुटाने वाला अँधेरा।

चारों ओर अजीब अँधेरा।

शुरू में कुछ भी याद नहीं पड़ा, धीरे-धीरे सभी कुछ थोड़ा-थोड़ा करके याद पड़ने लगा।

महाराज का देहान्त। डा० सरकार की तलाश में आश्रम-त्याग। लम्बा पथ तय करना। दो पथचारी सज्जनों का वह आचरण।

एक घर के चबूतरे पर आश्रय लेना। और अचानक लाठी से कोंचे जाकर भाग कर यहाँ आ पनाह लेना।

फिर थकान से कब वह सो गया था। सभी कुछ उसे एक-एक कर याद पड़ गया। सब कुछ उसे याद आ गया।

लेकिन भूख के मारे पेट की अँतड़ियाँ मानों ऐंठने लगी हैं। हाय रे मनुष्य की जैविक भूख।

लेकिन बाहर निकलने की हिम्मत नहीं पड़ती।

शायद उसे देखते ही अभी रास्ते के वे कुत्ते उसके पीछे लग जायेंगे, आदमियों की बात छोड़ ही दो।

थोड़ी देर बाद, चारों ओर वातावरण शाम के अँधेरे से ढक जाय तो बाहर निकला जायेगा।

शाम के बाद रास्ते के दोनों ओर जब रोशनियाँ एक-एक कर जल उठने लगीं तो अरुणांशु बाहर आकर खड़ा हो गया। भूलकर वीणा वहीं छोड़ दी। वीणा के बारे में उसे कतई ध्यान न रहा। हाँ, अब वह कुछ निश्चिन्त सा चल सकेगा।

एकबारगी उसके मुख की ओर देखने पर भी कोई झट से कुछ समझ नहीं सकेगा।

हालाँकि अब सड़क सबेरे की तरह सुनसान नहीं रही।

बहुत सारे लोग आ-जा रहे हैं।

विना किसी लक्ष्य के ग्ररुणांशु धीरे-धीरे रास्ते से आगे बढ़ने लगा, कुछ सावधानी से भीड़ से कतराकर जरा एक किनारे होकर।

कहाँ है वह हाजरा रोड ?

कहाँ है डा० सुहृद सरकार का घर ?

ग्ररुणांशु थके-ढीले पैरों से विना किसी लक्ष्य के सामने की ग्रोर चलता ही रहा।

दो युवक सामने की ग्रोर से बातें करते चले ग्रा रहे थे। ग्रचानक उनके साथ चलते-चलते ग्रसावधानता से ग्ररुणांशु का धक्का लगते ही एक बिगड़े दिल से बोल पड़ा, रास्ता देखकर नहीं चल सकते। ग्रन्धे हो क्या ?

सकपका कर ग्ररुणांशु ने उसकी ग्रोर देखा।

रास्ते के गैस की रोशनी ग्ररुणांशु के चेहरे के एक ग्रंश पर ग्रा पड़ी थी। ग्रचानक उस रोशनी में ग्ररुणांशु पर दूसरे युवक की नजर पड़ते ही वह बोल पड़ा, यह कौन है रे ! साला भूत है क्या ?

बात कह कर ही दूसरा युवक ग्रपने मित्र को खींचते हुए तेज चाल वहाँ से चला गया।

ग्ररुणांशु का सीना कँपा कर एक लम्बी साँस निकल ग्रायी।

फिर वह चलने लगा।

बिल्कुल बेरहमी से हर कहीं ठुकराये हुए रास्ते-रास्ते पर भटकने भूखे-प्यासे, थके-माँदे ग्ररुणांशु के एक दिन ग्रौर एक रात यूँ ही गुजर गये। जो भी उसके मुख की ग्रोर देखता घृणा से मुँह फेर लेता, बात भी नहीं करना चाहता।

किसी दूसरे के साथ बात करने की इच्छा भी नहीं हुई ग्ररुणांशु की।

उस समय केवल एक ही बात उसके दिमाग को झिझोर रही थी कि कहीं दूसरे लोगों की तरह ग्रगर डा० सुहृद सरकार ने भी उसके मुख की ग्रोर देख मुँह फेर लिया तो।

फिर ? फिर वह कहाँ जायेगा ?

ग्राश्रम लौट जाने का तो ग्रब कोई रास्ता नहीं।

रास्ता पहचानकर आश्रम लौट जाना भी अब उसके लिए मुश्किल है। इसके अलावा वहाँ जाकर वह करेगा भी क्या ? वहाँ कोई उसका अपना तो है नहीं।

इसी तरह से तीसरी रात पैदल चलते-चलते भवानीपुर इलाके में एक गेटवाली कोठी के सामने आकर देखा—गेट पर संगमर्मर के नेमप्लेट पर लिखा है।

डा० एस० सरकार, एम० डी०

बहुत देर तक अरुणांशु प्यासे नयनों से उस नेमप्लेट को देखता रहा।

मानों कितना पथ तय कर, कितना दुख-क्लेश झेल कर कितनी निराशा को पार कर वह अपनी मंजिल को पहुँचा है—पाया है अपने परम आश्वासन, परम सान्त्वना को।

नेमप्लेट पर की लिखावट अरुणांशु बार-बार पढ़ता रहा।

डा० एस० सरकार।

एस० सरकार बेशक डा० सुहृद सरकार हैं।

देखा ही जाय।

अरुणांशु गेट से अन्दर दाखिल हो गया। सँकरी सी कंकड़ बिछी पगडंडी।

सामने ही बरामदा और पोर्टिको।

पोर्टिको के नीचे एक गाड़ी खड़ी है।

बरामदे पर रोशनी जल रही है।

कोई कहीं दिखाई नहीं पड़ रहा है। क्या घर पर कोई है नहीं ?

शंकाकुल सा इधर-उधर देखते-देखते सामने के प्रकाशित बरामदे पर अरुणांशु जा पहुँचा।

अचानक ऐसे ही समय बगल के कमरे के दरवाजे से एक नौकर निकल कर अरुणांशु को देखते ही चोर-चोर कहकर चिल्ला उठा।

दरवान शायद अपनी रोटी बनाने में लगा हुआ था, चोर-चोर आवाज से वह भी दौड़ता हुआ आया, चोर किधर—चोर किधर है श्याम भाई ?

दरवान और नौकरों ने आकर उसे चक्रव्यूह की तरह चारों ओर से घेर लिया।

भौंचक विमूढ़ अरुणांशु बेवकूफ सा इधर-उधर देखने लगा।

ऐसे ही समय शोरगुल सुनकर एक सज्जन बाहर निकल आये, क्या मामला है ? इतना हो-हल्ला किसलिए ?

दरवान ने गर्व के साथ कहा, साले को पकड़ लिया साहब। यही चोर उस रोज ड्राइंग रूम से रेडिओ चुराकर भागा रहा। फिर आज अन्दर झाँक रहा था। नासपीटे का बच्चा नासपीटा।

नहीं। मैं चोर नहीं हूँ।

इतनी देर में महीन आवाज में अरुणांशु ने विरोध किया।

अरुणांशु की बात पर मानो वह सज्जन चिढ़ गये, चोर नहीं, निगोड़ा साहूकार है। तुम्हारी सूरत देखते ही पता चल जाता है कि तुम चोर हो या साहूकार हो। अगर चोर नहीं तो किस इरादे से इस कोठी में घुसे थे ?

अरुणांशु ने फिर विनती की, यकीन कीजिए, मैं चोर नहीं हूँ। मैंने डा० सुहृद सरकार की कोठी समझकर—

हाँ, डा० सुहृद सरकार की कोठी समझकर सुशान्त सरकार की कोठी में घुस पड़े हो। साला बदमाश कहीं का।

ऐसे ही समय एक गाड़ी आकर बरामदे के सामने खड़ी हो गयी और गाड़ी से एक अच्छी वेशभूषा वाला युवक उतर आया और कौतूहल से पूछा, मामला क्या है सुशान्त ? इतना हो-हल्ला किस बात का ? और अगले ही क्षण अरुणांशु के चेहरे पर नजर पड़ते ही घृणा भरे स्वर में बोल पड़े, च्चू ! ग्राइस्ट ! ओफ, यह इन्सान है या भूत। कौन है जी यह। ओफ, देखने में कितना खौफनाक है।

देखो न ! साला चोर है, चोरी करने कोठी में घुसकर अब पकड़े जाकर कह रहा है कि मैं डा० सुहृद सरकार की कोठी समझकर यहाँ घुस पड़ा हूँ।

वाह, चाल तो तुमने वड़ी वेहतरीन चली गुरू। सज्जन वोल पड़े।

अरुणांशु ने फिर आखिरी वार कहा, आप लोग यकीन मानें, मैं चोर नहीं हूँ। डा० सुहृद सरकार की कोठी ढूंढ़ रहा हूँ। तीन दिन से ढूंढ़ रहा हूँ। स्वामी जी ने कहा था—

अब दूसरे आगन्तुक ने कहा, तुम भी खूब हो। अरे दो-चार हाथ लगा-कर छोड़ दो।

दरवान शायद अपने मालिक के मुँह से यही हुक्म पाने के इन्तजार में था। उसने एक-व-एक अरुणांशु को एक धक्का देकर भद्दी सी कमीनी भाषा में वोल पड़ा—चल वे साले !

आश्रम त्याग कर आने के वाद से लगातार इन दो दिन दो रात में हर एक के मुँह कटूक्ति सुनकर और निर्दय वेदिली वरताव पाकर अरुणांशु ने कोई शिकायत नहीं की और न तनिक विरोध ही किया, लेकिन उस क्षण दरबान के अभावित निर्दय और भद्दे आचरण ने मानों अरुणांशु के धैर्य के अन्तिम छोर पर चोट कर उसे एक दम वावरा सा वना दिया।

जो प्रचड दैहिक शक्ति उसकी पेशियों में सो रही थी सहसा मानों वन्दी प्रमिथ्यूस जैसा ही वह वदन झटकार कर जाग उठी।

एक प्रवल झटके से दरवान के हाथों से अपने को मुक्त कर अरुणांशु पलक झपते ही पलटकर खड़ा हो गया।

वज्रकंठ से हुंकारा—ऐ !

एक झटका खाकर ही दरवान समझ गया था कि यह कोई मामूली आसामी नहीं है।

सुशान्त वावू एकदम आपे से वाहर हो गये और नौकर की ओर देखते हुए वोल पड़े, जरा कमरे से मेरा हंटर तो ले आ। साले की वदमाशी भगाये देता हूँ।

अरुणांशु ने रोप भरे नेत्रों से सुशान्त वावू के मुख की ओर देखा। मुंह से कुछ वोला नहीं।

उसकी दोनों आँखों से उस वक्त शोले भड़क रहे थे।

दमित कठोर स्वर में उसने कहा, मुझे आप हंटर से पीटेंगे ?

सुशान्त बाबू के मित्र ने अब बाधा दी—जाने भी दो सुशान्त। ऐ, तुम जाओ भी।

नौकर इतनी देर में प्रभु के आदेश से हंटर ले आया था।

सुशान्त बाबू ने हंटर अपने हाथ की मुट्ठी में दबा लिया। लेकिन हंटर चलाने की उनकी हिम्मत नहीं पड़ी।

क्यों मारिए। हंटर से पीटना था न। अरुणांशु ने फिर कहा।

सुशान्त बाबू के हाथ फिर भी उठते नहीं, हंटर जैसा मुट्ठी में था वैसा ही रहा।

अचानक शेर की तरह हाथ बढ़ाकर हंटर को सुशान्त बाबू के हाथ से छीनकर अरुणांशु ने बाग में फेंक दिया, फिर धीर मन्थर चरणों से वहाँ से निकल गेट में से होकर सड़क पर आ गया।

उस समय उसके दिल में अपमान और विराग की एक ज्वाला मानों जहरीले भाप की तरह चारों ओर फैलती चली जा रही थी।

उसका यह रूप। इस बदसूरत चेहरा और दुर्भाग्य के लिए क्या वही जिम्मेवार है।

इसके अलावा क्या वह इतना कुदर्शन है कि किसी से जरा सी करुणा पाने योग्य भी नहीं है वह।

संसार के सारे दरवाजे ही क्या उसके लिए बन्द हैं।

इस विशाल संसार में क्या उसके लिए कहीं पर जरा सा भी ठाँव नहीं है।

अरुणांशु चलता ही चला जा रहा है।

तो वह जाय तो कहाँ जाय ?

क्या धरती इतनी ही छोटी है ?

धरती पर क्या उससे ज्यादा कुरूप कोई दूसरा नहीं है ?

चलते-चलते किसी समय वह कालीघाट ब्रिज के पास आ खड़ा हो गया।

धीरे-धीरे ब्रिज के रेलिंग के पास जा खड़ा हो गया।

अँधेरी रात।

सड़क की बत्तियाँ रात के पहरेदार जैसे एक आँख खोले जल रही हैं।

नीचे प्रवहमान कलनादिनी गंगा।

गंगावक्ष से आती ठंडी-ठंडी हवाओं से उसका सारा शरीर मानों जुड़ा गया।

ओफ्—कितनी प्यास है।

ब्रिज के बगल से अरुणांशु नीचे उतर आया।

पानी में उतर कर अँजुरी भर कर पानी पिया।

आह, सारी देह जुड़ा गयी।

अब वह कहाँ जाय ?

थकान से पलक झपे जा रहे थे, ब्रिज के नीचे ही किसी तरह से रात बिता देने की गरज से अरुणांशु आगे बढ़ा।

एक सड़ायँध का झोंका नाकों से आ टकराया और साथ ही साथ ब्रिज के नीचे अँधेरे से किसी ने रूखी खनकती आवाज में ललकारा, ऐ, कौन है रे ? कौन ? यहाँ कैसे घुसा आ रहा है ?

तुम कौन हो ? अरुणांशु ने पूछा।

मैं कोई भी होऊँ तुझे इस बात की क्या जरूरत ? जा बे, भाग जा यहाँ से।

ओफ्, यहाँ भी उसे ठाँव नहीं मिलेगा। कुत्ते बिल्ली को भी जहाँ जगह मिल जाती है वहाँ उसे जगह नहीं मिलेगी। यहाँ से भी उसे चला जाना होगा।

लेकिन अब उससे चला नहीं जा रहा है। धप्प से वह जमीन पर बैठ गया।

नहीं। वह यहाँ से नहीं जायेगा। एक पैर नहीं हिलेगा। देखें, कौन उसे यहाँ से भगाता है ?

फिर सवाल सुन पड़ा, अरे बैठ क्यों गया ? चल, भाग जा यहाँ से।

लेकिन अरुणांशु से उसे कोई जवाब ही नहीं मिला। वह खामोश रहा। वह थका हुआ है—बेहद थका हुआ। नींद में उसके शरीर के जोड़-जोड़ मानो ढीले हो रहे हैं।

वह आदमी और कुछ देर तक भुनभुनाकर चुप हो गया। शायद दूसरी तरफ से कोई जवाब न मिलने के कारण ही।

न जाने कब वहीं जमीन पर अरुणांशु सारा बदन पसार कर लेट गया था और सो गया था। सर्वसन्तापहारिणी निद्रा।

अगले दिन भिनसारे नींद टूटते ही अरुणांशु ने देखा उससे थोड़ी ही दूरी पर जो आदमी सो रहा है, वह कोढ़ी है। उसका चेहरा वीभत्स और भयानक है। सूजा हुआ विकृत मुख मानो सिंह का मुख जैसा ही लगता है।

उस आदमी के हाथ-पैरों में हर कहीं चिपचिपाते घाव हैं, सारे अंग में मक्खियाँ भिनभिना रही हैं। एक चीकट गन्दा चिथड़ा सा पहने हुए है।

एक प्रकार के सड़ायँध से आसपास की हवा बोझिल है। नाक जलने लगी।

तो कल रात को इसी आदमी ने उसे यहाँ जगह देने से एतराज किया था। हाय रे इन्सान!

इतने क्लेश में भी अरुणांशु के चेहरे पर एक मुस्कराहट खेल गयी।

अरुणांशु उस आदमी को बारीकी से देखने लगा। उस आदमी ने उस ब्रिज के नीचे ही अपनी गिरस्ती जमा ली है।

एक चिथड़े-चिथड़े बनी हुई गन्दी बदबूदार कथरी, एक टीन का मग्गा और एक झोला। इतनी भर की गिरस्ती है उसकी।

कुछ देर के बाद उस आदमी की नींद टूटी। वह उठ कर बैठ गया। बहुत देर तक वह आदमी अरुणांशु को देखता रहा। फिर एक समय न जाने क्या सोच कर थोड़ा-थोड़ा करके उसकी ओर वह बढ़ आया। अरुणांशु

वीभत्स रूप और आकृति देखकर उसने सोचा कि अरुणांशु भी उसी की तरह रोगग्रस्त है, पूछा, तेरी भी क्या मुझ जैसी हालत है ?

न जाने क्यों अरुणांशु ने जवाब दिया, हाँ।

धीरे-धीरे दोनों में काफी मेल भी हो गया।

किसी समय उस आदमी ने पूछा, खाओगे कुछ ?

अरुणांशु ने कहा, खाऊँगा।

एक भुने हुए भुट्टे का आधा उस कोढ़ी ने अरुणांशु को खाने को दिया। और अरुणांशु उसे बिना किसी हिचक के चबाने लगा।

लेकिन तीन दिन की भूख उससे कहाँ मिटती।

दिन बीत गया, शाम घिर आयी। उसके बाद रात।

रात को भूख की तड़प बरदाश्त न कर सकने से अरुणांशु फिर उठकर खड़ा हो गया।

उसे उठते हुए देखकर उस आदमी ने पूछा, कहाँ जा रहा है रे ?

अरुणांशु ने कोई जवाब नहीं दिया। उठ कर रास्ते की ओर चल पड़ा।

पेट में भूख की आग भड़क उठी थी।

अब वह भीख नहीं माँगेगा।

किसी के भी सामने हाथ नहीं पसारेगा। वह समझ गया है कि किसी के सामने कुछ माँगना बेकार है। कोई भी कुछ नहीं देगा।

अब वह छीन लेगा। पेट की भूख सही नहीं जाती।

चलते-चलते छोटे से एक रास्ते के नुक्कड़ पर हलवाई की दुकान के सामने आकर अरुणांशु खड़ा हो गया।

रात का बिक्री-बट्टा शायद खत्म हो गया हो, दुकानदार भीतर बैठकर रोकड़ मिला रहा था।

एक छोकरा-सा नौकर दुकान बन्द करने से पहले सब कुछ तरतीब से

संजो-समेट रहा था।

अरुणांशु सामने आकर खड़ा हो गया।

अजी सुनते हो।

कौन ? अरुणांशु की पुकार पर उसने पलटकर देखा और अरुणांशु का भयंकर कुरूप चेहरा और दानव जैसा कद-काठ देखकर ही वह मानों सिहर उठा। अपने अनजाने ही उसके मुख से एक अर्धस्फुट चीख निकल आयी।

डरो मत। मैं भी आदमी हूँ। अरुणांशु ने झटपट कह डाला।

उधर भीतर से दुकानदार की भी आवाज सुनाई पड़ी, कौन है रे मधु ?

कहते-कहते दुकानदार गद्दी छोड़कर बाहर निकल आया और अरुणांशु को देखकर लगा कि जरा डर ही गया। रूखी आवाज में उसने पूछा, क्या चाहिए ? कौन—कौन है तू ?

बहुत भूख लगी है, आज तीन दिन से कुछ खाया नहीं। कृपया मुझे कुछ खाने को दीजिए।

नहीं। नहीं—दुकान बन्द हो गयी है अब कुछ नहीं दे सकता—जाओ। दुकान के मालिक ने रूखे स्वर में कहा।

फिर भी अरुणांशु ने आखिरी कोशिश की, कृपया मुझे कुछ खाने को दीजिए, सच बता रहा हूँ, यकीन मानिए, बहुत भूख लगी है मुझे। तीन दिन से कुछ भी खाया नहीं।

पैसा है ?

नहीं।

पैसा नहीं है तो क्या यह दानसत्र है। जा बे। न जाने कहाँ से—। झटपट दुकान का दरवाजा बन्द करने को होकर दुकानदार ने उस छोकरे से कहा, मुँह बाये देख क्या रहा है—बन्द कर न दरवाजा।

दया करें। फिर अरुणांशु ने कहा।

नहीं। नहीं—यहाँ कुछ नहीं मिलेगा। भाग जा।

नहीं देंगे। ये लोग नहीं देंगे। सिर धुनने पर भी ये लोग एक दाना नहीं देंगे। बेकार है। इनके सामने दया की भीख माँगना बेकार है।

चोर ! चोर !—

भागते-भागते एक चौड़ी सी गली में घुसते ही एक नीची सी चारदिवारी देखकर अरुणांशु ने एक छलांग में दीवार फांद ली और भीतर जा पहुँचा।

एक बगीचे वाली कोठी थी।

अँधेरे बाग में बड़ा सा आम का दरख्त देख अरुणांशु उसी पर चढ़ कर बैठ गया।

इधर पीछा करने वालों मे एक ने अरुणांशु को दीवार फांदते देखा था। वे आकर उतनी देर मे फाटक के सामने खड़े होकर शोरगुल मचाने लग गये। चोर-चोर।—घर मे चोर घुसा है।

कोठी के नेमप्लेट पर लिखा था, डा० सुहृद सरकार, एम० डी०। अरुणांशु को पता भी नही लगा कि इन तीन दिनों से शहर मे जिसकी तलाश मे वह दर-दर भटक रहा है—भगाये जाकर अपने ही अनजाने सयोग से उसी डा० सुहृद सरकार की कोठी मे वह घुस पड़ा है।

डाक्टर सरकार इतनी रात गये भी सोने नही गया है।

रोज की तरह आज भी दुमंजिले पर अपने शयन-कक्ष मे बैठे वह एक डाक्टरी किताब पढ़ रहा था।

काफी लोगो का शोरगुल और हो-हल्ला सुनकर खिड़की खोलकर उसके सामने वह खड़ा हो गया।

उसी की कोठी के गेट के सामने लोगों का एक हुजूम हो हल्ला मचा रहा है।

मामला क्या है ? इतने लोग क्यों ?

कौतूहली हो डाक्टर ने चिल्लाकर कहा, कौन हो तुम लोग ? क्या बात है ?

भीड़ में से किसी ने डाक्टर सरकार की आवाज सुनकर चिल्ला कर कहा,

...व, जरा नीचे उतर आइए न। आपके बाग में चोर घुसा है।

...र।

...ी हाँ। चोर—। उतर आइए। आपके बाग में छिपा है। विस्मित ...र सरकार झटपट दरवाजा खोलकर नीचे उतर आया और गेट के सामने ...र खड़ा हो गया, चोर कहाँ है ?

आपके बाग में दीवार फाँदकर घुसा है और छिप गया है।

लाल पगड़ी पहने पहरेदार भी आया : वह चोट्टा आपके बगीचे में छिपा ... डागडर साहब।

डाक्टर सरकार सामने-सामने चले और पीछे बाकी सब लोग शोर मचाते हुए बाग की ओर चल पड़े।

इसी बीच शोरगुल सुनकर नौकर मधु भी उठकर आ गया था।

डाक्टर सरकार ने उसकी ओर देखकर उसे लाइब्रेरी के कमरे से टार्च ले आने के लिए कहा।

डाक्टर की कोठी की चारदिवारी के अन्दर फूल और फल के छोटे-बड़े बहुत सारे दरख्त हैं। अँधेरे में उस बाग की किस जगह पर चोर छिपा है वह भी ढूंढ़ निकालना मुश्किल काम है।

लेकिन उन लोगों की लगन और धीरज की जरूर तारीफ करनी पड़ेगी। वे सभी सारे बगीचे को उलट-पुलटकर देखने लग गये।

डाक्टर खुद भी हाथ की टार्च जलाकर तलाश करने लगा।

तुम लोगों ने ठीक देखा है कि चोर इस बाग में आ घुसा है ? डाक्टर ... एक से पूछा।

जी, डाक्टर साहब ! किसी एक ने काफी जोर गले से कहा।

उस समय अरुणांशु पेड़ की डाली पर बैठा सोच रहा था कि अब ... करना चाहिए। पेड़ पर से वह सब कुछ देख रहा था।

इस तरह दर-दर भटकने और सड़कों पर भूखे-प्यासे होकर आ... ढंग से फिरने की बजाय शायद इनके हाथ अपने को पकड़वा देना बेहत...

सचमुच, अब इस तरह से उससे आगे नहीं चला जाता।

तीन दिन का इतिहास उसे तीन युग का इतिहास जैसा लग रहा था।

अचानक डाक्टर ने हाथ के टार्च से ढूंढ़ते-ढूंढ़ते उस दरख्त पर रोशनी फेंकी जिसकी डाली पर अरुणांशु छिपा बैठा था।

सिर्फ डाक्टर सरकार की ही नहीं एक और आदमी की नजर भी उधर पड़ी।

वह ! वह है साला पेड़ की डाली पर बैठा हुआ।

सभी लोग फिर से जोश में हल्ला मचाने लग गये।

उतर ! साले, उतर !

झटपट उतर आ वे ससुरे !

विभिन्न प्रकार के मधुर सम्भाषण लगभग एक ही साथ अरुणांशु के प्रति किये जाने लगे।

लेकिन डाक्टर सरकार ने सब को रोका, ठहरो भी तुम लोग ! उसे उतर आने दो।

किसी ने विरोध किया, साला भाग जायेगा।

नहीं। भागेगा कैसे—इतने सारे लोग यहाँ हैं।

ऐ, कौन हो तुम, पेड़ से उतर आओ। कोई डर नहीं। आओ, उतर आओ।

तीन दिन में अरुणांशु को यही पहली दफा एक स्वर ऐसा सुनाई पड़ा जिसमें नफरत, अवहेलना और बेरहमी नहीं है।

उस आवाज में ऐसा कुछ था जिसके सहारे इतने लोगों की वहशी पंजों के बीच भी पैर बढ़ाये जा सकते हैं।

अजी कौन हो तुम ? उतर आओ न।

फिर डाक्टर सरकार ने अरुणांशु को सम्बोधित कर कहा।

इस बार क्षणभर में अपनी सारी झिझक झटकार कर अरुणांशु झप्प से बिल्कुल डाक्टर सरकार के पैरों के सामने कूद पड़ा, और बोला, डाक्टर साहब, यकीन मानिए मैं चोर नहीं हूँ।

अरुणांशु का दानव जैसा चेहरा-मुहरा देखकर डा० सरकार आश्चर्य-

गया । अचानक ही सकपका सा गया ।
...न सभी लोग एक आवाज में चिल्ला उठे, साला चोर है । डाकू है ।
...सी ने कहा, देख रहे हो, कैसी खौफनाक शक्ल-सूरत है—साला डाकू है,
...कातिल डाकू है ।
...हीं-नहीं, मैं चोर या डाकू नहीं हूँ । मैं—
दुकानदार ने अब आगे बढ़कर कहा, साले, चोर नहीं हो ? मेरी मिठाइयाँ
... कर नहीं खाया तूने ?
अरुणांशु फिर बोला, डाक्टर जी, आप यकीन कीजिए, मैं सचमुच चोर
...हीं हूँ, मेरे पास एक भी पैसा नहीं था, तीन दिन तीन रात मैंने कुछ खाया
...नहीं, दुकानदार से मैंने कुछ खाने को माँगा, उसने नहीं दिया तो—
मार ! मार साले को—
फिर सभी लोग चिल्ला उठे ।
इस बार डाक्टर सरकार ने सबको रोकते हुए कहा, आप लोग सभी चु...
हो जाइए । वह क्या कहता है सुना जाय । फिर अरुणांशु की ओर देखकर कह...
क्या मामला है बताना तो जरा । कौन हो तुम, कहाँ से आ रहे हो ?
जी, डाक्टर जी, मैं आज तीन दिन हुए अनाथ आश्रम से इस शहर में
आकर डा० सुहृद सरकार को ढूंढ़ रहा हूँ—
किसे ? किसे ढूंढ़ रहे हो बताओ ? विस्मित डा० सरकार ने पूछा ।
स्वामी जी ने कहा था—
डा० सुहृद सरकार ने आश्चर्य से पूछा, स्वामी जी ? कौन स्वामी जी ?
स्वामी विरजानन्द जी महाराज ने एक चिट्ठी देकर कहा था, डा० स...
कार के पास जाने के लिए—उन्होंने कहा था, वही मेरा परिचय जानते ...
आज तीन दिन से उनकी तलाश में इस शहर में आया हूँ लेकिन किसी...
कोई सहायता नहीं मिली, कोई भी—
डाक्टर ने अब कहा, देखें, कहाँ है वह चिट्ठी ।
अरुणांशु ने कुरते के जेब से महाराज का वह लिफाफे में बन्द पत्र
हाथों से डाक्टर सरकार के हाथों में दिया ।

डाक्टर ने टार्च की रोशनी में चिट्ठी को खोलकर पढ़ा।

उत्तेजना से उसके दोनों हाथ काँप रहे हैं। यह भी क्या सम्भव है?

यह तो आश्चर्य है। आश्चर्य। लेकिन नहीं, यह तो सचमुच उन्हीं का पत्र है।

चिट्ठी पढ़ना खत्म कर अरुणांशु की ओर देख शायद एक लम्बी साँस उसके सीने को कँपाकर निकल गयी। इतनी देर में वह बोला, तुम्हारा ही नाम अरुणांशु है?

जी।

यह चिट्ठी मेरे ही नाम है, मैं ही डा० सुहृद सरकार हूँ।

आप? आप डाक्टर जी?

हाँ।

फिर सभी लोगों की ओर देखते हुए उन्होंने कहा, यह चोर नहीं है कान-स्टेबल, यह हमारा आदमी है।

कानस्टेबल को मामला कुछ समझ में नहीं आया, बोला, आपका आदमी?

हाँ। बचपन में देखा था, इसीलिए पहचान नहीं सका।

हुजूम में से एक ने विरोध किया, नहीं डाक्टर साहब, साला चोर है, देखते नहीं कैसी शक्ल है इसकी।

नहीं। यह चोर नहीं है।

दुकानदार ने कहा, बाबू, मेरी इतनी मिठाइयाँ इसने खा डाली हैं।

तुम मेरे साथ आओ, जितनी कीमत हो मैं चुका दूँगा।

अच्छा, अब आप लोग तशरीफ ले जा सकते हैं।

फिर अरुणांशु की ओर पलटकर उन्होंने कहा, आओ अरुणांशु। चलो, घर में चलो।

इतना बड़ा तमाशा इस ढंग से बरबाद हो जाना किसी को अच्छा नहीं लगा। वे लोग आपस में बतियाते हुए तरह-तरह की टीका-टिप्पणी करते चले गये।

लेकिन अरुणांशु खड़ा ही रहा।

डा० सरकार ने अब आगे बढ़कर उसका हाथ पकड़कर हलके से खींचकर स्नेहभरे स्वर में कहा, आओ !

घर

डा० सरकार का वह स्नेहभरा स्वर सुनकर अरुणांशु ने डाक्टर की ओर आँखें उठाकर पूरी नजर देखा ।

आओ, चलो अरुणांशु ।

कहाँ ?

क्यों, मेरे घर में। आओ ।

डा० सरकार ने अरुणांशु का एक हाथ पकड़कर स्नेह से आकर्षित कर फिर पुकारा। इस बार धीरे-धीरे डाक्टर के पीछे-पीछे अरुणांशु चलने लगा।

चलते-चलते अरुणांशु ने बहुत दिनों के बाद ऊपर की ओर देखा ।

आकाश में सप्तर्षिमंडल जगमगा रहा है ।

उसे लगा, उनमें जो सबसे उज्ज्वल तारा है वही मानों उसे दिलासा दे रहा है, डरो मत अंशु, जाओ उनके साथ ।

अरुणांशु फिर चलने लगा ।

घर में प्रवेश कर डा० सरकार अरुणांशु को साथ लिये जीने से सीधे दुमंजिले पर अपने स्टडीरूम में दाखिल हुआ। नौकर मधु भी साथ-साथ आया था।

नौकर को कुछ खाना लाने के लिए भेजकर डाक्टर ने अरुणांशु को एक कुर्सी दिखाकर कहा, बैठो अरुणांशु ।

अरुणांशु कुर्सी पर बैठ गया ।

तुमने मुझे बहुत तलाशा है अरुणांशु, है न ?

जी हाँ। ये तीन दिन—

आश्रम से तुमने मुझे एक चिट्ठी क्यों नहीं लिख दी, मैं खुद ही जाकर तुम्हें ले आता।

चिट्ठी दूँ, लेकिन चिट्ठी भेजने लायक मन की दशा उस वक्त नहीं थी डाक्टर जी। महाराज के देहान्त से—

यह क्या। महाराज नहीं रहे?

नहीं।

दीर्घ पच्चीस वर्ष पूर्व की वह आँधी पानी वाली रात की बातें ही डाक्टर के मन को बारबार हिलोर रही थी।

राजीव का वह बदसूरत कदाकार मासपिंड सा जड़ शिशु आज इस वीभत्स दानव में परिणत हुआ है।

पच्चीस वर्ष।

राजीव ने एक बार भी इस अभागे के बारे में पूछताछ नहीं की।

लेकिन वह भी तो महाराज के हाथों में सौंप आया था और उसके बाद एक बार भी वहाँ गया नहीं।

वह भी तो उसे भूल गया था।

बीच के इस लम्बे अरसे में दो-एक खत उसने बेशक स्वामी जी को लिखे हैं लेकिन एक बार भी अरुणाशु के बारे में पता लगाने वहाँ गया नहीं।

क्या वह इस बात से इनकार कर सकता है कि वह अरुणाशु को भूल गया थे। योरोप से लौटने के बाद ये चन्द वर्ष अपनी इकलौती मातृहीना बेटी मीली, अपनी प्रैक्टिस और अध्ययन को लेकर ही वह इतना व्यस्त रहा कि एक बार के लिए भी अरुणाशु उसे याद नहीं आया।

राजीव के साथ भी उसने इन वर्षों में कोई सम्बन्ध नहीं रखा, हालांकि राजीव का दूसरा बेटा यहाँ बारबार आता-जाता रहता है और उसी याता-यात के कारण उसकी बेटी मीली और राजीव का बेटा सुवीर में एक अन्तरंगता आ गयी थी। यहाँ तक कि कमला और राजीव उसी सिलसिले में

बीच-बीच में यहाँ आये हैं और उस समय उनसे भी डाक्टर की मुलाकात नहीं हुई है। लेकिन नहीं, उस समय भी तो डाक्टर को इस अभागे की याद नहीं आयी।

डाक्टर कमरे में चहलकदमी कर रहा था। एक प्लेट में कुछ खाने का सामान लिये नौकर मधु कमरे में दाखिल हुआ।

बाबू।

लाया। रख दे उस मेज पर।

डाक्टर ने अरुणांशु से कहा, खा लो अरुणांशु।

नौकर की ओर पलट कर उसने कहा, नीचे मेरे लाइब्रेरी वाले कमरे के बगल वाले कमरे में बिस्तर बिछा दे मधु। यह बाबू उसी कमरे में रहेंगे।

मधु चला गया।

अरुणांशु ने परम सन्तोष से भोजन किया।

सारा शरीर उसका तरोताजा हो गया।

डाक्टर ने पूछा, पेट भरा अरुणांशु? और कुछ खाओगे?

नहीं। अरुणांशु ने सिर हिलाया।

थोड़ी देर बाद ही नौकर सब ठीक-ठाक कर कमरे में आया।

डाक्टर ने पूछा, सब इन्तजाम कर दिया?

जी हाँ।

चलो अरुणांशु, आराम करोगे, चलो। तुम थके हुए हो, रात भर सो लो, फिर कल सवेरे तुम्हारे साथ बातचीत होगी, ठीक है न?

दोनों दुमंजिले से नीचे उतरकर निश्चित कमरे में प्रवेश किये। मझोले आकार का कमरा। असबाब बहुत मामूली। दोनों ओर मेज पर कुछ डाक्टरी औजार-आले सजाये रखे हैं। एक किनारे तख्त पर बिस्तर लगाया गया है।

अरुणांशु की ओर देखकर इस बार डाक्टर ने कहा, इसी कमरे में तुम

रहोगे अरुणांशु। बगल के कमरे में ही मेरी लाइब्रेरी है—जो पढना चाहते हो—सभी किस्म की किताबें तुम्हें वहाँ मिलेंगी। कोई झिझक या शर्म न करना। स्वामी जी ने जब तुम्हें मेरे ही पास आने को बताया है तो तुम मेरे ही पास रहोगे।

डाक्टर सरकार के मधुर आचरण से अरुणांशु सचमुच विस्मित हो गया था। उसकी आँखों में आँसू आ गये। बोला, आपकी दया का यह ऋण मैं कभी नही चुका सकता डाक्टर जी। अब समझ पा रहा हूँ कि यथार्थ में भगवान हैं।

डाक्टर ने हँसकर कहा, भगवान! ऋण! तुम नही जानते कि एक तरह से तुम मेरी सन्तान से बढकर हो। धरती छूने से पहले मेरे इन हाथों को ही तुमने सबसे पहले छुआ था, फिर यही हाथ तुम्हे पृथ्वी के स्वर्ग से अज्ञातवास मे रख आये थे। एक ठंडी साँस को दबाकर फिर डाक्टर ने कहा, खैर—वह बात रहने दो। रात काफी हो गयी है। तुम थके हो, अब लेट जाओ—कल तुम्हारी सारी बातें सुनूँगा। क्यो?

इसके बाद डाक्टर सरकार कमरे से निकलने वाला ही था कि सारी द्विधा-संकोच को त्याग कर अरुणांशु ने पुकारा—डाक्टर जी।

डाक्टर सरकार अरुणांशु की पुकार पर घूमकर खड़ा हो गया; पूछा, मुझसे कुछ कहोगे?

जी—यानी—अरुणांशु आनाकानी करने लगा। तय नहीं कर पा रहा था कि अपना वक्तव्य वह किस तरह शुरू करे। जिस कारण वह आश्रम छोड़कर चला आया है वही बात तो अभी तक वह जान नहीं सका।

बोलो। क्या बताना चाहते हो? शर्म की कोई बात नही, बताओ—डाक्टर ने अरुणांशु की ओर देखते हुए स्नेह भरे स्वर मे कहा।

थोड़ा सा हिचकने और आनाकानी करने के बाद आखिर तक स्पष्ट स्वर में अरुणांशु कहने लगा, जिस कारण मैं स्वामी जी का आश्रम छोड़ शहर आकर आपको तीन दिन से हर कहीं ढूंढ़ता रहा हूँ। स्वामी जी ने मृत्यु से पहले कहा था, मेरे माता-पिता हैं—मेरा समाज मे परिचय है।

अरुणांशु की अन्तिम बात पर डाक्टर में एक अद्भुत परिवर्तन दिखाई

उसने रूखे कठोर स्वर में कहा, नहीं ।

नहीं ?—विस्मित अरुणांशु ने डाक्टर की तरफ देखा ।

हाँ—जो कुछ सुना है सब झूठ है ! झूठ । झूठ—

झूठ ?

हाँ झूठ । तुम्हारा कोई भी नहीं है—माँ-बाप समाज कुछ भी नहीं है । हीं । जन्म के क्षण से ही तुम परित्यक्त उपेक्षित हो । कोई नहीं है तुम्हारा इस धरती पर, तुम्हारा कोई नहीं है । तुम अकेला, बिल्कुल अकेला हो । अकेला तुम—अकेला । समझे—अकेला । नाम-गोत्रहीन अज्ञात —

मेरा माँ-बाप, समाज, कोई नहीं । लेकिन स्वामी जी ने जो मृत्यु से पहले मुझसे कहा था—अरुणांशु फिर रुक गया । कुछ भी मानों उसकी समझ में नहीं आ रहा था ।

डाक्टर ने कहा, हाँ, पच्चीस साल पहले एक आँधी-पानी वाली रात को तुम्हारा जन्म हुआ था । फिर आकाश से गिरे मृत नक्षत्र जैसे ही थोड़ी सी ज्योति बिखेरकर ही तुम बुझ गये हो । मृत उल्का की मुट्ठी भर राख से अधिक तुम्हारा कोई अस्तित्व नहीं है । समाज मे कोई भी परिचय नहीं ।

तो क्या ? तो क्या वाकई स्वामी जी ने जो कुछ कहा था सब झूठ है? स
भ्रम है —मेरा कोई भी नहीं है। मैं किसी का भी नहीं हूँ ।

दृढ़ स्वर में डाक्टर ने अब कहा, हाँ, भ्रम है । बेशक भ्रम है । रायबहा
राजीवचन्द्र घोष ने तुम्हारे पिता होने पर भी तुम्हारे जन्मलग्न में ही उन
तुमको अस्वीकार कर दिया है । उनके जीवनाकाश में आज तुम उल्का
ही मृत हो । थोड़ी देर पहले तुमने कहा था न कि तुम लोगों के वह भ
जीवन्त हैं । वे बेशक होंगे । और तुम्हारे बाप के प्रति वे बड़े सदय
रुपया-पैसा, गाड़ी-कोठी, सुनहरी गिरस्ती, तुम्हारा एक भाई और ए
भी हैं लेकिन उस गिरस्ती में आज तुम्हारा स्थान कहाँ है ? तुम वहाँ
तुम उनके कौन हो ? कोई नहीं । कोई भी तो नहीं ।

क्षणभर में अरुणांशु डाक्टर सरकार की आखिरी बातों से मा

वित हो उठा, आवेश से बोल पड़ा, हैं वे ? तो सचमुच मेरे माँ-बाप हैं ! मेरा एक भाई ! मेरी एक बहन—

हाँ । हाँ—है क्यों नही ।

मेरी माँ । बाबू—भाई-बहन । क्यों डाक्टर जी, वे—वे देखने में कैसे हैं ? वे—वे देखने मे बेशक बड़े सुन्दर होंगे ।

हाँ, सुन्दर तो हैं ही—विशेष कर लोग जिसे सुन्दर कहते हैं—कम से कम बाहर से तो वैसे ही दिखायी पडते हैं ।

अपने को मानो अरुणांशु रोक नही पा रहा था, अधीर और व्याकुल कंठ से पूछ बैठा, वे कहां रहते हैं डाक्टर जी ? इसी—क्या इसी शहर में ?—उनका पता—

हाँ । इसी शहर में पी-३२ बालीगंज प्लेस में वे रहते हैं ।

क्यों डाक्टर जी, स्वामी जी से ही सुना था कि मेरे—मेरे इस बदसूरत चेहरे के लिए ही मेरे पिता ने मुझे जन्म के क्षण त्याग दिया था। लेकिन माँ ? मेरी माँ ?

माँ ? तुम्हारी माँ ? वे कुछ भी नही जानती हैं, वे जानती हैं कि उनकी पहली सन्तान पैदा होते ही मर गयी है ।

मैं—मैं जाऊँगा— । मैं जाऊँगा डाक्टर जी ।

जाओगे । कहाँ जाओगे तुम ? डाक्टर अरुणांशु की बातों से चौंक पड़ा ।

जाऊँगा देखने, हाँ एक बार, सिर्फ एक बार मैं अपनी माँ को देखना चाहता हूँ डाक्टर जी । माँ, मेरी माँ, मैं उससे जाकर कहूँगा, दोनों चरणों मे लिपटकर कहूँगा, माँ, आँखें खोलकर देखो, देखो मैं मरा नहीं। तुम—तुम जो जानती हो या जो तुमने सुना है आज तक भी वह गलत है । गलत !

डाक्टर ने अब प्रबल रूप से बाधा देकर कहा, नहीं। मत जाना अरुणांशु—वे तुम्हें नही चाहते ।—वे तुम्हे अपनायेंगे नहीं । सभी लोग जानते हैं रायबहादुर की पहली सन्तान—तुम—मृत हो—बहुत पहले जन्म के क्षण मे ही मृत हो।

फिर भी—फिर भी मुझे एक बार उनके पास जाना पड़ेगा डाक्टर

आप नहीं समझेंगे। नहीं समझेंगे। होश होने से लेकर यही जानता रहा कि मेरा कोई नहीं है—मैं नाम-गोत्रशून्य अनाथ हूँ। दूसरे की दया, दूसरे के स्नेह से पाला-पोसा गया हूँ। लेकिन सबसे पहली बार जिस दिन स्वामी जी के मुंह सुना, मेरी माँ हैं, मेरे बाबू हैं, मैं अनाथ नहीं हूँ—उसके बाद से ये कई दिन मेरे हर लमहे मैं उन्हीं को ढूंढ़ता फिर रहा हूँ। फिर उसका गला भर आया। केवल मन में निःशब्द आर्त वेदना से ये बातें उच्चारित होती रहीं, एकबार। सिर्फ एकबार मैं अपनी माँ को देखना चाहता हूँ। —एक—सिर्फ एक सवाल। क्यों? मेरे जन्मक्षण में ही तुम लोगों ने मुझे क्यों विसर्जित कर दिया माँ?—एक बूंद। छाती के एक बूंद दूध से भी मुझे क्यों वंचित किया। —जड़ मांस-पिंड का एक लोथड़ा—कौन सा? कौन सा ऐसा अपराध किया था उसने?—बताओ? बताओ—बताओ? अरुणांशु ने दोनों हाथों से मुँह ढाँप लिया।

डाक्टर ने आगे बढ़कर उसके सिर पर हाथ रखकर स्नेह-भरे कंठ से कहा, हैव पेशेन्स माई बॉय। हैव करेज।

इतनी थकान, इतनी मेहनत, फिर भी रात भर में एकबार के लिए भी अरुणांशु पलक नहीं झपा सका।

उसके कानों में केवल ही पी-३२ बालीगंज प्लेस नम्बर ही शोर मचाता रहा।

यह पहले का निवास नहीं, यह राजीव की नयी कोठी थी।

पी-३२ बालीगंज प्लेस में रायबहादुर राजीव घोष की बहुत बड़ी इमारत है।

रायबहादुर राजीव चन्द्र घोष आज कलकत्ता शहर के एक विख्यात धनी, भाग्यवान व्यापारी हैं।

अपनी असामान्य लगन और निष्ठा से राजीव ने अपनी पैतृक सम्पत्ति कई गुना ज्यादा बढ़ा ली है।

उसकी गृहस्थी सुख और आनन्द से भरी गृहस्थी है।

उसके घर में उसकी दो सन्तानों की जननी उसकी प्रेममयी सुन्दरी स्त्री कमला है।

दो सन्तानों में बड़ा लड़का सुवीर है। और छोटी लड़की गोपा है।

सुवीर भी इस बीच व्यापार के क्षेत्र में काफी नाम कमा चुका है।

उम्र भी कितनी होगी सुवीर की, कुल तेईस साल।

नाटे कद का लेकिन सुदर्शन सुवीर अपनी असामान्य रूपलावण्यमयी माँ के रूपरंग पर आया था।

और कन्या गोपा भी सुन्दर न होने पर भी देखने में कोई बुरी नहीं।

लब्बेलुबाब यह कि इन दो सन्तानों में कोई भी रायबहादुर राजीव घोष जैसा बदसूरत नहीं है।

सुवीर या गोपा में किसी एक को देखने पर भी नहीं लगेगा कि वे राजीव की सन्तान हैं।

शक्ल-सूरत के लिहाज से इन दो सन्तानों में किसी का भी बाप के चेहरे से कोई मेल नहीं।

उम्र के साथ साथ राजीव के चेहरे में भी इन पच्चीस वर्षों में काफी परिवर्तन आ गया है।

सिर के बाल करीब-करीब सब पक गये हैं।

राजीव का शरीर और भी दुबला हो गया है।

और दुबला होने की वजह से राजीव आजकल और भी बदसूरत लगने लगा है।

चेहरा और आकृति में जवानी की दमक जितनी भी थी इस लम्बे अरसे में वह भी खत्म हो चुकी है।

उस दिन पुत्र सुवीर का जन्मदिन था।

हर साल पुत्र और कन्या के जन्मदिवस महासमारोह में उत्सव कर मनाये जाते हैं।

इस बार भी उसमें कोई त्रुटि नहीं है।

सवेरे ही गाड़ी पर सवार राजीव अपनी पत्नी और पुत्र-कन्या के साथ देवी जी के मन्दिर में पूजा चढ़ाने गया था।

ड्राइवर गाड़ी चला रहा है, काफी बड़ी पैकार्ड गाड़ी।

गाड़ी आकर गेट में प्रवेश करते ही सभी लोगों को दरवान अयोध्या सिंह का चिल्लाना सुनाई पड़ा।

ऐ कौन ? कौन है तू ?

पोर्टिको के पास ही शोर हो रहा है।

सुवीर और राजीव पहले ही गाड़ी से उतर पड़े।

कदाकार दानव सरीखे बहुत ही वीभत्स चेहरे वाले एक व्यक्ति को मकान में घुसकर चारों ओर सन्देहजनक रूप से ताक-झाँक करते देख, दरवान दूर से उस आदमी की ओर दौड़ पड़ा। आगन्तुक अरुणांशु के सिवा कोई दूसरा नहीं।

अलस्सुबह डाक्टर सरकार के जागने से पहले ही किसी से विना कुछ कहे अरुणांशु चुपके से अपने माँ-वाप की खोज में चला आया है।

उसके वदन पर आश्रम वाला गेरू रंग का गलावन्द कुरता और गेरू रंग की धोती।

नंगे पैर।

सिर के बाल रूखे, मुँह पर काँटे जैसी दाढ़ी।

पीड़न और अत्याचार, अनिद्रा और अनाहार से इन चन्द दिनों में ही अरुणांशु का चेहरा पहले से भी अधिक कदाकार और वीभत्स दीख रहा है। राजीव आगे बढ़कर अरुणांशु के सामने पहुँचते ही ठिठककर खड़ा हो गया और टकटकी लगाये उसके मुँह की ओर देखने लगा।

अचानक वगल से सुवीर का घृणामिश्रित स्वर सुन पड़ा, इस्स्, कितना खौफनाक चेहरा है ! कौन है यह ?

दरवान ने कहा, पता नहीं साहव, किधर से आ गया।

निकालो ! अभी भगा दो इसे।

इस बीच कमला अन्दर चली गयी थी। लेकिन गोपा कौतूहल से खड़ी

हो गयी थी।

साला चोर, चोर होगा साहब—दरबान ने कहा।

अभी मार के भगा दो कोठी से—

सुवीर ने हुक्म दिया।

लेकिन न जाने क्यों राजीव ने रोका—वह झट बोल पड़ा—नहीं-नहीं। अयोध्या सिंह मारना नहीं—ऐसे ही निकाल दो।

अरुणांशु राजीव के मुख की ओर एकटक देख रहा था—उसके पिता। यह लड़का उसका भाई है। कितना खूबसूरत है। अचानक फिर सुवीर की आवाज से अरुणांशु चौंक पड़ा, देखा डैडी, ये दरवान और नौकर-चाकर कितने वर्थलेस होते हैं। इस वक्त हम लोग न आ जाते तो यह आदमी घर ही में घुस पड़ा होता।

उस समय दरवान अरुणांशु को धकेलते हुए मकान के गेट से बाहर निकाले दे रहा था।

राजीव ने बेटे की बात का कोई जवाब नहीं दिया।

उसको उस शख्स की आँखें याद आ रही थीं।

उसकी निगाहें क्या थीं मानो सख्त प्यास से उसके मुख की ओर देखते हुए लेहन कर रही थीं।

न जाने क्यों राजीव के दिल में एक बेचैनी काँटे जैसी खटकती रही।

इधर उस समय ऊपर के एक सुसज्जित कक्ष में कमला चारों ओर की बेतरतीबी देखकर असन्तुष्ट हो खेद प्रकट कर रही थी—नहीं, इस घर में जो भी काम मैं न देखूँ वह होने का नहीं—मेहमानों के नामों की फर्द किधर गयी?

गोपा सदा से बड़ी चचल है और माँ-बाप की और भाई की दुलारी है।

गोपा माँ को एक सोफे पर बिठाती हुई बोली, इस सोफे पर जरा आराम से तो बैठ जाओ माँ। तुम हर काम में हड़बड़ी मचा देती हो—मन्दिर जाकर हड़बड़ी, घर में आकर हड़बड़ी—देखना सब ठीक किये देती हूँ। सोच मत करो। कहकर गोपा हँसने लगी।

कमला बेटी की हँसी देखकर बिगड़ गयी और बोली, क्या हर वक्त

हँसती रहती है तू गोपा। अभी तक तुम लोगों में किसी को फुर्सत नहीं मिली कि मीली का पता लगा लें होस्टल से—

गोपा पहले जैसे ही हँसती हुई माँ की बात का विरोध करने लगी, दादा रे दादा ! होगा-होगा। अभी हुआ जाता है—

कमला बोल पड़ी, हुआ तो जाता ही है सब कुछ। अभी तक सुवीर का कमरा तक ठीक तरह से सजाया नहीं जा सका। हो जायगा, हो जायगा, कब सब हो जायगा सूनूं। इधर देख रही हूं कि सारे प्रजेंटेशन कमरे भर में बिखरे पड़े हैं—पता नहीं, कब क्या होगा ? इधर वक्त भी नहीं रहा।

बोलो, कौन सा काम पहले करूँ, मीली को टेलीफोन करूँ या भैया का कमरा सजाऊँ ?

ऐसे ही समय सुवीर कमरे में आया। और सुवीर को देखते ही गोपा भैया के मुख की ओर देखकर बोल पड़ी, यह रहे भैया। इट इज योर ड्यूटी, नॉट माइन—माँ बता रही थी कि मीली को अभी एक फोन कर—

सुवीर ने बहन को चिढ़ाते हुए कहा, तू चुप भी रह निगोड़ी। माँ, मैंने मीली को फोन किया था—उसने कहा, इम्तहान का प्रेशर है, इस समय डा० सरकार ने भी उसे कहीं निकलने को मना कर दिया है—

गोपा नीची आवाज में बगल से दूसरों के अनसुने बोल पड़ी, तब तो बेशक उसने फोन के मार्फत भैया की साल-गिरह की बधाई दे ही दी होगी। है न भैया।

दमित हँसी से गोपा का चेहरा खिल उठा।

सुवीर भी बहन को चिढ़ाते हुए बोल पड़ा, है न भैया।

भाई-बहन में ऐसा झगड़ा और छेड़-छाड़ लगा ही रहता है मानों तरे-ऊपर के भाई-बहन हों।

कमला ने रोका, लो, फिर दोनों झगड़ने लग गये—झगड़ती ही रहेगी या जो मैंने कहा वह करेगी—

दादा रे दादा। जा रही हूँ भई, जा रही हूँ।

कहते-कहते गोपा कमरे से निकलती हुई भाई को बुलाने लगी, आओ

न भैया।

सुवीर बहन के पीछे चल पड़ा।

राजीव आकर कमरे में दाखिल हुआ, क्या बात है, फिर क्या हो गया ? फिर शोरगुल क्यों मचाने लग गयी ?

कमला पति की बातों पर नाराज हो गयी और बोली, चिल्लाती क्या यूं ही हूं ? तुम्हारे घर में अगर किसी को तनिक भी होश हो—दिन दोपहर में ढलने वाला है अभी तक साज-सजावट ही नहीं खत्म हुई। थोड़ी देर बाद ही गेस्ट आने लग जायेंगे। गुमाश्ता जी से कहा था बाजार से सौदा लाने को—तो वह गये हैं और लौटने का नाम नहीं।

कमला की बात खत्म होते न होते वृद्ध गुमाश्ता जी कमरे में प्रवेश किये। उनको देखकर कमला ने पूछा, क्या ? सौदा ले आये ?

जी, माँ जी, सभी कुछ ले आया हूँ, भेटकी मछली तो आधा मन ले आया हूँ लेकिन गलदा झींगा कितना लाना होगा यह तो आपने बताया नहीं था—

गुमाश्ते की बात पर अब कमला झुँझलाते स्वर में बोली, हर मामला आप लोगों को बतला देना पड़ेगा—यह भी अगर आप लोग अक्ल लड़ाकर न कर सकें गुमाश्ता जी—तो मैं अकेली कितनी और सम्भालूं। सुवीर के इतने सारे जन्मदिन मनाये गये—और हर बार आप ही तो सौदा करते आये हैं। फिर भी आज आपको बता देना पड़ेगा कि गलदा झींगा कितना लाया जायेगा—। जाइए। जाइए। सब कुछ मेरे अकेले का ही—

राजीव ने झटपट मामले का हल रख दिया, जाओ प्रफुल्ल, जाकर हिसाब लगाकर मछली लेते आओ—दो-पाँच सेर ज्यादा ही लेते आना—

जी। जाता हूँ—

वृद्ध गुमाश्ता जी सिर खुजलाते हुए चले गये। कमला फिर झुँझलाहट भरे स्वर में कहने लगी, वाकई मेरा ही मरण है। अगली बार से यह हँगामा करूँगी ही नहीं।

राजीव अपनी बीवी को भलीभाँति जानता है, इसलिए उसकी बात पर कोई जवाब न देकर मन्द-मन्द मुस्कराता रहा।

६

कमला पति की मुस्कान से खीझ कर बोली, तुम हँस रहे हो ?

तो क्या करूँ बताओ। आँधी आने से कमरे में अगंला चढ़ाये बैठे रहना ही अक्लमन्दी है। राजीव ने जवाब दिया।

कमला बोली, ऐसा तो कहोगे ही। लड़का मानों मेरे अकेले का है। खैर, इस बार भले-भले निबट जाने दो। इसके बाद ही दूसरे प्रसंग पर चली गयी। सुना होगा तुमने, मीली शायद नहीं आ रही है। लेकिन हाँ, तुमने सुहृद लाला को फोन किया था ?

राजीव ने गंभीर बेलाग स्वर में जवाब दिया, हाँ, आशीर्वाद भेजा है। हाँ —वही एक ही जवाब। मैं जानता था वह नहीं आयगा फिर भी तुम बार-बार अनुरोध करती हो तो इस बार भी कहा था।

कमला बोली, अजीब बात है यह लाला की। सुवीर और गोपा के इतने जन्मदिन मनाये गये—एक बार भी नहीं आये। तुमने कहा, मैंने कहा, फिर भी—

राजीव ने कहा, पच्चीस साल पहले आँधी-पानी वाली उस रात को जो मेरे मकान से गया तो दूसरी बार मेरे घर पर कदम नहीं रखा, इसीलिए तो कभी-कभी मुझे लगता है शायद—शायद आखिर तक हमारे सुवीर के हाथों में अपनी बेटी मीली को सौंपने में—

कमला ने पति की बातों का प्रतिवाद किया, तुम भी क्या कहते हो ? पाँच साल से वाग्दान हो चुका है—मीली के साथ सुवीर का ब्याह होगा। मैंने खुद देवर जी से वचन ले रखा है।

राजीव का सीना झकझोरती एक ठंडी साँस निकल आयी। बोला, वाग्दान। तुम उसे नहीं पहचानती हो कमला—वह मेरा बचपन का दोस्त है, मैं उसे पहचानता हूँ— अन्याय को उसने कभी क्षमा नहीं किया। एक ओर उसका सत्य है तो दूसरी ओर जीवन का सर्वस्व।

कमला बोली, अन्याय, अन्याय। पता नहीं ऐसा कौन-सा अन्याय हो गया था कि देवर जी ने हम लोगों को हमेशा के लिए त्याग दिया ? इसके अलावा क्या पच्चीस साल तक उसका सिलसिला चलता रहेगा ? यार-दोस्तों में मन-

मुटाव, गलतफहमी, बहस-मुबाहसा होते ही रहते हैं। लेकिन इसलिए—

राजीव ने कहा, मामूली गलतफहमी या तर-तकरार की बात नहीं है, कमला। इसीलिए कह रहा था कि सिर्फ पच्चीस वर्ष ही नहीं कमला—शायद जितने दिन जिन्दा रहूँगा उतने दिन ही यह सिलसिला जारी रहेगा।

कमला ने कहा, तो कौन—कौन सा ऐसा संगीन मामला था बता सकते हो?

राजीव ने कहा, बताऊँगा—एक दिन सभी को बताना पड़ेगा। अतीत के एक दुर्योग की रात में जीवन का जो पन्ना आँधी के झोंके में उड़ गया है, फिर—फिर शायद एक दिन उसे ढूँढ निकालना होगा। पच्चीस वर्ष से एक विभीषिका की तरह, एक दुःस्वप्न की तरह जो स्मृति मुझे खदेड़े फिर रही है—सुहृद ने मुझे क्षणभर के लिए भी भुलाने नहीं दिया। और सिर्फ वही क्यों—मैं ही क्या भूल सका? अन्त की ओर राजीव की बातें अस्पष्ट दिलतोड़ खेदोक्ति जैसी ही सुनाई पड़ी। लगा, जैसे एक-एक शब्द राजीव की पसलियों को चूर-चूर करता दीर्घश्वास सा निसरा आ रहा है। राजीव के सारे चेहरे पर सहसा करुण व्यथा और पश्चात्ताप की काली छाया उतर आयी है।

कमला अजीब हैरानी से पति के मुँह की ओर देखती रही। शादी के बाद से इतनी लम्बी अवधि में कमला अपने पति को बराबर ही विशेष गभीर प्रकृति का पाती रही, इधर चन्द वर्षों से मानो वे अधिक संयत और गभीर लगने लगे। इस प्रकार की चंचलता अपने पति में उसने इससे पूर्व और कभी नहीं देखी थी। इसीलिए मानो जरा आश्चर्य करती हुई ही पति के मुख की ओर देखती उसे समझने की कोशिश करने लगी।

और उधर अभागा अरुणांशु पितृगृह में प्रवेश करते समय ही विताड़ित और अपमानित हो दिनभर कलकत्ते की सड़कों पर घूमता रहा।

अकल्पनीय क्लेश से उसका दिल मानो चाकचाक हो गया है। उसके पिता उसे पहचान नहीं सकेंगे यह तो उसने सोच ही लिया था। लेकिन फिर भी मानो यह सोच नहीं सका था कि इस प्रकार दुरदुरा कर गले में हाथ डालकर निकाल जायेगा। यह मानो उसके स्वप्न में भी अगोचर था।

फिर अगले ही क्षण बिल्कुल दूसरी ही बात उसके दिमाग में आयी। शायद उसके पिता उसे पहचान ही नहीं सके। इसीलिए शायद भगा दिया है। लेकिन उसी के साथ-साथ डा० सरकार की पिछली रात में कही हुई बात भी याद आ गयी। जन्मक्षण में ही परित्यक्त उपेक्षित हो तुम, इस संसार में तुम्हारा कोई नहीं, कोई नहीं है। तुम अकेले हो—निपट अकेले। उनके लिए तुम मृत हो। वे तुम्हें चाहते नहीं हैं। वे तुम्हें चाहते नहीं हैं। चाहते नहीं। चाहते नहीं। उनके लिए आज तुम मृत हो। तुम उनके कोई नहीं। उनके पास मत जाना।

लेकिन ताज्जुब है कि खदेड़े जाने पर भी घूम-फिर कर अरुणांशु को उन्हीं की याद आ जाती।

उसके भाई और बहन।

उसके बाबू। उसकी माँ।

उसकी माँ कितनी सुन्दर है। स्वामी जी के कमरे में उसी दुर्गा प्रतिमा के चित्र की नाईं। चारों दिशाओं को प्रकाशित करती प्रसन्न हास्य लिये मानों देख रही हैं।

और उन्हीं की सन्तान होकर वह कितना कुरूप है।

और, और—। केवल कुरूप है इसीलिए उसके पिता ने उसे जन्मक्षण से त्याग दिया है।

लेकिन फिर भी, फिर भी तो वह उन्हीं की सन्तान है। अरुणांशु से आगे सोचा नहीं गया।

भूख-प्यास के बारे में भी वह भूल गया।

रात के अँधेरे में अरुणांशु फिर पग-पग चलता अपने पितृगृह के पीछे आकर खड़ा हो गया। एक अदृश्य शक्ति ने मानों उसे लगातार ठेलते-धकेलते वहाँ लाकर खड़ा कर दिया। उत्सव के बाद सारा घर मानों अब थक कर सो

गया है।

इतना बड़ा घर बिल्कुल चुप खामोश। सन्नाटा छाया हुआ। न कहीं कोई आहट है न आवाज।

यह सच है कि बाबू उसे पहचान नहीं सके और भगा दिये।

लेकिन उसकी माँ?

माँ भी क्या उसे देखकर पहचान नहीं सकेगी। अगर वह अपना परिचय दे, कहे, माँ मैं तुम्हारा बेटा हूँ। फिर भी क्या उसे खदेड़ देगी।

माँ।

हाँ, माँ से बिना पूछे वह नहीं जायेगा। पिता जी उसे भगा दे कोई बात नहीं। लेकिन माँ—माँ को वह छोड नहीं सकता। एक बार वह उससे पूछेगा, क्यों अम्मा, तुम भी मुझे पहचान नहीं पा रही हो? क्या तुमने मुझे दस महीने दस दिन अपनी कोख में नहीं रखा। निरन्तर सुधारस से क्या मुझे जिला नहीं रखा? तुम भी मुझे खदेड़ दोगी? ताक कर देखो माँ, मैं मरा नहीं। तुमने जो कुछ जान रखा है वह गलत है। गलत है।

दीवार फाँद कर अरुणांशु पीछे वाले बाग में पहुँचा। फिर पानी के पाइप से लिपटकर ऊपर दुमंजिले के बरामदे पर पहुँच गया।

बरामदे की बत्ती बुझी हुई, चाँदनी आ पड़ी है।

इस मकान के किस कमरे में कौन है क्या मालूम? उसके सभी कोई यहाँ हैं लेकिन फिर भी वह इसका कुछ भी नहीं जानता।

बरामदे की दीवार-घडी रात के सन्नाटे में एकरस टिक-टिक किये जा रही है।

समय चला जा रहा है।

सामने ही एक कमरे का दरवाजा खुला पाकर पैर दबा-दबाकर भीतर जा पहुँचा। किसी फूल की मीठी महक नथुनों में प्रवेश अरुणांशु खड़ा हो गया।

आह, फूलों की कैसी मधुर सुगन्ध है !

खुली खिड़की से कमरे में काफी चाँदनी आ पड़ी है। उसी रोशनी में अरुणांशु ने देखा, चारों ओर असंख्य चीजें, कमल और रजनीगन्धा विखरे पड़े हैं। और उस सम्पदा के वीच दुग्धफेन जैसी शय्या पर कौन वह गहरी नींद में वेखवर पड़ा है ?

कौन उस पलंग पर लेटा है।

अरुणांशु आगे वढ़ गया।

यह तो सवेरे वाला वही सुदर्शन लड़का है।

उसका भाई है। पहचान लिया, अरुणांशु ने पहचान लिया है।

उसका छोटा भाई। अपनी माँ की कोख से जन्मा छोटा भाई।

अरुणांशु विस्तर के सिरहाने की ओर चला गया।

वहुत ही सतर्कता से झुककर परम नेह से उसने अपने छोटे भाई के वाल पर हल्के से एक चुम्वन अंकित कर दिया।

इसके वाद खामोश पग-पग वढ़ता कमरे से वाहर निकल आया।

अव वगल के कमरे में प्रवेश किया उसने।

विस्तर पर उसका वाप राजीव घोष लेटा है।

झुककर सजल नेत्रों से अपने सोते हुए पिता के चरणों में उसने एक प्रणाम किया। पिता। मेरे पिता। पिता स्वर्ग पिता धर्म।

स्वामी जी का सिखाया हुआ मंत्र है।

लेकिन माँ।

माँ किस कमरे में है ?

चक्कर लगाते हुए अरुणांशु इस वार वरामदे के विल्कुल आखिरी छोर के वड़े कमरे में आ पहुँचा। इस कमरे में भी खिड़की से थोड़ी सी चाँदनी अन्दर आ पहुँची है। अगल-वगल दो पलंग पर कमला और गोपा गहरी नींद में अचेतन हैं।

एक पुलक भरी वेदना से उसका दिल डोल उठा। एक सिहरन से।

माँ। मेरी माँ।

उसकी माँ। दशभुजा जननी मानो दसों दिशाओं को आलोकित किये हुए है।

आगे बढ़कर पलंग के बगल में माँ के पैरों के सामने अरुणांशु बैठ गया।

माँ। उसकी माँ।

दोनों हाथों से माँ के दोनों पैर दबाकर उन पर अपना आँसुओं से भीगा मुख रखकर वह दिलतोड़ रुदन में फूट पड़ा, माँ। माँ। अम्मा। मेरी माँ।

अरुणांशु के स्पर्श से कमला की नींद टूट गयी।

कमरे के धुंधलके में कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता।

केवल लगता, उसके पैरों को कोई पकड़े हुए है।

उनींदी आँखें लिये ही कमला बोल पड़ी, कौन ? मेरे पैरों के पास कौन ?

कोई आहट नहीं।

आह ! कौन ? कौन ? गोपा ! गोपा—देख तो किसने मेरे पैर पकड़ रखे हैं। गोपा ! गोपा—कमला इस बार डर से चिल्ला पड़ी। माँ की पुकार पर गोपा की नींद भी टूट गयी, क्या ? क्या हुआ माँ ?

देख तो। कोई, कोई मानों मेरे पैर पकड़े हुए है। आह !

गोपा चिल्ला पड़ी, बाबू ! भैया ! भैया !

आह, कौन है यह ? पैर क्यों नहीं छोड़ता ?

एक झटके में लात जमाकर ही इस बार बड़ी मुश्किल से कमला ने अपने दोनों पैर छुड़ा लिये।

उधर गोपा की पुकार पर सुवीर और राजीव जागकर कमरे की ओर भागते आ रहे हैं।

क्या हुआ है रे गोपा ? गोपा ! सुवीर बोला। फिर बोला, क्या हुआ है माँ ?

सुवीर ने कमरे की स्विच दबाकर बत्ती जला दी।

क्षण भर में कमरे का अँधेरा दूर हुआ और तेज रोशनी में इतनी देर में सब कुछ साफ दीखने लगा।

सुवीर, राजीव, कमला और गोपा सभी की नज़रें कमला के पलंग के किनारे अपराधी से खामोश खड़े अरुणांशु पर पड़ीं।

कौन ? कौन है वहाँ ? कमला ही सबसे पहले बोली।

लेकिन सुवीर ने अरुणांशु को देखते ही पहचान लिया और बोल पड़ा, अरे यह तो वही आदमी है। वही जानवर। तभी समझा था कि यह चोर है। इसीलिए सवेरे घर में घुसा था सब अता-पता लगाने के लिए।

आगे बढ़कर सुवीर ने गुस्से और जोश से अरुणांशु के मुख पर कुछ झापड़ और घूंसे तावड़तोड़ जमा दिये।

आश्चर्य। अरुणांशु ने चूं तक नहीं की।

सिर्फ गूंगी, लाचार और डरी निगाह से कमला की ओर एक अजीब ढंग से देखता रहा।

सुवीर का गुस्सा मानों अरुणांशु का कोई विरोध या प्रतिक्रिया न पाकर दुगुना हो उठा।

फिर उसने अरुणांशु के गाल पर कुछ चाँटे लगा दिये—चोर कहीं के!

इतनी देर में अरुणांशु ने मानों अस्पष्ट कंठ से कुछ कहने की कोशिश की, मैं चोर नहीं हूँ—माँ—

सुवीर चिल्ला उठा, ए दरबान, वृन्दावन, सुखदेव! चोर! चोर!

कहते-कहते और भी कुछ चाँटें जड़ दिये अरुणांशु के गालों पर—साला, चोर नहीं! तुझे आज मार ही डालूंगा। रात को कमरे में घुस कर चोर की तरह—

ऐसे ही समय न जाने क्यों कमला बोल पड़ी—हाय। रहने दो। रहने दो।

रहने दूँ, मतलब?

सुवीर, उसे मारो मत। आज तुम्हारा जन्मदिन है बेटा, आज के दिन किसी को मारना नहीं चाहिए सुवीर। कमला ने फिर कहा।

सुवीर चिल्ला उठा, नहीं, मारूँ नहीं, इसकी पूजा करूँ—साला चोर है। चोरी करने आकर पकड़ा गया है।

राजीव इतनी देर तक अजीब लाचार ढंग से अरुणांशु के विकृत चेहरे की ओर देख रहा था। और किसी एक अज्ञात आकर्षण से ही मानों वाक्शून्य अरुणांशु के सामने पग-पग दबी आवाज में उसने पूछा, कौन हो? कौन हो तुम?—सवेरे भी आये थे, फिर अभी। कौन हो?

भ्ररुणांशु पत्थर जैसे खामोश निगाहों से राजीव की भ्रोर देखता रहा ।

सुवीर ने कहा, समझे नहीं डैडी, यह चोर है, यह डाकू है। इतना कह कर दरवान की भ्रोर देखते हुए सुवीर ने कहा, तुम लोग खड़े-खड़े देख क्या रहे हो ? पकड़ लो इसे—

इस बार राजीव ने बाधा दी, नहीं, नहीं, सुवीर रहने दो, मार-पीट मत करो। बल्कि पुलिस में हैंड-श्रोवर कर दो—कहते हुए राजीव यकायक कमरा छोड़कर चला गया।

दरवान भ्रौर नौकर सभी लोग मिलकर भ्ररुणांशु को नीचे ले गये, साथ ही साथ सुवीर भी थाने में फोन करने गया।

रात के करीब बारह बज रहे हैं। सोती हुई भ्राधीरात मानो खामोशी में ऊँघ रही है।

डा० सुहृद सरकार भ्रपनी लाइब्रेरी में बेचैन से भ्रकेले चहलकदमी भी कर रहा है। भ्रभी तक वह सो नहीं सका है। इसका कारण यह है कि भ्रलस्सवेरे बिना किसी से कुछ बताये भ्ररुणांशु इस घर से चला गया है भ्रौर भ्रभी तक उसका कोई पता नहीं। शुरू में किसी तरह भी वह सोच नहीं पा रहा था कि भ्ररुणांशु कहाँ है।

कहाँ जा सकता है वह ?

इस शहर के रास्ते भी उसके जाने-पहचाने नहीं हैं। सवेरे ही एक जरूरी केस पाकर डा० सरकार निकल गया था, लौटा है रात नौ बजे। लौटकर मधु से भ्ररुणांशु के बारे में सुना।

सवेरे से ही वह घर पर नहीं है। सोचते-सोचते भ्रचानक एक संभावना सुहृद के दिमाग में झाँक गयी, कहीं भ्ररुणांशु राजीव के घर तो नहीं चला गया है। उसने कहा था कि वह जायगा, हालाँकि सुहृद ने उसे बार-बार मना किया था।

लेकिन भ्रब उसे लगने लगा शायद ऐसा ही हुआ होगा। वह भ्रभागा भ्राखिर तक शायद वहीं चला गया है।

इतने में लाइब्रेरी की घड़ी में टन्-टन् भ्रावाज करते रात के बारह बजे।

इतनी रात हो गयी और अरुणांशु अभी तक लौटा क्यों नहीं।

नौकर कमरे में प्रवेश कर बोला, बाबू !

कौन ? मधु। आज खाना नहीं खाऊँगा। बगल के कमरे में उस बाबू का खाना ढक कर रख दे और तू सोने जा।

मधु चला गया।

न जाने क्यों उसे लग रहा था कि अरुणांशु कहीं नहीं गया है।

राजीव को एक फोन करके देखा जाय।

आगे बढ़ कर सुहृद डाक्टर ने फोन का रिसीवर उठा लिया, हैलो, पुट मी टू पी-के २२२२ प्लीज।

इधर उतनी देर में राजीव के घर दरवान नौकर सुवीर के हुक्म से निकट के थाने में उस आदमी को लेकर जा चुके थे।

और सभी लोग अपने-अपने विस्तर पर जा लेटे हैं, लेकिन जाने क्यों राजीव अभी तक अपने शयनकक्ष में लौटा नहीं। आँखों से रातभर के लिए नींद उड़ चुकी थी।

कुछ चंचल सा, कुछ अनमना सा वाहर के वरामदे में राजीव अकेले चुपचाप चहलकदमी कर रहा है। दिल में फिर वह सवेरे वाली वेचैनी अदृश्य काँटे की तरह करकने लगी। एक अदृश्य वेदना दिल के तनहा गोशे में लोहू टपका रही थी।

अतीत की कोई भूली हुई स्मृति क्या इसी क्षण राजीव के मन में आकर उसे उतावला कर रही है ? अचानक ऐसे ही समय फोन की आवाज सुनाई पड़ी।

राजीव फोन की आवाज से चौंक पड़ा।

इतनी रात गये कौन फोन कर रहा है उसे ?

कमरे में जाकर वेवस हाथों से उसने फोन उठा लिया, हैलो। घोष स्पीकिंग।

कौन ? स्पष्ट। बहुत ही स्पष्ट एक प्रश्नसूचक शब्द। उस ओर से तार के जरीए बहुत दिनों पुरानी परिचित आवाज तिर आई, मैं सुहृद हूँ।

कौन ? सुहृद। तुम—

हाँ मैं। उसी पुराने स्वर में जवाब आया।

आश्चर्य। सचमुच राजीव आश्चर्य करने लगा है।

एक-दो दिन या महीना या साल नहीं, पूरे पच्चीस साल के बाद सुहृद उसे अपनी तरफ से फोन पर बुलाकर बातें कर रहा है।

शायद राजीव के विस्मित कंठ से एकालाप जैसा ही निकला, वाकई, सुहृद हो तुम।

पच्चीस वर्ष के बाद। ताज्जुब। अचानक इतने दिनों के बाद फिर सुहृद उसे फोन पर क्यों बुला रहा है ?

हाँ—दूसरी ओर से जवाब तिर आया, काफी अचरज हो रहा है, है न ? ऐसा होना काफी स्वाभाविक है। सोचा नहीं था कि खुद मैं तुम्हें कभी बुलाना पड़ेगा।

सचमुच राजीव भी मानो कुछ विह्वल सा हो गया है, मित्र की बातों का कोई जवाब नहीं दिया। सिर्फ रिसीवर कानों में लगाकर पत्थर का बुत बना खड़ा रहा।

फिर सवाल तिरता हुआ आया, लेकिन जिस लिए तुमको कष्ट दिया, अरुणांशु कहाँ है ?

अरुणांशु ! विस्मित राजीव के कंठ से सिर्फ इतना ही शब्द उच्चारित हो सका।

डा० सुहृद का स्वर फिर सुनाई पड़ने लगा, हाँ अरुणांशु। अस्पष्ट या पहेली जैसा कुछ नहीं, बहुत ही स्पष्ट बात है। बेशक पच्चीस साल पहले अपने जीवन की उस घटना को तुम भूल नहीं गये होंगे।

डा० सुहृद की बातों से राजीव के दिल पर एक प्रचंड वैद्युतिक लहर आ गिरी और उथल-पुथल मचाने लगी।

क्षणभर में एक वीभत्स कदाकार चेहरा याद पड़ गया।

इतनी रात हो गयी और अरुणांशु अभी तक लौटा क्यों नहीं।

नौकर कमरे में प्रवेश कर बोला, बाबू !

कौन ? मधु। आज खाना नहीं खाऊँगा। बगल के कमरे में उस बाबू का खाना ढक कर रख दे और तू सोने जा।

मधु चला गया।

न जाने क्यों उसे लग रहा था कि अरुणांशु कहीं नहीं गया है।

राजीव को एक फोन करके देखा जाय।

आगे बढ़ कर सुहृद डाक्टर ने फोन का रिसीवर उठा लिया, हैलो, पुट मी टू पी-के २२२२ प्लीज।

इधर उतनी देर में राजीव के घर दरवान नौकर सुवीर के हुक्म से निकट के थाने में उस आदमी को लेकर जा चुके थे।

और सभी लोग अपने-अपने विस्तर पर जा लेटे हैं, लेकिन जाने क्यों राजीव अभी तक अपने शयनकक्ष में लौटा नहीं। आँखों से रातभर के लिए नींद उड़ चुकी थी।

कुछ चंचल सा, कुछ अनमना सा बाहर के बरामदे में राजीव अकेले चुपचाप चहलकदमी कर रहा है। दिल में फिर वह सवेरे वाली बेचैनी अदृश्य काँटे की तरह करकने लगी। एक अदृश्य वेदना दिल के तनहा गोशे में लोहू टपका रही थी।

अतीत की कोई भूली हुई स्मृति क्या इसी क्षण राजीव के मन में आकर उसे उतावला कर रही है ? अचानक ऐसे ही समय फोन की आवाज सुनाई पड़ी।

राजीव फोन की आवाज से चौंक पड़ा।

इतनी रात गये कौन फोन कर रहा है उसे ?

कमरे में जाकर बेवस हाथों से उसने फोन उठा लिया, हैलो। घोष स्पीकिंग।

कौन ? स्पष्ट। बहुत ही स्पष्ट एक प्रश्नसूचक शब्द। उस ओर से तार के जरीए बहुत दिनों पुरानी परिचित आवाज तिर आई, मैं सुहृद हूँ।

कौन ? सुहृद। तुम—

हाँ मैं। उसी पुराने स्वर में जवाब आया।

आश्चर्य। सचमुच राजीव आश्चर्य करने लगा है।

एक-दो दिन या महीना या साल नहीं, पूरे पच्चीस साल के बाद सुहृद उसे अपनी तरफ से फोन पर बुलाकर बातें कर रहा है।

शायद राजीव के विस्मित कंठ से एकालाप जैसा ही निकला, वाकई, सुहृद हो तुम।

पच्चीस वर्ष के बाद। ताज्जुब। अचानक इतने दिनों के बाद फिर सुहृद उसे फोन पर क्यों बुला रहा है ?

हाँ—दूसरी ओर से जवाब तिर आया, काफी अचरज हो रहा है, है न ? ऐसा होना काफी स्वाभाविक है। सोचा नहीं था कि खुद से तुम्हें कभी बुलाना पड़ेगा।

सचमुच राजीव भी मानो कुछ विह्वल सा हो गया है, मित्र की बातों का कोई जवाब नहीं दिया। सिर्फ रिसीवर कानों से लगाकर पत्थर का बुत बना खड़ा रहा।

फिर सवाल तिरता हुआ आया, लेकिन जिस लिए तुमको कष्ट दिया, अरुणांशु कहाँ है ?

अरुणांशु ! विस्मित राजीव के कंठ से सिर्फ इतना ही शब्द उच्चारित हो सका।

डा० सुहृद का स्वर फिर सुनाई पड़ने लगा, हाँ अरुणांशु। अस्पष्ट या पहेली जैसा कुछ नहीं, बहुत ही स्पष्ट बात है। बेशक पच्चीस साल पहले अपने जीवन की उस घटना को तुम भूल नहीं गये होंगे।

डा० सुहृद की बातों से राजीव के दिल पर एक प्रचंड वैद्युतिक लहर सा गिरी और उथल-पुथल मचाने लगी।

क्षणभर में एक वीभत्स कदाकार चेहरा याद पड़ गया।

याद पड़ गयी दानव जैसे चेहरे-मुहरे वाली एक शक्ल। याद पड़ गयी दानव के दोनों आँखों की मिन्नत।

वह व्यर्थ चिरौरी भाषाहीन और गूँगी थी। कितनी करुण। कितनी लाचार।

विस्मित स्खलित कंठ से चन्द टूटी-फूटी असंलग्न बातें राजीव के मुँह से मानों जवाब में निकलीं, डाक्टर ! डाक्टर — क्या कह रहे हो तुम ? तो क्या थोड़ी देर पहले जो—

अविचलित कठोर कंठ से सुहृद बोल पड़ा, हाँ। हाँ—वही। वही—

अँय।—एक आर्त करुण चीख राजीव के गले से निकल आयी।

डाक्टर उस समय भी कहता जा रहा था, वही तुम्हारी अभिशप्त परित्यक्त पहली सन्तान है। अरुणांशु।

राजीव के पैरों के नीचे से धरती सरकती जा रही है।

पच्चीस साल की अतीत स्मृति के अँधेरे को भेद कर तो फिर वह आज लौट आया है। बिल्कुल उसके सामने। आमने-सामने।

लेकिन कहाँ है वह ? — डाक्टर की आवाज फिर सुनाई पड़ी, आज भी तुमने क्या उसे खदेड़ दिया है ?

राजीव पागल जैसा ही बोल पड़ा, खदेड़ दिया हूँ। नहीं। नहीं। कहाँ—कहाँ है वह ? कहाँ है वह ?

वह कहाँ है यही जानने के लिए तो तुम्हें इतनी रात गये फोन पर बुलाना पड़ा — कहाँ है वह ? वह तो तुम्हारे यहाँ ही गया था —

राजीव बोला, हमारे यहाँ ही आया था। —तो—तो क्या—वही आज रात को कमला के पैरों से लिपट गया था—समझ नहीं सका। मैं समझ नहीं सका। अँय। अँय।

डा० सुहृद ने व्याकुल स्वर में फिर पूछा, बताओ। बताओ राजीव। चुप्पी क्यों साधे हो—? वह कहाँ है ? —बताओ। बताओ, वह कहाँ है? क्या सचमुच तुमने आज भी उसे खदेड़ दिया राजीव ? राजीव —

ओफ्, यह मैंने क्या किया ! क्या किया! सुहृद! सुहृद ! हाँ, हाँ—उसे, उसे थोड़ी ही देर पहले थाने में—

क्या ? क्या बताया ? थाने में, थाने मे भेज दिया । बहुत खूब ! क्या कहना है राजीव । वाकई तुम बेमिसाल हो । खूब दिखाया ! क्या बताऊँ राजीव, सचमुच दुनिया मे तुमने पितृत्व का एक इतिहास रच दिया ! व्यंग-मिश्रित स्वर मे डा० सरकार धाराप्रवाह बोलता ही रहा ।

और अगले ही क्षण दूसरी ओर से एक ठन्न सी आवाज आयी । समझ मे आया कि सुहृद डाक्टर ने फोन रख ही दिया ।

राजीव का दिल झकझोर कर एक ठंडी साँस निकल आयी । उसका सुन्न पड़ा हाथ फोन का रिसीवर लेकर उतर आया । उसने रिसीवर रख दिया । सारी बोधशक्ति ही मानो उसकी जम कर बर्फ सी बन गयी है ।

इधर सचमुच उस वक्त थाने मे छोटे दारोगा सुविमल अरुणाशु को सामने खड़ा कर उससे इकबाल कराने के लिए जिरह पर जिरह करते चले जा रहे थे । लेकिन अरुणाशु ऐसा चुप्पी साधे है मानो वह गूंगा है ।

छोटे दारोगा भी अड़े हुए थे, कहने लगे, देखा हनुमान सिंह, इस साले की जिद् देखी तुमने । यह ससुरा देखने मे भी देव जसा है और है पक्का क्रिमिनल । इतने दिन हम लोगो की आँखों मे धूल झोंककर कहाँ गोता लगा रहा था—यही सोच रहा हूँ—

बहुत दिनो से बंगाल मे रहने के कारण बिहारी भाई हनुमान सिंह टूटी-फूटी बंगला बोल लेता है । कहने लगा, छोटे साहब, लगता तो नया रंगरूट ही है । लेकिन देखने पर पता चलत बाटे कि उम्दा चीज बा । अरे सरवा बोलत काहे नही । शहर माँ कहाँ से आइल बा ।

छोटे दारोगा भी मुँह बिचकाकर बोले, बोल बे । कितने दिनों से यहाँ आया है ? रायबहादुर के मकान में कैसे घुस गया ?

इतनी देर में अरुणाशु बोला, अगर कसूर हो गया हो तो क्या । कर जा

सजा है सो दीजिए। लेकिन मैं चोर नहीं हूँ—

चोर नहीं। ससुरा बिलकुल साधू है। छोटे दारोगा खीखिया उठे—यहाँ कहाँ रहता है? कोई तुझे पहचानता भी है?

नहीं, कोई नहीं पहचानता।

तो रहो बेटा हवालात में। कल सवेरे देखा जायेगा।

दारोगा के हुक्म पर फिलहाल हवालात में रखने के लिए हनुमान सिंह अरुणांशु को ले चला। अरुणांशु ने इतने देर में आराम की साँस ली। खैर! ये कई दिन और कई रातें दिल और दिमाग पर जो आँधी गुजर चुकी है, अब जरा निश्चिन्त होकर सो सकेगा। हनुमान सिंह ने उसे हवालात में डालकर बाहर से दरवाजा बन्द कर दिया।

अरुणांशु फर्श पर ही लेट गया। और देखते ही देखते उसकी आँखों पर नींद उतर आयी। शान्तिदायिनी मुक्तिदायिनी निद्रा।

राजीव से प्रतीक्षा नहीं की जा सकी। उसी रात को अकेले गाड़ी चलाकर वह डा० सुहृद के घर जा पहुँचा।

इतनी रात गये राजीव को देखकर डाक्टर दंग रह गया—लेकिन शायद उसके आगमन का हेतु समझ सके, इसीलिए कनखियों से राजीव की ओर देखते हुए उसने पूछा, कहिए रायबहादुर जी! क्या समाचार है? इतने दिनों के बाद क्या सचमुच याद आ गयी। अभागे परित्यक्त एक बच्चे की रुलाई—

सब कुछ सुनने के लिए तैयार होकर ही राजीव आया था। बोला, कह लो भाई। कहो—सब कुछ कहो—सभी कुछ सुनने के लिए ही मैं आज इतनी रात गये भागता आया हूँ।

पहले की ही तरह टेढ़ी नजरों से देखता हुआ व्यंग भरे स्वर में सुहृद बोला, ऐसी बात। वाह। नाटक तो अनोखा है। अपूर्व है। अचिन्तनीय—तुमने भी गजब कर दिखाया राजीव!

व्यथित स्वर में राजीव ने कहा, हाँ, है तो नाटक ही। पच्चीस साल से

रात-दिन पल-पल इस दिल मे खून के लाल-लाल अक्षरों में लिखा गया है।

हा-हा-हा —सुहृद ठहाका लगाने लगा।

मानों सचमुच कोई पुरलुत्फ बात हुई हो।

राजीव ने दर्दभरी आँखो से दोस्त की ओर देखते हुए कहा, हँस रहे हो डाक्टर ? नहीं। लेकिन विश्वास करो—मैं भूला नही। क्षणभर के लिए भी मैं उसे भूल नही सका। —

सुहृद ने कहा, मैंय, तो भूले नही। वाह ! वाह ! क्या खूब ! कितना बेहतरीन अभिनय है।

हाँ, बात तुम माकूल कह रहे हो। अभिनय। हाँ, मैं अभिनय ही करता रहा इतने दिनों से, अपने साथ, कमला के साथ, समाज के साथ, सभी—सभी के साथ। पश्चात्ताप और दर्द से राजीव का गला भर्रा गया।

सुहृद ने कहा, कोई डर नही। कतई मत डरो, बिना अभिनय के भी काम बन जायेगा, जेल ही जब उसे भिजवा दिया है तो जान लो कि जेल से लौट कर वह कहीं भी जाये तुम्हारे पास बेशक लौट नही जायेगा—तुम्हारी गृहस्थी में जहरीली भाप फैलाने। तुम बेफिक्र लौट जा सकते हो।

लौट जाऊँ ? लौटना तो मुझे पड़ेगा ही। अपने हाथो से जो बोरसी की आग मैंने सुलगा रखी है बाकी जिन्दगी भी मुझ ही को उसे जगाये रखना पड़ेगा। जानता हूँ। जानता हूँ डाक्टर ! नियति। यही मेरी नियति है। कहते-कहते सहसा रुक कर जरा आनाकानी कर राजीव मित्र के चेहरे की ओर देखता हुआ बोला, लेकिन जाने से पूर्व मेरी एक विनती है।

विनती। डाक्टर ने हैरानी से राजीव के मुँह की ओर देखा।

राजीव ने कहा, हाँ विनती, एक दिन जिस बालपन के मित्र को तुम सब से ज्यादा चाहते थे, सोच लो यह उसकी आखिरी विनती है—बताओ — बताओ भाई, रखोगे यह विनती ? — आग्रह से राजीव ने उठकर डाक्टर का एक हाथ अपने दोनों हाथो मे ले लिया।

दबी आवाज मे राजीव ने कहा, सुहृद, मैं सचमुच कावर्ड हूँ। सत्य को स्वीकारने की हिम्मत मुझमे नहीं है, लेकिन वह—उसकी जिम्मेवारी तो मेरी

ही है।

जिम्मेवारी — तुम्हारी यह जिम्मेवारी कैसी ?

हाँ। — ऐसा बेशक कह सकते हो। फिर भी — कहते हुए एक पचास हजार रुपये का चेक निकालकर डाक्टर की ओर बढ़ाते हुए वह बोला — यह रुपया उसे—

रुपया। सुहृद मानों दंग सा रह गया। फिर बोला, हाँ। रुपये से उस ऋण को चुकाना चाहते हो ?

राजीव झटपट बोल पड़ा, नहीं, नहीं— भाई, यह ऋण चुकाना नहीं है। उसके जिस ऋण का मैं ऋणी हूँ उसे चुका सकूँ इतना बड़ा सम्बल मेरे पास कहाँ है ? यह उसके बाकी जीवन के लिए है।

अच्छी बात। बाप होकर अगर तुम दे सकते हो और बेटा होकर अगर वह उसे ले लेता है—वेल ! मुझे इसमें एतराज करने का क्या है—लाओ। लेकिन राजीव, मुझे जितना ही तुम्हारा परिचय मिलता जा रहा है मैं विस्मय से बिल्कुल गूँगा बनता जा रहा हूँ।

कुछ अनिच्छा से ही मानों हाथ बढ़ाकर राजीव के हाथों से डाक्टर ने चेक ले लिया। देखा उसी के नाम पर एक बेयरर चेक है—पचास हजार रुपये का।

मुझे मालूम नहीं डाक्टर, तुम क्या कहोगे। जिस अपराध से मैं अपराधी हूँ उसकी तुलना में यह है भी क्या ?

लेकिन एक बात बता जाओ। इस रुपये के बारे में जब वह पूछेगा तो उसे क्या बताऊँ ? उससे कहूँगा कि तुम्हारे बाप ने ही—

नहीं। नहीं— बताना नहीं। यह मत बताना उससे। उसका बाप नहीं है। वह मर चुका। बल्कि बताना कि किसी शुभेच्छु ने—कुछ भी बताना— पर यह न बताना कि मैंने यह रुपया उसे दिया है।

राजीव ने दोनों हाथो से मुँह ढाँप लिया।

डा० सुहृद सरकार की कोशिश और अर्थव्यय से उन्हीं के एक वकील मित्र की सहायता से अरुणांशु पुलिस के हाथों से मुक्त हुआ।

दूर से कठघरे में खड़े-खड़े ही अरुणांशु ने डा० सरकार को देखा था। लेकिन उस ओर उसकी दृष्टि नहीं थी।

जिस तड़प से वह अन्धे की तरह इतनी दूर भागता आया था उसका सारा ही सारा मानों खत्म हो चुका है। सारी आशा-अभिलाषा खत्म हो चुकी है।

मुक्ति पाकर अदालत से निकल आते ही डा० सरकार आकर उसके सामने खड़ा हो गया। पुकारा, अरुणांशु—

पीछे कौतूहली जनता उस वक्त भी अरुणांशु का पीछा कर रही थी। अरुणांशु ने मानों डाक्टर की बात सुनी ही न हो इस तरह से वह बढ़ चला।

इस बार डाक्टर ने बढ़कर स्नेह से उसका एक हाथ पकड़ा, आओ अरुणांशु—

अरुणांशु न जाने कैसा हो गया है, गूंगी नजरों से डाक्टर की ओर देखता हुआ बोला, कहाँ ?

क्यों, मेरे घर।

आपके घर ?

हाँ। मेरे घर। आओ—

इस बार न जाने क्या सोचकर अरुणांशु ने कहा, चलिए।

दोनों आकर डाक्टर की गाड़ी पर सवार हो गये।

ड्राइवर ने गाड़ी स्टार्ट कर दी।

ऐन उसी वक्त दिन ढले रायबहादुर राजीव घोष के प्राइवेट चेम्बर में रायबहादुर और उनके कारोबार के पार्टनर मित्र अग्रवाल में रायबहादुर के पुत्र सुवीर के बारे में बातें हो रही थीं।

अग्रवाल ने कहा, बात तो आप ठीक ही फरमा रहे हैं। लेकिन आपका लड़का भी बड़ा तेज-तर्रार है।

रायबहादुर मानों अग्रवाल की बात पर चौंक पड़े, बोले, लड़का ? कौन

लड़का ?

अग्रवाल बोला, अरे लड़का तो आपका एक ही है रायबहादुर जी ! हम सुबीर की— सुबीर बाबू की बात कर रहे हैं। उम्र कोई बीस-बाईस साल से ज्यादा तो है नहीं लेकिन कारोबार खूब चला रहा है— मैं कहूँ कि बाप का बेटा सिपाही का घोड़ा कुछ नहीं तो थोड़ा-थोड़ा —हा - हा ! कहते-कहते अग्रवाल हँस पड़ा।

लेकिन राजीव ने कहा, थोड़ा-थोड़ा नहीं अग्रवाल — रादर टू फास्ट— इतनी तेजी से बढ़ रहा है तभी मुझे डर लगता है।

अग्रवाल ने कहा, डर। यह आप क्या कह रहे हैं रायबहादुर जी ? आप का बेटा होकर बहादुरी न दिखाने से—

राजीव ने कहा, बहादुरी हम लोगों ने भी जिन्दगी में कम नहीं दिखाई अग्रवाल, लेकिन सभी कुछ की एक हद होती है। और ये लोग भाग रहे हैं आतशबाजी बाण की तरह अकेले।

अग्रवाल बोल पड़ा, नहीं-नहीं। आप क्या कह रहे हैं जी ? यह तो हिम्मत की बात है।

हिम्मत ही है। राजीव का सीना झकझोर कर एक लम्बी साँस निकल आयी।

रास्ते भर अरुणांशु ने एक बात भी नहीं की। खामोश रहा। डा० सरकार की कोठी में गाड़ी पहुँची। डाक्टर गाड़ी से पहले उतरा, फिर आग्रह किया, आओ— उतरो अरुणांशु—

चुपचाप उतरकर मानों अपने अनचाहे ही अरुणांशु डाक्टर के पीछे-पीछे चलने लगा।

डाक्टर अरुणांशु को लेकर दुमंजिले के एक कमरे में सीधे चला आया और सबसे पहले मधु से कुछ खाने को लाने के लिए कहकर अरुणांशु की ओर देखा।

अरुणांशु एक कुर्सी पर बेजान सा बैठा था।

उसके मुख की ओर देखते हुए डाक्टर ने कहा, दो दिन से तुमने कुछ खाया-पिया न होगा। पहले कुछ खा लो। फिर आराम करो।

थोड़ा रुककर फिर डाक्टर ने कहा, यह कमरा आज से तुम्हारा ही है। बिल्कुल तुम्हारा। तुम इस कमरे में निश्चिन्त होकर रह सकते हो। कोई फिक्र नहीं है तुमको। मैंने सभी से तुम्हारे बारे में बतलाने को मना कर दिया है। मधु के अलावा तुम्हारे कमरे में कोई नहीं आयेगा। मधु ही तुमको खाना दे जायेगा—कोई नहीं जान सकेगा।—और वह देखो—तुम वीणा बजाना पसन्द करते हो तो तुम्हारे लिए एक वीणा लाकर रख दी है।

इतनी देर में अरुणाशु बोला, लेकिन इससे फायदा ही क्या है डाक्टर जी? चोर की तरह छिपकर अँधेरे में मनुष्य-समाज से दूर मेरे जिन्दा रहने में धरा ही क्या है? मैं इन्सान होकर भी इन्सान नहीं हूँ। मैं किसी का नहीं हूँ, कोई मेरा नहीं है। नहीं।—नहीं डाक्टर जी, इसमें बेहतर है कि आप मुझे जाने दीजिए—

डाक्टर ने हैरानी से अरुणाशु के चेहरे की ओर देखा। फिर बोला, जाने दूँ?—कहाँ जाओगे?

कहाँ जाऊँगा? घर में नहीं, मनुष्य-समाज में नहीं—जंगल में, जहाँ शायद आदमी आदमी से इतनी नफरत नहीं करता। वे खूँखार जानवरों की हत्या बेशक करते होंगे, लेकिन आदमियों की नाईं इस ढंग से शायद एक दूसरे से नफरत नहीं करते—

डाक्टर ने सस्नेह कहा, डोंट बी डिसहार्टेन्ड माई बॉय। कोई नहीं बता सकता कि किसमें कितनी शक्ति छिपी हुई है, तुम्हीं में एक विराट शक्ति छिपी नहीं पड़ी है यही कौन बता सकता है?

बड़े दुख में भी अरुणाशु के होंठों के छोर पर एक हल्की सी मुस्कान आयी, विषादभरे स्वर में उसने कहा, इन चन्द दिनों में ही वे सपने मेरे टूट चुके हैं डाक्टर जी। सारी उम्मीदें—सारे अरमान—

अचानक ही मानों डाक्टर को याद पड़ गया हो इस ढंग से वह बोल पड़ा, और लो—तुम्हें असली बात बताना तो मैं भूल ही गया। उसे

तुम लोगों का एक भगवान है न, उन्होंने इसी बीच एक बढ़िया अवसर जुटा दिया है—

विस्मित अरुणांशु ने डाक्टर के मुंह की ओर देखते हुए पूछा— अवसर ?

डाक्टर ने कहा, हाँ । हाँ—अवसर—यह रहे पचास हजार रुपये—अब तो तुम नये सिरे से जिन्दगी शुरू कर सकते हो ।

पचास हजार रुपये—विस्मय से वाक्शून्य अरुणांशु ने फिर प्रश्न किया । मामला कुछ उसकी समझ में नहीं आ रहा है ।

डाक्टर ने कहा, हाँ, हाँ—यह लो पचास हजार रुपये का चेक । हालाँकि यह मेरे नाम पर है फिर भी सारा रुपया तुम्हारा ही है ।

पचास हजार रुपया— सारा मेरा ?

अरुणांशु सपना तो नहीं देख रहा है । पचास हजार रुपये का चेक । कुछ भी उसकी समझ में नहीं आता ।

डाक्टर ने कहा, हाँ । तुम्हारा ही रुपया है । लो— पकड़ो ।

अरुणांशु ने कहा, मैं कुछ भी नहीं समझ पा रहा हूँ डाक्टर जी । रुपया । इतना रुपया मुझे कौन देगा—एक दे सकते थे स्वामी जी,—फिर अचानक ही क्या सोचकर बोल पड़ा, ओ समझा, आप ही हैं । आप ही मुझे इतने रुपये दे रहे हैं ।

डाक्टर हंस पड़ा, बोला, मैं ? पागल हो ? इतने रुपये मुझे कहाँ से मिल जायेंगे ?

तो ? तो यह रुपया आया कहाँ से ?

डाक्टर ने कहा, मान लो तुम्हारे भगवान ने— तुम्हारे ही कोई परम हितैषी, शुभेच्छु के हाथ ने यह रुपया तुम्हें भेज दिया है । —

बिजली की कौंध सी उसकी चिन्ता के अन्धकार में एक सम्भावना झाँक गयी ।

अरुणांशु चौंक पड़ा ।

लेकिन क्या यह भी संभव है ? यह भी क्या संभव है ? हाँ, अब उसकी समझ में आ रहा है कि यही संभव है । वर्ना इतना रुपया उसे कौन देगा ?

साथ ही साथ उसका दिल बोल पड़ा, नहीं । नहीं— ऐसा नहीं होगा ।

मन में प्रबल प्रतिवाद उभर उठा। लेगा भी क्यों वह?

अरुणांशु को चुप खड़े रहते देखकर डाक्टर ने फिर कहा, क्या सोच रहे हो अरुणांशु? पकड़ो यह चेक—

डाक्टर की बात पर अरुणांशु चौंक पड़ा। क्षणभर में अपना संकल्प तय कर उसने कहा, दीजिए।

अरुणांशु ने हाथ बढ़ाकर चेक ले लिया। ओफ्, साथ ही साथ मानो हाथों में आग की एक लपट लगी, हथेली झुलस गयी।

नौकर ने खाना लेकर कमरे में प्रवेश किया।

स्वीकृति

रात के शायद बारह बज गये हैं।

राजीव अकेले अपने घर के नीचे वाली मंजिल में स्थित अपने आफिस-कक्ष में चहलकदमी कर रहा है।

उसी रात के बाद रातोंदिन चौबीस घंटे दिमाग में चिन्ता के बिच्छू का डंक लगातार चुभ रहा है। बारहा सिर्फ एक भयंकर वीभत्स चेहरा मन के पृष्ठ पर जाग उठता। किसी तरह भी वह भूल नहीं पा रहा है। वह चेहरा मानो राजीव किसी तरह भी भूल नहीं पा रहा है।

कुरूप मुख पर दो आँखों की सकरुण विनती मानो उसकी ओर ताक रही है। मानों वह दृष्टि कहना चाहती हो, बताओ। बताओ क्यों—किस अपराध पर तुमने मुझे त्याग दिया? जवाब दो! जवाब दो!

क्यों? क्यों?

ऐसे ही समय सहसा कमरे का बन्द किवाड़ जरा आवाज कर खुल गया।

चौंककर पलट के देखते ही राजीव दो कदम पीछे खिसक आये, मानो भूत देखा हो।

कमरे में अरुणांशु ने प्रवेश किया है।

विना आवाज किये दरवाजे के दोनों पलड़े अरुणांश ने वन्द कर दिये।

विस्मित हतवाक् राजीव के गले से केवल दो ही शब्द उच्चारित हो सके, तुम! तुम!

धीमी आवाज में अरुणांशु ने कहा, जी, मैं हूँ, डरिए मत। मैं अभी चला जाऊँगा— कहते-कहते वाप के पास आकर जेव से चेक निकालकर शान्त वेलौस स्वर में बोला, सिर्फ यह चेक— जो आप डा० सरकार के हाथों में दे आये थे— लौटाने के लिए ही—

विस्मित राजीव कुछ देर तक अरुणांशु को निर्वाक देखता रहा फिर वड़े ही कष्ट से मानों किसी कदर बोला, लेकिन— लेकिन यह सव तो सचमुच मैंने तुम को ही दिया है अरुणांशु।

जानता हूँ। लेकिन यह तो मैं ले नहीं सकता।

ले नहीं सकते। क्यों? क्यों अरुणांशु?

क्योंकि उस पर मेरा कोई हक नहीं।

हक नहीं?

इस वार दृढ़ शान्त स्वर में अरुणांशु ने जवाव दिया, नहीं, हक नहीं है।

लेकिन अरुणांशु— शायद राजीव ने कुछ कहने की कोशिश की।

नहीं, नहीं है! मेरे परिचय को ही जव आपने स्वीकारा नहीं — तो वता सकते हैं आप कि नये तौर पर आज फिर आपका वह दान मेरे सिर पर लादकर मेरा अपमान करने का कौन सा अधिकार आपको है?

अपमान! राजीव वोला।

अपमान नहीं? वता सकते हैं आप कि आज तक किसी वाप ने अपने वेटे का इतना वड़ा अपमान किया है? चले जाने के लिए ही अरुणांशु अव पलट कर खड़ा हो गया। लेकिन राजीव के व्याकुल कंठ से वह फिर घूमकर खड़ा हो गया।

सुनो अंशु। जाओ मत, ठहरो। यकीन मानो, इस रुपये पर तुम्हारा पूरा हक है। नहीं। नहीं— इस तरह से आज मैं तुम्हें चले जाने नहीं दे सकता हूँ। पच्चीस वर्ष से जो भूल—

भूल ! अरुणांशु अब पलटकर बाप के आमने-सामने हो गया।

हाँ, यकीन मानो अरुण—

भूल ही अगर आप समझते थे तो आज तक उसे सुधारने की कोई कोशिश आपने क्यों नहीं की ? आज मुझे देखकर ही शायद आपको यह बात याद आ गयी।

यकीन मानो अरुण, सचमुच इस लम्बे अरसे में—

नहीं, फिर टोकते हुए अरुण ने कहा, आप नहीं जानते कि आपने मेरा कितना बड़ा नुकसान किया है। माँ के पास सन्तान कितनी भी बदसूरत क्यों न हो, वह माँ के स्नेह से कभी वंचित नहीं होता। उस माँ के स्नेह के हक को भी आपने मुझसे छीन लिया है।

हाँ, सब कुछ सच है अरुण। फिर भी विश्वास मानो, तुम्हें क्षणभर के लिए भी मैं भूल नहीं सका। नहीं, नहीं, आज मैं तुम्हें इस ढंग से चले जाने नहीं दूँगा। कहते हुए राजीव रास्ता रोककर खड़ा हो गया।

पिता के इस तरह के आचरण से अरुणांशु को भी कोई कम अचरज नहीं हुआ। उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या करे।

अपने दिल में इन चन्द दिनों से जो दहन चालू था, पिता के इस लहजे की आवाज में भी उसी सदमे का आभास मिला।

बर्फ पिघलने लगा।

सीने में इतने दिनों का जमा हुआ बर्फ मानो जरा-जरा करके पिघलने लगा।

राजीव उस समय भी कह रहा था, सहा नहीं जाता। अरुणांशु, मुझसे अब और यह सहा नहीं जाता। इस ज्वाला से तुम मुझे मुक्ति दो।

आप। आप— न जाने अरुणांशु ने क्या कहने की कोशिश की।

व्याकुल कंठ से राजीव बोल पड़ा, हाँ अरुणांशु। सारा [illegible]

है, यहाँ तक कि उन सभी के साथ तुमने भी जान लिया है कि मैंने तुम्हें क्षण में ही त्याग दिया था— यह सत्य है कि मैंने त्याग दिया था। वह ही बड़ा होकर रह गया लेकिन उसके बाद के युग का इतिहास — जो ल में ही अपने दिल में लादे-लादे घूमता रहा, आज भी घूम रहा हूँ— ह झूठ हो गया। — पहली जवानी की एक क्षणिक भूल— उसका मुआवजा या आज भी पूरा नहीं हुआ ? सुनो अरुणांशु— आज कोई भी बात तुमसे छिपाऊँगा नहीं। तुम मेरी सन्तान हो। मेरे इस कुरूप चेहरे की ओर आँखें उठा कर देखो। होश में आने के बाद से यह भद्दी शक्ल मुझे हर कदम प बेरहमी से मुँह चिढ़ाती रही है। हमेशा मेरी इस बदसूरती के लिए हर आदमी मुझसे कतराता रहा है— सामने या पीछे वे हँसते रहे हैं। वह बात, वह अन्तर-दाह—

अरुणांशु शायद समझ सका तभी उसने पिता को टोका, रहने दीजिए। और मत बताइए।

नहीं - नहीं— मुझे बताने दो। मेरे सीमाहीन पाप का थोड़ा सा प्राय-श्चित्त तो मुझे करने दो। कम-से-कम तुम्हारे सामने सारी बातें बताकर— राजीव फिर कहने लगा, वही शर्म, वही दर्द मुझे हर कदम पर लहूलुह करता रहा। इसीलिए असामान्य सुन्दरी तुम्हारी उस माँ को ब्याह करने बावजूद—तुम्हारे जन्म के बाद जिस क्षण मैंने तुम्हारी भद्दी सूरत देखी जाने मुझको क्या हो गया। मैं सनक सा गया। हत्या। हत्या। हाँ। हाँ तुम्हारी हत्या करना ही मैंने शायद चाहा था। लेकिन सुहृद। सुहृद ने उस महापाप से बचाया। सभी से बताया कि मेरी पहली सन्तान भूमिष्ठ हुई है और सभी लोगों ने जाना भी कि मेरी पहली सन्तान जन्मी। सोचा था, सभी को धोखा दे दिया। लेकिन उस वक्त तो समझ सका अरुणांशु कि धोखा किसी ने नहीं खाया। धोखा किसी खाया। धोखा खाया केवल मैंने ही—

अरुणांशु ने फिर बाधा देते हुए कहा, ये सब बातें रहने दीजिए- राजीव बोला, नहीं, जाने से पहले सुनकर जाओ। मैं ही

गया। तुम्हें मैं भूल न सका। यकीन मानो भरुण— एक दिन के लिए नहीं, क्षणभर के लिए भी नहीं—

विह्वल सा वाक्शून्य अरुणांशु फटी-फटी आँखों से केवल पिता की ओर देखता रहा। मानों एक भी शब्द वह बोल नहीं सकता।

राजीव बोला, अरुणांशु, इसलिए रुपया देकर मैं तुम्हारी मर्यादा भ्रष्ट नहीं करूँगा। और यह मैंने चाहा भी नहीं था। तुम्हारा पावना तो इसमें कहीं—कहीं ज्यादा है। वह पावना अगर मैं चुकाने जाऊँ तो मेरा अपना मुखौटा ही उतर ही जायेगा। सिर्फ उसी डर से—

नहीं। नहीं। उसकी अब तो कोई जरूरत ही नहीं रही बाबू। उसकी तो कोई जरूरत ही नहीं रही।

राजीव अरुणांशु की बाबू पुकार से मानों चौंक पड़ा। सहसा घूम कर अरुण को बाँहों में बाँध सीने से दबाते हुए बोला, बेटा—

जी बाबू। यह नाचीज बेटा आपका सिर नीचा नहीं करेगा। यह रुपया मैं लूँगा—लाइए। मुझे दीजिए—हाथ बढ़ाकर चेक लेते-लेते अरुणांशु ने फिर कहा, लेकिन इतने रुपये। इससे मैं क्या करूँगा? इतनी की तो मुझे जरूरत नहीं।

अरुणांशु की बात खत्म न हो सकी, सहसा ऐसे समय बन्द दरवाजे के बाहर से हल्की दस्तक सुनाई पड़ी और उसी के साथ सुवीर की आवाज, बाबू बाबू।

सिर्फ अरुणांशु ही नहीं, राजीव भी चौंक पड़ा और घबड़ा गया लेकिन अरुणांशु ने ही उसे इस विपत्ति से बचाया। बोला, सुवीर है। लेकिन आप फिक्र न करें बाबू। मैं—मैं उस आलमारी के पीछे छिप रहा हूँ। आप दरवाजा खोल दें—

कहते-कहते राजीव को दूसरी बात मुँह से निकालने का मौका दिये बिना ही अरुणांशु कमरे में रखी बड़ी आलमारी के पीछे जाकर छिप गया।

राजीव ने आगे बढ़कर दरवाजा खोल दिया।

सुवीर ने आकर कमरे में प्रवेश किया।

क्या चाहते हो सुवीर ?

...ू ।

...जीव ने बेटे के मुंह की ओर देखकर पूछा, क्या तुम कहीं बाहर निकल रहे हो ? रात को ? यह क्या । क्या तुम कहीं बाहर निकल रहे हो ?

सुवीर बोला, जी हाँ डैडी, बहुत ही जरूरी एक ट्रानजैक्शन है और ... ही रात को अगर मैं उसे कर सकूं तो पाँच हजार रुपये का मुनाफा—

राजीव ने आश्चर्य से पूछा, क्या कहते हो ? ऐसा कौन-सा ट्रानजैक्शन कि जिसे आज रात ही में अगर तुम कर सको तो पाँच हजार रुपये का ...नाफा होगा ?

सुवीर ने कहा, तुम्हें सारी बातें जल्दबाजी में मैं नहीं समझा सकता डैडी, लेकिन तुम यकीन कर सकते हो बिल्कुल क्लीन विजनेस है। दस हजार में खरीद सकूं तो खरीदार है जो आज ही रात पन्द्रह हजार में उसे खरीद लेगा। तुम मुझे एक दस हजार रुपये का बेयरर चेक तो देना डैडी।

मेरी समझ में नहीं आ रहा है सुवीर कि कौन सी ऐसी चीज है जो तुम दस हजार रुपये में खरीद कर रातो-रात पाँच हजार रुपये का मुनाफा कमा सकते हो, और उसके लिए बेयरर चेक की भी कौन-सी जरूरत है यह भी बात समझ में नहीं आयी। क्रास चेक मे ही तो पार्टी को पेमेंट करने का तरीका है।

जानता हूँ, लेकिन यह पार्टी नयी है इसके सिवा माल का हाथों हाथ ही खरीद-फरोख्त हो जायेगा।

हुँह।

आगे बिना कुछ और बोले राजीव ने ड्रायर से चेक की किताब निक... लड़के के नाम दस हजार रुपये का एक चेक लिखकर, चेक उसके हाथ... देते हुए कहा, सुनो सुवीर, तुम जानते ही हो कि एक लम्बे अरसे ... विजनेस कर रहा हूँ। खास-खास मौकों पर लोगों को शौकी विजनेस न ... पड़ता हो ऐसी बात नहीं, लेकिन मुझे लग रहा है कि तुम जरा ज्याद... पकड़ रहे हो।

चेक जेब में रखता हुआ सुवीर बोला, डैडी, मेरी समझ में नहीं ...

है कि तुम कहना क्या चाहते हो, ह्वाट यू आर ड्राइविंग ऐट ?

राजीव ने कहा, मैं सिर्फ इतना ही बताना चाहता हूँ कि रेस का जो घोड़ा सबसे तेज दौड़ता है उसी के गिरने की शंका ज्यादा होती है।

सुवीर ने जवाब दिया, मानता हूँ। लेकिन डैडी, तुम्हारी बात जिस तरह सही है—यह भी उतनी ही सही कि — जॉकी अगर माहिर हो तो घोड़ा इतनी आसानी से बोल्ट नहीं करता।

राजीव आगे कुछ न बोला।

सुवीर ने कहा, गुडनाइट डैडी।

फिर तेज चाल कमरे से निकल गया।

राजीव का सीना झकझोर कर एक लम्बी साँस निकल आयी।

पुत्र सुवीर के बारे में आजकल बहुत सारी बातें उसको सुनायी पड़ रही हैं। सुवीर आजकल सीधे रास्ते पर नहीं चलता, उसकी चाल-ढाल सन्देहजनक है ऐसी बातें भी कहीं-कहीं उसको सुनने को मिली हैं।

और बीच-बीच में इस सिलसिले में अपने बेटे सुवीर से राजीव ने कुछ कहा न हो ऐसी बात भी नहीं। लेकिन हमेशा वह ऐसा ही जवाब देता रहा है।

सुवीर के पैरों की आहट बरामदे पर विला जाते ही अरुणांशु आलमारी के पीछे से निकलकर शायद किवाड़ बन्द करने के लिए ही खुले दरवाजे की ओर बढ़ गया।

अरुणांशु। सिर उठाकर राजीव ने पुकारा।

अरुणांशु ने कहा, दरवाजा बन्द कर दूँ बाबू।

सहसा राजीव अरुणांशु को बाधा देते हुए मानो तड़प उठा, नहीं। नहीं—रहने दो। उसे खुला ही रहने दो। पच्चीस साल से जो जहरीली हवा इस घर में जमा हो गयी है उसे आज निकल जाने दो —

फिर भी अरुणांशु ने दरवाजा बन्द कर दिया और पलट कर कहा उसकी तो अब कोई जरूरत नहीं रही बाबू, मेरे परिचय की स्वीकृति तो मुझे मिल गयी है। चेक आप फिलहाल अपने ही पास रख लें। मुझे जब जो चाह

ड़ेगी आपसे आकर माँग लूँगा । इसके वाद और जरा आगे वढ़कर पिता
रों में झुककर प्रणाम करते हुए वोला, आशीर्वाद करें वावू । आज जो
आपसे मिला, मेरी वाकी जिन्दगी उसी से भरपूर वनी रहे ।

उठो अरुण । मैं अभागा हूँ— तुम्हें कौन सा आशीर्वाद दूँ । भगवान—
गवान तुम्हारा कल्याण करगे ।

तो अव मैं चलता हूँ वावू— अरुणांशु वोला ।

जाओगे ? जाने से पहले एक— सिर्फ एक वात मुझे वता जाओ अरु-
णांशु— मैं जानता हूँ तुम पर मेरा कोई हक नहीं है, फिर भी— फिर भी वता
जाओ कि वीच-वीच में तुम आओगे ।

आऊँगा । जव चारों ओर अँधेरा घिर आयेगा—कोई कहीं जागता नहीं
होगा तभी मैं आपके पास आऊँगा— कहकर अरुणांशु ने खुद ही आगे वढ़-
कर एक वार वाहर झाँका फिर निकल गया ।

राजीव पत्थर का वुत वना अकेला कमरे में खड़ा रहा ।

अपने अक्षम दुर्वल अभागे वाप को क्षमा—क्षमा कर दो अरुण, क्षमा कर
दो ।

होटल

मध्य कलकत्ते के फिरंगी टोले का एक होटल ।

होटल का नाम है 'दि मिडनाइट होटल' ।

आधीरात को ही इस होटल में भीड़ होती है । और यहाँ के अ
सव रात्रिचर हैं । रात जागने वाले अभिसारी ।

होटल का मैनेजर एक वर्मी है— नाम तुपे ।

यह आदमी देखने में मोटा और ठिगने कद का है।

छोटी-छोटी गोल-गोल आँखें। देखने से ही पता चल जाता है कि यह शख्स न केवल धूर्त और शैतान ही है बल्कि बड़े भयंकर स्वभाव का भी है।

बहुत दिनों तक बंगाल में रहने के कारण टूटी-फूटी बँगला भी बोल लेता है।

होटल तिमंजिला है।

पहली मंजिल में ही रेस्तराँ और नाच की मजलिस है, दुमंजिले पर पोशीदा ढंग से जुए का फड़ बिछता है और तिमंजिले पर रहते हैं होटल का मैनेजर तुपे और बर्मी नर्तकी माफिन और वहीं होटल का दफ्तर भी है।

उस दिन आधीरात को। नीचे के हॉल में डायस पर नृत्यकुशला माफिन दिलकश अदा से नाच रही है।

हकीकत में इस होटल का अन्यतम मुख्य आकर्षण बर्मी नर्तकी माफिन ही है।

रेस्तराँ में बहुत सारे लोग इकट्ठा हुए हैं, मेज-मेज पर वे तरह-तरह के पेय के साथ सुन्दरी नर्तकी के नाच का लुत्फ उठा रहे हैं।

अंग्रेजी लय पर ऑर्केस्ट्रा बज रहा है।

तिमंजिले के आफिस में दो कुर्सियों पर आमने-सामने तकदक पोशाक में सुवीर और उसका अन्तरंग मित्र और होटल का पार्टनर गणेन बोस बैठे दबी *आवाज में कुछ बातें कर रहे थे।*

गणेन बोस लम्बा-तड़ंग मजबूत काठी का था। बदन का रंग ताँबे का, आँखों की पुतलियाँ भूरी।

गणेन कीमती सूट पहने हुए था।

मुँह में पाइप।

सुवीर के हाथ में एक ९९९ का डिब्बा और मुँह में जलती सिगरेट।

किसी ने बाहर से कहा, भीतर आ सकता हूँ?

गणेन ने झट पूछा, कौन ?

तुपे हूँ सर।

आओ।

मैनेजर तुपे एक चीनी को साथ लेकर उस कमरे में दाखिल हुआ।

सुवीर और गणेन ने दोनों की ओर देखा।

तुपे ने सुवीर को सम्बोधित कर कहा, गुड इवनिंग। गुड इवनिंग मि० घोष। इसी का नाम लिंगफू है, आप हैं प्रोप्राइटर आफ दिस होटल, मि० घोष।

लिंगफू ने सुवीर की ओर देखकर टूटी-फूटी अंग्रेजी में कहा, गुड इवनिंग।

गुड इवनिंग।

फिर तुपे की ओर पलटकर सुवीर ने पूछा, लाये हो ?

तुपे ने जवाब दिया, जी।

कौन सी। ह्वाइट डस्ट या ब्लैक पिल्स ?

तुपे ने कहा, ह्वाइट डस्ट।

कितना ?

लिंगफू, मि० घोष को पैकेट दिखाओ। तुपे ने लिंगफू से कहा।

चोर-जेब से लिंगफू ने माचिस की डिबिया जैसा एक छोटा सा पैं निकाला और कहा, दो औंस।

सुवीर बोला, तुपे।

तुपे ने कहा, लेकिन जरा ज्यादा माँग रहा है मि० घोष।

सुवीर ने पूछा, कितना ?

फिफ्टीन हनड्रेड। पन्द्रह सौ।

पन्द्रह सौ। अच्छी बात, इस वार इसी भाव पर ले लो लेकिन व :कि इतनी कीमत होने पर उससे हम लोग माल नहीं लेंगे।

तुपे ने लिंगफू से यही कहा।

लिंगफू के पीले रंग के चपटे चेहरे पर कोई तब्दीली नहीं दिख

तुपे ने जेव से नकद नोटों में पन्द्रह सौ रुपये गिन कर लिंगफू

देते ही लिगफू ने पैकेट तुपे के हाथों में दे दिया।

सुवीर ने एक बार खुद पैकेट खोलकर देखा फिर उसे तुपे के हाथ में देते हुए बोला, उसे दो नम्बर पैसेंज से बाहर निकालकर आओ।

तुपे लिगफू को लेकर कमरे से निकल गया।

अचानक ऐसे ही समय मानों कुछ तेज चाल से होटल की सुन्दरी बर्मी नर्तकी माकिन नाच की साज-सज्जा पहने हुए ही कमरे में आ दाखिल हुई। अरे, सुवीर बाबू, गणेन बाबू, तुम दोनों ही यहाँ पर हो। वह काला चश्मा वाला लम्बा आदमी आज भी देखा नीचे के रेस्तरां में आया है और लगा आज उसके साथ दो साथी भी हैं।

सुवीर ने पूछा, गणेन, कौन है यह शख्स ?

माकिन की बातों पर गणेन मानो कुछ व्यस्त सा हो गया। और सुवीर की बातों का कोई जवाब दिये बिना सुवीर की ओर देख कर कहा, एक्सक्यूज मी सुवीर, मैं अभी आया। कहीं तुम चले न जाना। कहते हुए गणेन कमरे से निकल गया। उस समय कमरे में अकेले रह गये सुवीर और माकिन।

सुवीर डिब्बे से एक सिगरेट निकालकर उसे सुलगाने की कोशिश कर रहा था, माकिन आगे बढ़ कर सुवीर के हाथों से दियासलाई छीन एक काठी जलाकर उसकी सिगरेट सुलगाती हुई बोली, तुम्हारे साथ एक बात करनी थी सुवीर बाबू।

मेरे साथ ? — सुवीर ने गाल में धुआँ भर कर उसे छल्ला बना-बनाकर फेंकते हुए कनखियों से माकिन की ओर देखा।

जी हाँ। मेरे कमरे में अगर जरा आ जाओ।

चलो।

दोनों उस कमरे से निकल कर बगल के कमरे में गये। उस होटल में यह माकिन का अपना कमरा था।

बहुत ही करीने से सजाया साफ कमरा था।

कमरे में प्रवेश करते ही माकिन दरवाजा बन्द करती हुई बोली, बैठो, सुवीर बाबू।

हुँह। विश्वास। अपने पर ही मुझे विश्वास नहीं। खैर, एक बात याद रखना सुवीर बाबू, बहुत बड़े शैतान पर भी विश्वास किया जा सकता है लेकिन चोरबाजारी के हिस्सेदारों पर विश्वास नहीं किया जा सकता।

सुवीर मानों चौंक पड़ा, बोला, ऐसा क्यों कह रही हो माफिन ?

अचानक माफिन ने सुवीर से सवाल किया, परसों तुम्हारे दफ्तर में कोई गया था ?

सुवीर फिर चौंककर बोल पड़ा, हाँ। लेकिन तुम। — तुम उसके बारे में कैसे जान गयी ?

माफिन ने कहा, तुम्हारा ही विश्वासी कर्मचारी, तुम्हारी ही तनख्वाह खाने वाला।

सुवीर ने कहा, क्या कहती हो ? तुपे—तुपे ने तुम्हें यह बात बताई है ?

क्या यह बात सुनकर बड़ी हैरानी हो रही है ?

सुवीर ने फिर कहा, तुपे ने तुमको यह बात बतायी है ? सच बता रही हो माफिन ?

माफिन ने मुस्कराकर कहा, क्यों न बताये। वह मुझसे मुहब्बत करता है। इसीलिए कह रही थी सुवीर बाबू, आग से खेलते वक्त आग का धर्म न भूलना ही अक्लमन्दी का काम है।

माफिन की बातों से सुवीर अब सचमुच चिन्तित सा हो उठा, तुपे, तुपे ने ये सब बातें माफिन से बता दी हैं।

चिन्तित सुवीर के मुख की ओर देखती हुई माफिन ने फिर पूछा, क्या सोच रहे हो सुवीर बाबू ?

सुवीर ने धीमी आवाज मे कहा, सोच रहा हूँ, गले तक कीचड़ में धँस गया हूँ, उठना भी चाहूँ तो शायद आज उठ नहीं सकूँगा, इसके अलावा उठने का इरादा लेकर उतरा भी नहीं था, लेकिन माफिन, अगर तुम्हारी बात सच हो तो कहूँगा वे आज भी मुझे पहचान नहीं सके। डूबना हो तो सभी लोग एक साथ डूबेंगे, मैं दलदल मे डूब जाऊँ और वे सख्त जमीन पर खड़े तालियाँ बजायें— कम-से-कम सुवीर घोष ऐसा नहीं होने देगा।

माफिन ने कहा, भूल। सुवीर बाबू यह तुम्हारी भूल है, तुपे और तुम्हारे वह जिगरी दोस्त गणेन बाबू, उनको तो तुम आज तक पहचान नहीं सके— देखना आखिर तक उनके बदन पर एक खरोंच तक नहीं लगेगी— बीच में डूबना है तो तुम्हीं डूबोगे। अन्ध विश्वास से जिन पर सब कुछ का भार मालिक होते हुए भी सौंप रखा है, देखना एक दिन वही लोग—

माफिन की बात खत्म न हो सकी। सुवीर ने अब माफिन की ओर देखते हुए कहा, इतने दिनों से तुमने ये सब बातें मुझसे बतायीं क्यों नहीं माफिन ?

माफिन ने मानों सुवीर का अन्तिम वाक्य लोक सा लिया और बोल पड़ी, नहीं, और आज क्यों कह रही हूँ यही न ? बताया नहीं, क्योंकि इतने दिनों तक यह पहलू इतना प्रकट नहीं हुआ था लेकिन पिछले एक महीने से गौर कर रही हूँ कि मित्रता का मुखौटा भी शायद वे अब रख नहीं पा रहे हैं। इसके अलावा—

सुवीर ने पूछा, इसके अलावा और क्या माफिन ?

एक ठंडी साँस को रोक कर माफिन मानों कुछ आनाकानी करती हुई बोली, नहीं रहने दो— लेकिन हाँ, यह भी जान लेना कि जितने दिन मैं यहाँ पर हूँ तुम्हारे बदन पर एक खरोंच भी नहीं लगने दूँगी।

ऐसे ही समय सहसा कमरे के बन्द दरवाजे पर बाहर से हल्की दस्तक सुनाई पड़ी।

माफिन ने झट पूछा, कौन ?

बाहर गणेन का व्याकुल स्वर सुन पड़ा, मैं गणेन हूँ, क्विक, दरवाजा खोलो माफिन।

माफिन के दरवाजा खोल देते ही कमरे में हड़बड़ाकर प्रवेश करते हुए गणेन ने कहा, एक्सक्यूज मी सुवीर, तुम लोगों की एकान्त बातचीत में बाधा देनी पड़ी, लेकिन उधर—

सुवीर ने उद्वेगाकुल कंठ से पूछा, मामला क्या है ?

गणेन ने कहा, सब तरतीब से बताने की फुर्सत नहीं है— घर में ब्लड

हाउंड घुस पड़ा है—

सुवीर बोला, क्या ? पुलिस ?

गणेन ने जवाब दिया, सिर्फ पुलिस होती तो भी कोई बात थी—स्वयं डिटेक्टिव सुब्रत राय आ धमके हैं।

सुवीर ने घबराकर कहा, सुब्रत राय। सर्वनाश। पैकेट कहाँ है ? और तुपे ?

माफिन ने व्यस्त ढग से कहा, गणेन बाबू। तो तुम लोग जरा इधर सँभालो। उतनी देर में जाकर मेहमानों को एक सोलो डान्स ही दिखा आऊँ—

चचल फुर्तीले कदमों से माफिन कमरे से निकल गयी।

होटल मे मैनेजर तुपे के कमरे मे।

तुपे अपने कमरे मे खड़ा होटल के एक वेटर के साथ कुछ बातें कर रहा था कि हड़बड़ाते हुए सुवीर और गणेन कमरे मे दाखिल हो गये।

सुवीर और गणेन के पैरों की आहट से उधर पलटकर तुपे के देखते ही गणेन ने कहा, तुपे, हरी अप ! पुलिस।

पुलिस। कहाँ ?

नीचे।

सुवीर ने कहा, लिगफू से आज जो पैकेट खरीदा है वह कहाँ है ?

पैकेट उस वक्त भी सामने की एक मेज के ड्रायर में था, ड्रायर खोलकर उसे निकालकर सुवीर के हाथों में दे दिया तुपे ने।

ऐसे ही समय दुमजिले की सीढ़ी पर एक जूते की आवाज सुनाई पड़ी।

फौरन गणेन ने बाहर दरवाजे की सध से झाँककर देखा—होटल का ही एक सदा जाग्रत प्रहरी मन्नू है।

मन्नू कमरे मे आ गया।

क्या खबर है मन्नू ? गणेन ने पूछा।

अभी मैनेजर का नीचे जाना जरूरी है। आज कुछ मामला ठीक नहीं

लग रहा है।

दीवार पर एक पोशीदा बटन दबाते ही एक अदृश्य गुप्त पथ खुल गया। मन्नू और तुपे उस रास्ते से गायब हो गये।

उस गुप्त रास्ते से होटल के बिल्कुल बाहर भी पहुँचा जा सकता है और नीचे के रेस्तराँ में भी दाखिल हुआ जा सकता है। दो छिपे हुए पैसेज हैं।

गणेन तुम भी जाओ— सुवीर ने कहा।

गणेन भी उस रास्ते से उनके पीछे-पीछे चला गया।

सुवीर ने खुद भी इस बार पैकेट को जेब में डालकर हाथ की जलती सिगरेट का टुर्रा सामने की मेज के ऐशट्रे पर जल्दी में छोड़कर उसी एक ही रास्ते से गायब हो गया।

सूने कमरे में ऐशट्रे पर उस अधजली सिगरेट से धुएँ की रेखा कुंडली बनाकर ऊपर उठती रही।

नीचे के हाल में।

डायस पर दो नर्तकियाँ पहले से ही नाच रही थीं, नाच से ताल मिलाते एक समय उनमें मिलकर माफिन भी नाचने लग गयी थी।

मैनेजर तुपे भी काउंटर पर आकर खड़ा हो गया था।

माफिन के वर्णित वह काला-चश्मा वाला लम्ब-तड़ंग आदमी अब तक एक किनारे एक मेज के सामने बैठकर कोल्ड ड्रिंक लेकर बीच-बीच में एकाध चुस्की लगा रहा था, सहसा वह उठकर खड़ा हो गया और नजदीक ही मेज के सामने बैठे दो सूट पहने व्यक्तियों को आँखों से इशारा करते ही वे भी साथ ही साथ उठकर खड़े हो गये।

यह लम्बा सा। आदमी कोई और नहीं, स्वयं डिटेकटिव इन्सपेक्टर सुब्रत राय था।

सुब्रत सीधे मैनेजर के काउंटर के सामने आकर दबी जबान में बोला, तुम ही शायद इस होटल के मैनेजर हो ?

तुपे ने मानों कृतकृत्य सा भाव दिखाते हुए कहा, यस सर, ह्वाट मैन आइ डू फॉर यू सर ?

सुव्रत बोला, क्या नाम है तुम्हारा ?

तुपे ने कहा, तुपे सर।

सुव्रत बोला, हुं। सुनो, आइ हैव गॉट ए सर्च वारट— मैं स्पेशल डिटेक्टिव ब्रांच से आ रहा हूँ— मेरा नाम सुव्रत राय है। कहते हुए सुव्रत ने तुपे की ओर एक कार्ड बढ़ा दिया।

कार्ड पर कनखियों से नजर डालता तुपे मानो आश्चर्यचकित हो गया है ऐसा भाव दिखाकर बोला, लेकिन यह सर्च वारट क्यों सर ?

सुव्रत ने कहा, अपने कमरे में चलो। वहीं बातचीत होगी, क्यों ?

तुपे ने जवाब दिया, मोस्ट ग्लैडली। आइए, आइए सर !

सीधे सीढ़ी के रास्ते से ही इस बार तुपे सुव्रत को लेकर अपने कमरे में गया।

सुव्रत की आँखों के इशारे से उसके दोनो सहकारी भी उसके पीछे-पीछे आये।

एक गद्देदार कुर्सी दिखाकर आवभगत करते हुए तुपे ने सुव्रत को बैठने के लिए कहा, मेक योरसेल्फ कमफर्टेबल सर। तशरीफ रखिए, चाय-काफी-कोजे ऑर एनी ड्रिंक सर।

सुव्रत ने हलके से कहा, नहीं, शुक्रिया।

तुपे के विनीत अनुरोध पर भी सुव्रत बैठा नहीं और खड़े-खड़े ही अपनी स्वाभाविक तेज तलाशी निगाहों से चारों ओर देखता रहा।

मझोले आकार का कमरा।

दो शीशे वाली दीवार आलमारी। एक आलमारी में कुछ बही-रजिस्टर और शराब की बोतलें दिखाई दे रही हैं।

दूसरी आलमारी में कपड़े-लत्ते।

एक कोने में लकड़ी के तख्त पर एक छोटी लोहे की तिजोरी रखी हुई है। दूसरी ओर सिंगल पलंग पर बिस्तर बिछा हुआ है। एक मेज और दो गद्देदार कुर्सियाँ भी कमरे में हैं।

कायक सुव्रत ने ही प्रश्न किया, ऊपर इस कमरे के अलावा और कितने हैं इस होटल में मि० तुपे ?

और दो कमरे अगल-बगल हैं सर। तुपे ने जवाब दिया।

हूँऽ। चलो तो। बगल का कमरा एक बार देख आऊँ।

आइए। कहकर तुपे आगे बढ़ गया।

सभी लोग आकर सुवीर के उस दफ्तर वाले कमरे में प्रवेश किये क्योंकि ही इस कमरे के बगल का कमरा है।

चारों ओर तेज निगाहों से देखते हुए सुव्रत की नजर मेज पर रखे खू सूरत ऐशट्रे पर पड़ी जिसमें प्रायः जल चुकी सिगरेट के अन्तिम भाग से धुंए की एक हलकी सी वक्ररेखा ऊपर उठ रही है।

सुव्रत ने आगे बढ़कर खामोशी से ऐशट्रे से सिगरेट का टुर्रा उठा कर तेज निगाहों से देखा और देखते-देखते सुव्रत का चेहरा मानों जरा प्रसन्न हो उठा। धीमी आवाज में मानों आत्मगत रूप से ही वह बोला, हूँऽ। ९९९—स्टेट एक्स-प्रेस, सुवीर घोष की फेवरीट ब्रांड। फिर तुपे की ओर पलटकर पूछा, खैर, मि० तुपे, तुम लोगों के इस होटल के प्रोप्राइटर मि० सुवीर घोष इस समय कहाँ हैं ? वे तो दिखाई नहीं पड़ रहे हैं।

आप क्या कह रहे हैं सर ?

तुपे मानों सुवीर की बात पर विस्मित हो गया हो ऐसा भान करता हु बुदबुदाया, इस होटल का प्रोप्राइटर मि० सुवीर घोष।

सुव्रत ने तुपे के विस्मय भरे चेहरे की ओर देखते हुए हलकी सी व्यंग मुस्कुराहट होंठों पर लाकर कहा, यह नाम मानों तुम्हारे लिए बड़ा अपरि सा लग रहा है, मि० तुपे ?

जी। यानी— मैनेजर तुपे फिर भी हकलाता रहा। और केवल तरह मुंह में लगा बर्मा सिगार का सिरा दाँतों से चबाता रहा।

सुव्रत की आवाज कुछ कड़ी हो गयी, बोला, मि० तुपे, तुम्हारे यही पहली बार आया हूँ ऐसी बात नहीं। मेरे हाथ का सर्च-वारं समझ लेना चाहिए था। सिर्फ यही नहीं, आज भी यहाँ

से पूर्व पीछे की गली में मि० सुवीर घोष की मॉरिस दूरार पार्क की हुई गाड़ी थी। रोजाने की तरह यह भी अँधेरे में नजरों से चुका नहीं। और उसकी गाड़ी और उसके घर के नम्बर के साथ मेरा खास परिचय भी है। और यह भी जानता हूँ कि इस होटल का आदि और असल मालिक मि० सुवीर घोष है। अब बताओगे मि० घोष कहाँ हैं? तुपे ने समझ लिया कि अब की कोशिश बेकार है, फिर भी आखिरी कोशिश करने से बाज न आया, बोला, लेकिन मि० घोष तो आज आये नहीं।

सुव्रत ने इस बार मुस्कुराकर कहा, तुम तो सिगार पी रहे हो, फिर इस कमरे में थोड़ी देर पहले कौन थे बताना, जो इस ९९९ स्टेट एक्सप्रेस सिगरेट का इस्तेमाल कर चले गये हैं।

तुपे ने फिर भी कहा, लेकिन यहाँ तो कोई—

सुव्रत बोला, नहीं था— है न? तो यह सिगरेट बेशक इस कमरे में उड़कर नहीं आयी होगी?

ठीक ऐसे ही समय मानो कुछ घबरायी हुई सी मार्फिन आकर कमरे में दाखिल हुई और सीधे मेज की ओर बढ़ती हुई ऐशट्रे की ओर देखकर बोली, अरे। मेरी सिगरेट मैं ऐशट्रे पर छोड़ गयी थी—

सुव्रत ने जवाब दिया, अच्छा तो सुन्दरी तुम ही—

सिगरेट का टुर्रा बुझाकर सुव्रत उस वक्त भी अपनी उँगलियों में पकड़े हुए था, बोला, अफसोस। यह रही, यह तो एक दम जलकर खत्म हो चकी है। तो तुम भी इसी होटल की—

मार्फिन ने जवाब दिया, जी—

एकाएक सुव्रत बोल पड़ा, हाँ हाँ— याद आ गयी, तुम ही [illegible]

होटल की वह डान्सिंग ब्यूटी, मिस—

मादाम मार्फिन प्लीज। मार्फिन ने सुव्रत की बात पूरी कर दी।

इसके बाद ही दिलकश अदा में मुस्कुराकर [illegible]

में चली—

मार्फिन जितनी फुर्ती से आयी थी वैसी ही [illegible]

सुव्रत ने अब तुपे की ओर देखते हुए अपने सहकारियों से कहा, अब तलाशी तो खत्म कर डालो अम्बिका।

सुव्रत के सहकारी अम्बिका और अतुल ने कमरे में तलाशी शुरू कर दी।

लेकिन कुछ भी बरामद नहीं हुआ।

इसी बीच सुव्रत कमरे से निकल कर बगलवाले कमरे की ओर बढ़ा।

तुपे ने सुव्रत का पीछा किया।

दरवाजा बन्द देखकर सुव्रत ने तुपे की ओर देखा तो उसने बताया, यह माफिन का कमरा है सर।

माफिन।

ऐसे ही समय जीने से ऊपर आ माफिन अपने कमरे के सामने खड़ी हो गयी, बोली— आइए, देख लीजिए, कोई अफसोस क्यों रह जाय—

माफिन ने ही चाभी से दरवाजा खोला और सुव्रत को लेकर अन्दर दाखिल हो गयी। क्षणभर में चारों ओर सप्रशंस दृष्टि से देखकर सुव्रत ने कहा, वाह! रुचि और सौन्दर्य-बोध दोनों ही मौजूद हैं—

माफिन ने जवाब दिया, थैंक यू फॉर द कॉम्प्लीमेंट्स इन्सपेक्टर रॉय!

सुव्रत बोला, मैं कहना चाहता था मिस—

माफिन बोल पड़ी, मादाम माफिन—

अरे हाँ। मादाम माफिन— बड़ा मीठा सा नाम भी है। तो मैं कह रहा था कि तुम कितने दिनों से इस होटल में काम कर रही हो?

माफिन ने जवाब दिया, तीनेक साल बेशक हो गये होंगे— रंगून से आकर बराबर इसी होटल में ही हूँ।

सुव्रत बोला, अच्छा। तो अचानक अपना वतन रंगून छोड़कर चली क्यों आयी?

रहस्यमय ढंग से मुस्कुराती माफिन ने कहा, आप इसे कह सकते हैं— दिल की कशिश से—

सुव्रत ने सकौतुक कहा, दिल की कशिश तो इसे कहना ही पड़ेगा। अगर कुछ बुरा न मानो मादाम, एक छोटा सा कौतूहल दबा नहीं पा रहा हूँ, बता

सकती हो, तुम जैसी सुन्दरी को जो इतनी पुरजोर कशिश से खींच सकता है—वह कौन सा शब्द तुमने इस्तेमाल किया—दिल की कशिश से ?—

तुपे की ओर आँखों से इशारा करती हुई माफिन ने एक दिल-फरेब अदा में मौन जवाब दिया।

सुव्रत आश्चर्य करने लगा। बोला, ओंऽ। ऐसी बात, मैं तो सोचा था कि शायद मि० सुवीर घोष ही—

सुवीर घोष। शब्द को हैरत से दुहराती हुई माफिन ने सुव्रत के मुख की ओर देखा।

हाँ, इस होटल के प्रोप्राइटर मि० सुवीर घोष।

तुपे की ओर कनखियों से एक बार देखते ही माफिन पूरा मामला समझ गयी थी, मुस्कराकर अब वह बोली, यह मत भूल जाइएगा मि० राय कि मैं बर्मी हूँ।

तो ऐसा अनोखा सिलसिला कैसे जुड़ गया, माफिन। सुव्रत ने फिर सवाल किया।

यह होटल पहले मेरा और तुपे का ही था। माफिन ने जवाब दिया।

ओहो, यह बात है !

ऐसे ही समय अतुल और अम्बिका की आहट मिली।

सुव्रत ने पूछा, क्या खबर है अतुल ?

गली से ड्राइवर गाड़ी ड्राइव कर ले गया। अतुल ने कहा।

इसके बाद भी न जाने क्या सोचकर सुव्रत विदा लेने के लिए तैयार हुआ और जाते वक्त माफिन और तुपे की ओर देखते हुए बोला, बेवक्त आकर तुम लोगों को परेशान करना पड़ा इसलिए मुझे सख्त अफसोस है। मि० तुपे और मादाम माफिन, अब इजाजत—

माफिन ने मुस्कुराकर कहा, नहीं-नहीं, इसमें परेशान होने की बात है ? बीच-बीच में पधारियेगा मि० राय।

सुव्रत बोला, बेशक।

नया सुर

डा० सुहृद सरकार ने मानों जोर-जबरन ही अरुणांशु को अपने घर पर रख लिया लेकिन अरुणांशु को किसी भी प्रकार से शान्ति नहीं मिल रही थी। उसको सिर्फ यही लग रहा था कि डा० सरकार के पास नाहक रहकर उन्हें क्यों वह असुविधा पहुँचाए। दिल में आशा-आकांक्षा लिये वह भागता हुआ आया था कि माँ-बाप के चरणों में वह अपना थोड़ा सा स्थान बना लेगा लेकिन उसकी बदनसीबी है कि वह सपना मरीचिका जैसा ही हवा में मिल गया। पिता जी उसे प्रकाश्य में स्वीकार करने को तैयार बेशक हो गये थे लेकिन किस प्रकार वह अपने पिता को समाज के सम्मुख छोटा कर दे। नहीं, नहीं—ऐसा उससे नहीं होगा। इससे बेहतर है—गैर की यह पनाह। फिर भी तो लुक-छिपकर कभी-कभी माँ को देख आ पाऊंगा। पिता जी से भी मुलाकात होगी।

उस दिन डाक्टर सरकार के मकान में थोड़ी देर पहले ही साँझ उतर आयी थी।

लाइब्रेरी-कक्ष में डाक्टर सुहृद सरकार और अरुणांशु बैठे बातें कर रहे थे।

बत्ती बुझी हुई। इसलिए कमरे में अँधेरा काफी भर गया था।

डाक्टर अपनी बात ही अरुणांश से बता रहा था, फिर समझे अंशु, इत्ती सी नन्ही बच्ची मीली को मेरे हाथों देकर उसकी माँ सुरमा ने आँखें मुंद लीं। मीली के जन्म लेने के बाद से ही न जाने कौन सी घातक बीमारी उसके पीछे पड़ गयी कि इतनी दवा-दारू इलाज तीमारदारी सब बेकार गयी—किसी से कुछ बना नहीं। तुम लोग कहते हो ईश्वर दयालु होता है। दयालु तो बेशक है। वर्ना मेरी इस छोटी सी सुख की गिरस्ती में आग लगाकर दया का नमूना न पेश किया होता वह। खैर, रहने दो वह बात। जो बता रहा था, सभी कुछ एक ओर सरकाकर अपनी छोटी सी बेटी मीली के पीछे ही जुट गया उस वक्त।

धीमी आवाज में अरुणांशु ने कहा, आज तो आपकी सारी मेहनत सफल

हुई है— वे लायक हो गयी हैं डाक्टर जी ।

सुहृद ने कहा, हाँ । आज बी० ए० की परीक्षा देकर मेरी मीली बेटी घर लौट आयी है । देखो न, आते ही घर की सफाई में लग गयी है । ओफ, इतने बड़े मकान मे सिर्फ दो-तीन नौकर लेकर किस तरह से मैंने इतने साल गुजारे हैं अरुणांशु, मैं ही जानता हूँ । मीली बेटी के आते ही मानो मेरा घर फिर नींद से जाग पडा है । भली याद आयी, तुमने मेरी मीली बेटी को देखा कि नहीं, बातचीत हुई है कि नही तुम्हारे साथ ?

जी देखा है । यानी—हकलाते हुए अरुणांशु ने मानो किसी तरह से इस चर्चा से कतराना चाहा ।

सुहृद बोला, ताज्जुब है । ठहरो । उसे बुलाता हूँ, उससे मिलकर तुम्हें बड़ी खुशी होगी ।

सहसा हडबडाकर अँधेरे मे ही अरुणांशु कुर्सी छोड़कर खड़ा हो गया और दबी हुई व्याकुल आवाज में बोला, नही, नही— उनको मत बुलाइए, नही, नही—

सुहृद दंग रह गया । विस्मित हो उसने पूछा, क्यों अरुणांशु ?

अरुणांशु बोला, नही । उनको मत बुलाइए— । आज तक मेरी यह घिनावनी भयंकर सूरत कोई भी बरदाश्त नही कर सका है । किसी भी आदमी के लिए मुझे बरदाश्त करना संभव नही है ।

व्यथित स्वर मे डाक्टर ने कहा, छीः छीः । यह क्या सब बक रहे हो अरुणांशु । दूसरा कोई भी कुछ करे पर वह मेरी बेटी है, वह तुमको देखकर घृणा नही करेगी । नही— वह बेशक—

अरुणांशु ने फिर डाक्टर सरकार को बाधा देते हुए कहा, दूर से आज उनको मैंने सवेरे देखा है डाक्टर जी, वह खिले फूल जैसी निर्मल है । पवित्र । शायद आप ही की बात ठीक हो । वे मुझसे घृणा नहीं करेंगी । लेकिन मैं, मुझसे वह बरदाश्त नही होगा— आप नही जानते— मैं, मैं खुद ही अपने से कितनी घृणा करता हूँ— मेरा सारा अंग— मेरी सारी अन्तरात्मा घृणा से कितनी सिकुड़ जाती है जैसे ही मैं अपनी ओर देखता हूँ ।

सुहृद ने शिकायत के लहजे में कहा, अब भी यह सब बातें सोचा करते हो अरुणांशु ?

अरुणांशु ने जवाब दिया, जो चिन्ता मुझे जन्म से लील चुकी है, मेरे वर्तमान और सारे भविष्य को जिसने घोर अन्धकार में फेंक दिया है उसे मैं भूल भी जाऊँ लेकिन वह तो मुझे नहीं भूल पाती। क्लेश और वेदना से अरुणांशु का स्वर मानों टूट कर चूर-चूर हो गया, उसने दोनों हाथों से अपना मुंह ढाँप लिया है।

सुहृद ने नेह से नम स्वर में पुकारा, अरुणांशु !

ऐसे ही समय बाहर सुबीर की आवाज सुनाई पड़ी, चाचा जी, चाचा जी। मधु।

डा० सरकार झट उठ कर खड़े हो गये, सुबीर, सुबीर आया है। सुबीर, मैं लाइब्रेरी वाले कमरे में हूँ, आओ। आओ—डा० सरकार ने झट से बत्ती जला दी।

क्षणभर में उजियाले से कमरे का अँधेरा दूर हुआ।

लेकिन दिखाई पड़ा कि न जाने इसी बीच कब अरुणांशु चुपचाप कमरे से निकल गया है।

अपने अनजाने ही शायद डा० सरकार के सीने को कँपाती एक ठंडी सांस निकल आयी।

सुबीर कमरे में आ गया। बेहतरीन लकदक पोशाक में काफी चुस्त व चाक-चौबन्द।

लाइब्रेरी के अँधेरे कमरे में बैठे क्या कर रहे थे चाचा जी। सुबीर ने सवाल किया।

पढ़ते-पढ़ते अँधेरा घिर आया था बेटा, पता नहीं चला।

सुबीर की आवाज किसी और के कानों में भी जा पहुँची थी, डा० सुहृद सरकार की मातृहारा सन्तान बेटी मिताली या मीली के कानों में।

इस गले की आवाज सुनने के लिए ही दिन भर मीली बेकरार बैठी थी। इसीलिए उस गले की आवाज सुनते ही मीली नीचे उतर आयी थी। और वह सीधे लाइब्रेरी कक्ष में आ दाखिल हुई।

मीली की उम्र कोई उन्नीस-बीस वर्ष की है। इस बार उसने बी० ए० की परीक्षा दी है।

मीली देखने में गजब की सुन्दरी है। उसकी छरहरी काठी भी सुहावनी है।

बेटी को कमरे में प्रवेश करते देख डा० सरकार ने कहा, लो मीली, देखो कौन आया है।

सुवीर ने मीली की ओर देखकर पूछा, अच्छी तो थी मीली। तुम्हारा इम्तहान कैसा रहा ?

अच्छा।

डा० सरकार झट उठकर खड़े हो गये, बोले, मैं जरा लैबोरेटरी में जा रहा हूँ बेटी, एक ब्लड-स्लाइड की जाँच करनी है। तुम लोग ड्राइंगरूम में जाकर बातें करो।

डा० सरकार कमरे से निकल गये।

मीली भी सुवीर के साथ दूसरी बात किये बिना ही कमरे से निकल जाने के लिए दरवाजे की ओर बढते ही सुवीर ने मीली के गमन-पथ की ओर देखा। सुवीर के होंठों के छोर पर एक मुस्कुराहट जाग उठी।

समझ गया कि दोपहर को फोन मिलने के बावजूद सुवीर मिलने नहीं आया इसलिए मीली उस पर रूठी हुई है।

सुवीर ने कहा, मीली। सुनो, सुनो।

लेकिन मीली ने कोई आहट नहीं दी, सीधे कमरे से निकल गयी।

ढूंढ़ते-ढूंढते आखिर तक सुवीर ने दुमंजिले के बरामदे पर आकर मीली को पाया।

वरामदे के गमलों में मल्लिका और रजनीगन्धा खूब खिली है।

अँधेरे में हवा उसी की सुगन्ध से भरी है।

चुपचाप रेलिंग पकड़े मीली अकेली खड़ी थी। सुवीर आकर विल्कुल मीली के वगल में खड़ा हो गया और हल्की आवाज में पुकारा, मीली!

मीली ने कोई जवाव नहीं दिया।

नाराज हो गयी हो मीली?

सुवीर के सवाल का जवाव दिये विना ही मीली ने अव कहा, कमरे से चले क्यों आये?

सुवीर ने कहा, तुम्हारे अचानक कमरा छोड़कर चले जाने के वाद ही सहसा वह कमरा विल्कुल सूना हो गया, इसलिए मैं भी सीधे तुम्हें ढूंढ़ते-ढूंढ़ते यहाँ चला आया।

मीली ने धीमी आवाज में कहा, मधु से चाय देने के लिए कहा है। उसी कमरे में वह चाय ले जायेगा। जाओ, कमरे में जाओ।

सुवीर वोला, और तुम...

मुझे वड़ी नींद आ रही है...वहुत थकी हुई हूँ। मैं अपने कमरे में जा रही हूँ।

सुवीर ने कहा, मेरा इतनी देर न आना, मानता हूँ कि वेजा हुआ लेकिन उस तुच्छतम अनिच्छाकृत अपराध की सजा देने के लिए अगर इस वीसवीं सदी की किसी लड़की की, अपने परिचित लड़के के आते ही नींद की अभिलाषा प्रवल हो उठ, तो...

मीली ने कहा, तो क्या?

सुवीर ने कहा, तो समझना पड़ेगा कि शब्दकोश में—प्रिय पथ निहार कितनेहूँ उनींद रातें—जैसे वाक्य में न तो कोई कवित्व है और न माधुर्य, वह झूठ है, कोरी झूठ है।

इतनी देर में मीली की भी जुवान खुली, हाँ, अव तो ऐसा कहोगे ही और सवेरे से मैं जो दरवाजे पर आँखें गड़ाये, कान पसारे वैठी हूँ। सच्ची वात क्यों नहीं वताते, दफ्तर में वैठे हजार-हजार रुपये के नोट गिनने में मश-

भूल थे, मेरी बात...

सुवीर हँस पड़ा, बात झूठ नहीं मीली। लेकिन वह तो सिर्फ हाथ की लक्ष्मी है, तुम तो मेरी मानसलोक की लक्ष्मी हो। मानसलक्ष्मी को गृहलक्ष्मी के रूप में वरण कर ले जाने के लिए सबसे पहले नोट लक्ष्मी की ही जरूरत पड़ेगी — इसीलिए यह बिल्कुल अनिच्छाकृत विलम्ब है देवी—

ऐसे ही समय मधु आकर बरामदे पर खड़ा हो गया, दीदी जी।

क्या है मधु भाई।

मधु ने कहा, बाहर के कमरे में चाय दे दी है दीदी जी, और...बाबू कह रहे थे कि भैया जी से कहा जाय कि रात का खाना खाकर ही जायें।...

बाबू कहाँ हैं मधु भाई ?

मधु ने कहा, बाबू लैबोरेटरी में काम कर रहे हैं।

मधु चला गया।

मीली का एक हाथ अपने हाथों में लेकर सुवीर ने कहा, गुस्सा ठंडा हुआ देवी जी ? प्रसन्न हो न अब ?

नहीं। तुम्हारे साथ तो बात ही नहीं करनी चाहिए......मीली ने जवाब दिया।

आज के लिए प्रसन्न हो जाओ देवी। आगे से ऐसी गलती नहीं होगी।

मैं प्रसन्न होऊँ या न होऊँ इसमें तुम्हारा क्या बनता-बिगड़ता है ?

क्या कहती हो ? तुम बिन सब सूना हमारो...

क्या कहना है ! तभी तो दो महीने में एक बार भी होस्टल में जाकर मिले नहीं। मेरी बात तो क्या सोचते होंगे तुम—

सोचता—हमेशा सोचता ही रहता हूं। देखो, अब तो कोई बहाना नहीं रहा, इम्तहान हो गया...सच मीली, इस तरह उम्मीद में दिन और गुजारा नहीं जाता।

उधर डा० सरकार के बत्ती जलाने के साथ ही साथ मरणाणु दूसरे दरवाजे से अपने कमरे में भाग आया था।

इस मकान में सवेरे मीली के पधारते ही अरुणांशु ने उसे देखा था। सच कहा है उसने, खिले फूल जैसी ही है मीली। मानों शुभ्र रजनीगन्धा का एक गुच्छा हो।

उसके बाद और भी कितने ही बार ओट में छिपकर मीली को देखने की लालच को अरुणांशु रोक न सका।

देख-देखकर उसका जी नहीं भरता था।

अन्धकार में अपने कमरे में भाग कर इसीलिए अरुणांशु सोच रहा था, यही अच्छा है। अन्धकार ही उसके लिए बेहतर है। संसार के सारे घरों के दरवाजे जिसके लिए बन्द हैं उसके लिए यह अँधेरा ही बेहतर है।

बगल का कमरा ही इस घर का खाने का कमरा है।

सुवीर और मीली दोनों मेज पर खाने बैठे हैं।

उनकी बातचीत, हँसी के कतरे उसके कानों से कभी-कभी आ टकराते।

चारों ओर की खिड़कियों को भी अरुणांशु ने बन्द कर दिया।

नहीं, नहीं—आनन्द की कोई ध्वनि नहीं। सारे शब्द लुप्त हो जायें।

यह क्या ! ऊपर के रोशनदान से चाँदनी आ रही है शायद। लेकिन क्यों? क्यों ? उसकी कोई आवश्यकता तो है नहीं। आकाश की चाँदनी बुझ जाय, उसकी आँखों के सामने से लुप्त हो जाये। अन्धकार। हाँ, अन्धकार ही अच्छा है। अन्धकार में ही वह रहेगा। — अन्धकार में ही वह खुश है।

हे विधाता। अगर तुम सचमुच हो, तो मुझ पर दया करो प्रभु ! दया करो। सिर्फ वह रोशनी ही नहीं, मेरी आँखों की रोशनी भी तुम छीन लो।

फिर मीली और सुवीर की बातें कानों से आ टकराई।

सुवीर बोला, ओह ! रात के साढ़े ग्यारह बज गये। आज के लिए क्षमा करना। अब मुझे सचमुच उठना ही पड़ेगा।

मीली का अनुरोध सुनाई पड़ा, जरा देर और बैठ जाओ न। सिर्फ साढ़े ग्यारह ही तो बजे हैं रात के।

सुवीर बोला, नहीं। नहीं—आज एक खास जरूरी काम है मीली। सच बता रहा हूँ।

काम और काम। दादा रे दादा। मुझे जरा इतनी रात गये कौन सा जरूरी काम है तुम्हें।

बता तो रहा हूँ मीली, एक काम है। एक जरूरी बिजनेस। अच्छा, तो अब उठता हूँ, चाचा जी से मुलाकात नहीं हुई। शायद लेबोरेटरी में व्यस्त है, इस वक्त उनको डिस्टर्ब नहीं करूँगा। उनसे बताना—

बता दूँगी। चलो तुम्हें पहुँचा आऊँ—फिर कब आ रहे हो? कल आ रहे हो न?

आऊँगा। सुवीर ने कहा।

स्वामी जी का कहना याद पड़ गया अरुणाभ को, जब कहीं से सान्त्वना न मिले बाबु तो यह वीणा रखी है। वीणा तुम्हें तसल्ली देगी। हाँ, ऐसा ही—ऐ मेरे सारे क्लेशों की सान्त्वना, आओ! आओ मेरे मित्र! तुम ही आओ।

अरुणाभ वीणा लेकर उसके तारों पर सुर निकालने लगा।

दुःख तिमिर

सुवीर को गाड़ी तक पहुँचाकर सीढ़ी तक लौट आते ही वीणा की सुर-लहरी मीली को सुनाई पड़ी। वह ठिठककर खड़ी हो गयी।

इतना बेहतरीन बीन कौन बजा रहा है?

ताज्जुब है। लग रहा है इसी मकान में कहीं कोई वीणा बजा रहा है। लेकिन इस मकान में वीणा कौन बजायेगा।

मीली ढूँढने लगी, वीणा कहाँ बज रही है।

ढूँढते-ढाँढते नीचे लाइब्रेरी कक्ष के बगल के कमरे के बन्द दरवाजे

खड़ी हो गयी। लगा इस कमरे में वीणा बज रही है। हाँ, इसी
ा।
ोली ने दरवाजे पर हल्की दस्तक दी। लेकिन कोई आहट नहीं मिली।
ार मीली ने दरवाजे पर जरा जोर से दस्तक दी।
वीणा थम गयी और कमरे में कोई भी आहट सुनाई नहीं पड़ी।
मीली ने अब सवाल किया। कमरे में कौन है ? दरवाजा बन्द क्यों है ?
लेकिन कोई आहट नहीं।
जवाब क्यों नहीं देते ? कमरे में कौन है ? फिर मीली ने आवाज दी।
इस बार भीतर से धीमी सी आवाज आयी, कौन ?
दरवाजा खुल गया। कमरे में अँधेरा।
अँधेरे कमरे में पैर रखते ही मीली क्षण भर के लिए ठिठकी। फिर हल्की आवाज में पूछा, यह क्या, कमरे में अँधेरा क्यों है ? कौन है कमरे में ?
अरुणांशु ने अब कहा, मैं हूँ। आँखों की बीमारी है मेरी, इसलिए डाक्टर जी, आपके पिता जी ने आँखों में रोशनी न लगे इसकी मनाही कर दी है।
अच्छा।
लेकिन आप खड़ी क्यों हैं। बैठिए। देखिए—आपके सामने ही दाहिने तरफ एक कुर्सी है।
मीली ने अँधेरे में ही टटोल कर कुर्सी खींच ली और उस पर बैठ गयी।
आप ही शायद बीन बजा रहे थे ? मीली ने पूछा।
जी। रोशनी में न निकलने का हुक्म है, सो अँधेरे में अकेले भूत हमेशा बैठा रहता हूँ तो बीच-बीच में जरा बीन बजाकर—
लेकिन आपको पहचान नहीं पा रही हूँ। आपका नाम क्या है ?
मेरा नाम है अरुणांशु घोष।
मीली ने फिर कहा, कितना बेहतरीन हाथ है आपका साज पर।
मैं क्या खाक बजाता हूँ मीली देवी। जिनसे मुझे इसकी शिक्षा
उनका बजाना अगर आप सुनतीं।

थी ? फिर जरा रुक कर बोली, आप शायद इसी मकान में रहते हैं ? सुबह से तो आपको देखा नही।

जी। आपके पिता जी के एक मित्र डाक्टर के इलाज मे हूँ, बाहर नहीं निकलता इसलिए आपने मुझे देखा नहीं।

रोशनी क्या आपकी आँखों को कतई बरदाश्त नही होती अरुण बाबू ?

रोशनी—नही।

एक उसाँस अरुणाशु के सीने को कँपाकर निकल गयी।

आप यहाँ कितने दिनों से हैं अरुण बाबू ?

करीब दो महीने हो गये होंगे।

क्यों, अँधेरे में रहते हुए आपको तकलीफ नही होती।

नहीं, तकलीफ भी क्या। बहुत दिनों से इसी तरह से हूँ इसलिए आदी हो गया हूँ।

अच्छा ही हुआ, बाजा सुनने का मुझे बड़ा शौक है, बीच-बीच में आपको आकर तंग किया करूँगी।

नही-नही, इसमें तंग होने की कौन-सी बात है। जब खुशी आइए, लेकिन—

लेकिन—?

रात को आयें तो बेहतर है।

क्यो ?

क्योंकि दिन की रोशनी मे मैं आँखें कतई नही खोल पाता हूँ मीली देवी, मुझे बड़ी तकलीफ होती है।

अच्छी बात है। तभी आया करूँगी।

उस रात को अरुणाशु की आँखों में नींद नहीं आयी।

बार-बार घूम-फिर कर संगीत की गूँज सी एक ही बात उसके दिल से आ टकराती, मीली। मीली आज उसके कमरे में आयी थी।

देवी । स्वप्न-प्रतिमा । सुख-कल्पना से गढ़ी हुई । कितनी मीठी बातें ।
मनुष्य का स्वर क्या इतना मधुर हो सकता है !

लाइब्रेरी कक्ष की घड़ी से रात बारह बजे की टंकार सुनाई पड़ी ।

अरुणांशु चौंक पड़ा । माँ के चरणों में फूल दे आने का वक्त हो गया । . । उसकी माँ ।

चोर जैसा ही रात के सन्नाटे और अँधेरे में वह चुपके-चुपके जाकर सोती हुई जननी के चरणों के नीचे मुट्ठी भर फूल और आँसू से भीगा एक प्रणाम रख आता । कभी-कभी ।

क्या ये फूल माँ की नजरों में नहीं पड़े ?

क्या एक बार भी उनको यह ख्याल नहीं हुआ कि ये फूल कहाँ से आते हैं । कौन उनके चरणों के नीचे ये फूल रख जाता है ? माँ, मेरी माँ । — जरा सा भी स्नेह अगर तुम अपने इस अभागे बदसूरत बेटे को देती । ऐ जननी, अगर इस अभागे के तपते माथे पर एक आशीष भरा चुम्बन ही देती । सिर्फ एक बार, महज एक बार के लिए भी पुकारती, अरुण बेटा ?

तुम्हारा कुछ भी न जाता — लेकिन यह चिर-अभागा— तुम्हारा यह परित्यक्त बेटा जिन्दगी भर के लिए धन्य हो जाता । उसके जीवन-व्यापी क्लेश में शायद उसे काफी सान्त्वना ही मिलती ।

पिता के साथ अरुणांशु की और दो-एक बार भेंट हो चुकी है । पिता कहा है, उसे घर बुलवा लगे । लोग चाहे कुछ भी कहें ।

अरुणांशु ने बाधा दी है, ऐसा कैसे हो सकता है । संसार के सम्मुख पिता ऐसे मिथ्याचारी साबित हो जायँ, शरीर में प्राण रहते क्या वह होने दे सकता है ।

न भी मिली उसे पितृ-स्वीकृति तो क्या ? मन ही मन पिता स्वीकार तो लिया है । स्नेह दिया है । इसके अलावा अपना यह घिनावना रूप लेकर वह कैसे सुवीर और गोपा के बगल में जाकर सकेगा ?

किस मुंह से ?

लोग उसके बदन पर थूकेंगे ।

नहीं । नहीं — छीः । सुवीर, गोपा, तुम लोग दूर रहो । मेरे भाई, मेरी बहन, तुम लोग सुख से रहो ।

शाम को ही अरुणांशु ने बाग से कुछ फूल तोड़ रखा था । फूलों को जेब में लेकर बाग के पीछे के दरवाजे से चुपचाप निकलकर अरुणांशु रात के सुनसान रास्ते पर तेज चाल चलने लगा । माँ के चरणों में फूल देना है । माँ । उसकी माँ ।

बर्मी नर्तकी माँ का खून शरीर में होने के कारण ही माफिन को कभी अपने अनजाने ही नृत्यछन्द में अपना अस्तित्व मिल गया था । रंगून के एक होटल में माफिन नाचती थी, इसके बाद एक दिन तुपे के साथ घूमती-घामती वह कलकत्ते आ पहुँची थी । तुपे की ही कोशिश से एक होटल में नाचने की नौकरी पाकर वहीं नाच रही थी वह, ऐसे ही समय गणेन की नजर उस पर पड़ जाने से गणेन ही उसको ज्यादा तनख्वाह देकर स्थायी नर्तकी के रूप में मिडनाइट होटल में ले आया । साथ ही साथ होटल में तुपे की नौकरी भी पक्की हो गयी । धीरे-धीरे गणेन की ही कोशिश से तुपे मैनेजर के पद पर बहाल हो गया । लेकिन पहले ही दिन सुवीर को देखकर माफिन अपना दिल गँवा चुकी थी । लेकिन गँवाने पर भी बुद्धिमती माफिन जानती थी कि समाज में उसकी स्वीकृति कितनी है, इसलिए किसी को भी उसने इस सिलसिले में जरा सा भी भाँपने नहीं दिया ।

लेकिन चालाक गणेन मामले को भाँपकर मन ही मन हँसता रहा । क्योंकि वह जानता था कि सुवीर कितना भी नीचे क्यों न उतरे उसका एक रुचिबोध है । वह रुचि माफिन की पहुँच के बाहर की थी — यह कहने से अत्युक्ति नहीं होगी ।

सुवीर को यह बर्मी औरत भाती न हो ऐसी बात नहीं । लेकिन बस इतना ही, इससे ज्यादा कुछ नहीं ।

उस दिन रात को माफिन होटल में अपने कमरे में बिस्तर पर अकेली लेटी हुई थी।

आज कई रोज से सुवीर होटल में नहीं आ रहा है।

माफिन को भी मानों कुछ अच्छा नहीं लगता। नाचने जाकर उसके पैर लड़खड़ा जाते। इसलिए आज वह नाचने नहीं गयी।

बत्ती बुझा कर कमरे में अँधेरा कर बिस्तर पर वह पड़ी हुई थी। अचानक भिड़े हुए दरवाजे को खोलकर गणेन ने अन्दर प्रवेश किया।

गणेन ने कहा, यह क्या! कमरे में बिल्कुल अँधेरा है। रोशनी—

गणेन की आवाज से हड़बड़ाकर माफिन बिस्तर पर बैठ गयी, पूछा, कौन है ?

गणेन ने कहा, मैं। मैं गणेन हूँ। कमरे में रोशनी नहीं, मामला क्या है ? विरह का अन्धकार है क्या ?

क्षणभर में माफिन का दिल झुंझलाहट से भर गया। बोली, गणेन बाबू, क्या यह कुछ सीमा से बाहर की बात नहीं हो रही है। दरवाजे पर बिना नॉक किये किसी महिला के कमरे में प्रवेश करना —

इसी बीच गणेन ने स्विच दबाकर बत्ती जला दी थी। माफिन की ओर देखकर बोला, वेल, वेल। मामला क्या है ? बिल्कुल एक सौ अस्सी डिग्री।

गणेन बाबू, यह मेरा जाती कमरा है। इसके अलावा शराफत का भी तकाजा होता है।

गणेन मानों बड़ी हैरत में पड़ गया है, ऐसा भान कर बोला, अरे, अरे, मामला क्या है देवी जी ? इतनी खफा क्यों ? हाव-भाव देखकर लग रहा है मानों बिना कहे-सुने किसी सती-साध्वी के कमरे में अनधिकार प्रवेश—

सहसा माफिन तीखी आवाज में बोल पड़ी, गणेन बाबू ?

गणेन ने अब जरा मुस्कुरा कर मानों दाँतों में से ही कहा, धीरे, दोस्त धीरे। तुमने गणेन बोस को अभी तक पहचाना नहीं।

ऐसे ही समय तुपे कमरे में आया। और एक बार माफिन की ओर देखकर गणेन को सम्बोधित कर उसने कहा, अरे गणेन बाबू ! तुम यहाँ ?

जरा देर पहले सुवीर बाबू आया था।

गणेन ने कहा, सुवीर आया था। मिलकर नही गया —

नहीं, लेकिन वह क्या कह गया जानते हो ?

गणेन ने पूछा, क्या ?

तुपे ने कहा, उससे होटल का इतना खर्च उठाया नही जाता। वह होटल बेच देगा।

गणेन ने विस्मय भरे स्वर मे पूछा, अचानक ?

तुपे बोला, यह तो नही मालूम। कहा, लगातार घाटा ही जा रहा है इसलिए।

गणेन ने कहा, हुंऽ। तो तुमने क्या कहा ? उसके बाप राय बहादुर घोष का जिक्र किया था ?

किया था। बोला, उसके राय बहादुर बाप भी आजकल पहले की तरह बात-बात पर फौरन रुपया देना नही चाहते।

हुंऽ। लेकिन हम लोग भी तो ऐसा होने नही दे सकते, तुपे। ब्लैक पिल्स और ह्वाइट डस्ट का बाजार मन्दी पर, इसके अलावा डिटेक्टिव इन्सपेक्टर राय भी आजकल इस होटल मे बहुत चक्कर लगाने लगा है।

तुपे ने गभीर होकर कहा, यह बात मैंने गौर न की। हां, ऐसी बात नहीं है गणेन। लेकिन खुफिया सुव्रत राय के लिए मैं इतना सोच नही रहा हूँ। मैं सोच रहा हूँ तुम्हारे दोस्त सुवीर बाबू के बारे मे।

और यह कहते हुए तुपे यकायक माफिन की ओर पलटकर बोला, माफिन, सुवीर का क्या मामला है बता सकती हो ?

मैं कैसे जान सकती हूं ? माफिन ने नीची आवाज मे जवाब दिया।

अरे कहती क्या हो ? मैं तो जानता हूं कि तुम ही उसके बारे में ज्यादा जानती हो। वह तुम्हारे मुहब्बत के आदमी हैं।

माफिन गरज उठी, तुपे !

सुनो माफिन — शान्त लेकिन बड़े ही अद्भुत दृढ़ स्वर मे तुपे बोला, मिगलाडान मे उस रात की बात शायद इतनी जल्द ही भूल नहीं गयी होगी।

तो हो कि स्वार्थ पर चोट आने पर तुपे किसी का भी लिहाज नहीं
।

फिर गणेन की ओर पलटकर बोला, चलो गणेन बाबू। तुम्हारे साथ कुछ करनी हैं।

तुपे गणेन को लेकर कमरे से निकल गया।

माफिन चुपचाप उनको जाते हुए देखने लगी।

मिडनाइट होटल का भी एक इतिहास है।

यह होटल एक सिन्धी सज्जन का था। गणेन उस सिन्धी सज्जन का सालीसिटर था। होटल में उन दिनों मैनेजर एक पंजाबी था—निहाल सिंह। वह शख्स नम्बरी शैतान था। होटल से जो कमाई होती थी उसे हड़प कर मालिक को समझा देता था कि होटल लॉस पर चल रहा है। लेकिन चालाक गणेन यह समझ गया था। सिर्फ यही नहीं, गणेन ने यह भी जान लिया था कि होटल से काफी आमदनी होती है। इसलिए नुकसान उठाते हुए होटल को बेचने का जब सिन्धी सज्जन ने इरादा किया तब गणेन ने ही सुवीर को समझा-बुझाकर सुवीर के ही रुपये से अपने दोनों के नाम होटल खरीद लिया। होटल बार में शराब सप्लाई के साथ-साथ गणेन ने दो और मादक-द्रव्यों क खरीद-फरोख्त करना शुरू कर दिया। एक तो कोकेन—ह्वाइट डस्ट, दूस अफीम—ब्लैक पिल्स। नतीजा यह हुआ कि चन्द ही दिनों में भीड़ होने लगी शुरू में सुवीर को यह मालूम नहीं था और मालूम हो जाने के बाद उसने दे कि अब खिसकने का कोई रास्ता नहीं है। क्योंकि दरअसल वही उस होटल का मालिक है और पकड़े जाने पर पुलिस उसी को फांसेगी, अलावा उस समय मुनाफा भी काफी हो रहा था इसलिए वह खामोश ही लेकिन धीरे-धीरे मामले ने कुछ दूसरा ही रंग अख्तियार कर लिया को अपने वश में कर गणेन मुनाफे की मोटी रकम आपस में तकसी हड़पने लगा, इसलिए मुनाफा तो दरकिनार घाटा ही ज्यादा नज

लगा। मामला ठीक तरह से समझ न सकने पर भी सुवीर ने कुछ-कुछ भांप लिया था। लाचार हो उसने तय किया इस तरह रिस्क लेकर होटल न चलाना ही बेहतर है। इसलिए उसने तुपे से भी कहा था कि वह होटल बेच देगा।

लेकिन सुवीर की बात सुनकर तुपे और गणेन दोनों के ही सिर पर पहाड़ टूट पड़ा। क्योंकि होटल बन्द हो जाने से दोनों को ही समान रूप से नुकसान उठाना पड़ेगा।

लिहाजा वे कतई ऐसा नहीं होने देना चाहते थे।

जैसे भी हो इसमें उनको बाधा डालना ही था।

मिडनाइट होटल की हकीकत किसी और को चाहे मालूम न हुई हो लेकिन महीने भर की तफतीश से ही सुव्रत को मालूम हो गयी थी।

डा० सरकार का मकान।

लाइब्रेरी कक्ष में एकान्त में बैठे डा० सरकार और सुव्रत में ये ही बातें हो रही थी। सुव्रत बता रहा था, इतने दिन ये सब बातें मैंने आपसे नहीं बतायी डा० सरकार। लेकिन आप मेरे मित्र हैं। और आप ही के मुंह मैंने एक दिन सुना था कि राय बहादुर घोष के लड़के सुवीर घोष के साथ आपकी इकलौती बेटी मीलो के ब्याह की सारी बातें तय हो चुकी हैं। इसलिए सोचा कि सारी बातें आपको बता देना मेरा कर्तव्य है।

सुव्रत के मुंह सुवीर के बारे में सारी बातें सुनकर डा० सरकार न केवल विस्मित हुए, वे बिल्कुल दंग रह गये। इसलिए वह बोल पड़ा, सच ? मि० राय, यह तो यकीन ही नहीं होता। सुवीर, सुवीर का इतना पतन हो चुका है कि वह ऐसे गन्दे मामलों में उलझा हुआ है।

सुव्रत ने कहा, यह यकीन आने वाली बात ही नहीं। लेकिन आप मुझ पर यकीन रखें डा० सरकार, मैंने बहुत अच्छी तरह से खोज लगाकर देखा है कि वह हाल में जिन सब मामलों से जुड़ा हुआ है, किसी भी शरीफ खानदान के लड़के के लिए—सुव्रत कुछ आनाकानी कर चुप हो गया।

बोला, ताज्जुब है। रईस का बेटा होने के कारण जरा गुमा... हमेशा से ही है लेकिन उसे छोड़ दो तो मुझे वह बराबर फूल सा और पवित्र ही लगता रहा है।

व्रत ने कहा, फूल ही है। लेकिन कीड़ों का कुतरा हुआ।

हृद उस समय मन ही मन सुव्रत की बातें ही सोच रहा था। सुवीर... । यह तो उसके सपनों से परे की बात हो गयी।

खैर, आज इजाजत दें, डा० सरकार।

जाइयेगा। अच्छा—

सुव्रत ने डाक्टर से विदा लेकर चले जाने के बहुत देर बाद तक डाक्टर सी कुर्सी पर बैठा रहा।

उसका सभी कुछ न जाने कैसे गड़बड़ा जा रहा है।

सुवीर। तो सुवीर छिपे रास्तों पर चल-फिर रहा है। अचानक एक ख्याल उसके दिमाग में आया, तो क्या सुवीर को अपने बाप के प्रथम जीव... की मनोवृत्ति ही मिली।

उस दिन रात को करीब बारह बजे राजीव और कमला, पति-पत्नी में बातें हो रही थीं।

कमला कह रही थी, आजकल देखती हूँ कि तुम काफी रात तक जागते रहते हो। सेहत ठीक न हो तो डाक्टर को क्यों नहीं दिखाते? शुरू में ही सावधानी बरतना क्या बेहतर नही है?

तुम घबराओ मत, कमला। मैं तन्दुरुस्त ही हूँ। राजीव ने शायद कम... से जी चुराना चाहा।

जरा सी आनाकानी करने के बाद कमला ने अचानक कहा, आज ... एक बात बताए बिना रह नहीं पा रही हूँ।

विस्मित राजीव ने पत्नी के मुख की ओर देखा, क्या?

कमला बोली, शुरू-शुरू में सोचा करती थी कि सचमुच यह सपना

इतने दिन इसलिए तुमसे कुछ बताया नहीं। बहुत बार रात में नींद में मुझे ऐसा लगा है कि कोई मेरा दोनों पैर पकड़े बेकल सुबक रहा है। आंसुओं से मेरे पैर भीग गये हैं। नींद टूट गयी है। पुकारा है, कौन ? कौन है ? बत्ती जलायी है पर देखा है, कहीं पर कोई नहीं, पैरों के पास बिस्तर पर मुट्ठी भर फूल पड़े हैं। यह क्या सपना है ? लेकिन यह अगर सपना ही हो तो, तो ये फूल ?—

राजीव विस्मित सा बोला, फूल ?

हां, उन फूलों को मैंने फेंका नहीं, फेंक नहीं सकी।

कहां हैं ? कहां हैं वे फूल ?

कमला तभी जाकर अपने कमरे से सूखे हुए फूलों को ला पति के सामने हाथ पसारती हुई बोली, यह देखो।

कुछ देर उन फूलों की ओर राजीव एकटक देखता रहा।

राजीव के सीने को कंपाती एक उसांस निकल आयी। उसने कहा, कमला सपना नहीं, रूढ़ सत्य है। तुम्हारे जीवन का और मेरे जीवन का यह कितना बड़ा सत्य है यह अगर तुम जान सकतीं। यह अगर मैं तुमसे बता सकता, कमला—

कमला ने आश्चर्य भरे कंठ से कहा, अजी, तुम यह क्या रहे हो ?

राजीव ने कहा, चुप ! धीरे। सारी प्रकृति कान पसारे खड़ी है। इतना बड़ा अन्याय। इतना बड़ा अनाचार—

अजी ?

सहसा राजीव पागल जैसे कमला के हाथों से सूखे फूल लेने के लिए हाथ बढ़ाकर बोला, लाओ। लाओ, मुझे दे दो। कमला यह फूल नहीं है। उसमें कहीं और ज्यादा कुछ। एक के सीमाशून्य पापों की, सारे अन्याय अनाचारों की क्षमा है। क्षमा—

कमला की समझ में कुछ भी नहीं आया। उसने अपने पति को इतना विचलित होते कभी नहीं देखा था। इसलिए आंखें फाड़ कर कुछ देर तक पति की ओर देखती रही। किसी अज्ञात भय और शंका से कमला का चित्त

सुहृद बोला, ताज्जुब है। रईस का बेटा होने के कारण जरा गुमान या घमंड उसे हमेशा से ही है लेकिन उसे छोड़ दो तो मुझे वह बराबर फूल सा सुन्दर और पवित्र ही लगता रहा है।

सुव्रत ने कहा, फूल ही है। लेकिन कीड़ों का कुतरा हुआ।

सुहृद उस समय मन ही मन सुव्रत की बातें ही सोच रहा था। सुवीर। सुवीर। यह तो उसके सपनों से परे की बात हो गयी।

खैर, आज इजाजत दें, डा० सरकार।

जाइयेगा। अच्छा—

सुव्रत ने डाक्टर से विदा लेकर चले जाने के बहुत देर बाद तक डाक्टर उसी कुर्सी पर बैठा रहा।

उसका सभी कुछ न जाने कैसे गड़बड़ा जा रहा है।

सुवीर। तो सुवीर छिपे रास्तों पर चल-फिर रहा है। अचानक एक ख्याल उसके दिमाग में आया, तो क्या सुवीर को अपने बाप के प्रथम जीवन की मनोवृत्ति ही मिली।

उस दिन रात को करीब बारह बजे राजीव और कमला, पति-पत्नी में बातें हो रही थीं।

कमला कह रही थी, आजकल देखती हूँ कि तुम काफी रात तक जागते रहते हो। सेहत ठीक न हो तो डाक्टर को क्यों नहीं दिखाते? शुरू में ही सावधानी बरतना क्या बेहतर नहीं है?

तुम घबराओ मत, कमला। मैं तन्दुरुस्त ही हूँ। राजीव ने शायद कमला से जी चुराना चाहा।

जरा सी आनाकानी करने के बाद कमला ने अचानक कहा, आज तुम्हें एक बात बताए बिना रह नहीं पा रही हूँ।

विस्मित राजीव ने पत्नी के मुख की ओर देखा, क्या?

कमला बोली, शुरू-शुरू में सोचा करती थी कि सचमुच यह सपना ही है।

इतने दिन इसलिए तुमसे कुछ बताया नहीं। बहुत बार रात में नींद में मुझे ऐसा लगा है कि कोई मेरा दोनों पैर पकड़े बेकल सुबक रहा है। आंसुओं से मेरे पैर भीग गये हैं। नींद टूट गयी है। पुकारा है, कौन ? कौन है ? बत्ती जलायी है पर देखा है, कहीं पर कोई नहीं, पैरों के पास बिस्तर पर मुट्ठी भर फूल पड़े हैं। यह क्या सपना है ? लेकिन यह अगर सपना ही हो तो, तो ये फूल ?—

राजीव विस्मित सा बोला, फूल ?

हां, उन फूलों को मैंने फेंका नहीं, फेंक नहीं सकी।

कहां हैं ? कहां हैं वे फूल ?

कमला तभी जाकर अपने कमरे से सूखे हुए फूलों को ला पति के सामने हाथ पसारती हुई बोली, यह देखो।

कुछ देर उन फूलों की ओर राजीव एकटक देखता रहा।

राजीव के सीने को कंपाती एक उसांस निकल आयी। उसने कहा, कमला सपना नहीं, रूढ़ सत्य है। तुम्हारे जीवन का और मेरे जीवन का यह कितना बड़ा सत्य है यह अगर तुम जान सकती। यह अगर मैं तुमसे बता सकता, कमला—

कमला ने आश्चर्य भरे कंठ से कहा, अजी, तुम कह क्या रहे हो ?

राजीव ने कहा, चुप ! धीरे। सारी प्रकृति कान पसारे खड़ी है। इतना बड़ा अन्याय। इतना बड़ा अनाचार—

अजी ?

सहसा राजीव पागल जैसे कमला के हाथों से सूखे फूल लेने के लिए हाथ बढ़ाकर बोला, लाओ। लाओ, मुझे दे दो। कमला यह फूल नहीं है। उससे कहीं और ज्यादा कुछ। एक के सीमाशून्य पापों की, सारे अन्याय अनाचारों की क्षमा है। क्षमा—

कमला की समझ में कुछ भी नहीं आया। उसने अपने पति को इतना विचलित होते कभी नहीं देखा था। इसलिए आंखें फाड़ कर कुछ देर तक पति की ओर देखती रही। किसी अज्ञात भय और शंका से कमला का दिल

धड़कने लगा। पति के असंलग्न बातों में उसे कहीं यों लगा कि एक निर्दय सत्य किसी भयंकर शंका से छिपा हुआ है। वह अब और अपने को रोक नहीं पा रही है। अधीर व्याकुल स्वर में वह बोल पड़ी, अजी अब मुझे और संशय में मत रखो। बताओ, क्या बताना चाहते हो बताओ। आज करीब महीने भर से देख रही हूं कि तुम मुझसे कुछ छिपाने की कोशिश कर रहे हो। दुहाई तुम्हारी, मुझसे खोल कर बताओ।

राजीव ने जवाब दिया, बताऊँगा—बताऊँगा कमला। बताऊँगा। यह आग कोई दबी नहीं रहेगी, पच्चीस साल से जो आग इस दिल में सुलग रही है, उसे अब कितने दिनों तक दबाये रहूँगा। शायद अब दबाये न दबेगी, लेकिन आज नहीं। किसी और दिन, किसी और दिन सब कुछ तुमको बता दूँगा। सब कुछ तुम सुन लेना।

ये बातें कहते समय, कमला को लगा, राजीव का चेहरा किसी अवर्णनीय व्यथा से काला पड़ गया है। उसका सारा शरीर मानों काँप रहा है। झट-पट पति के और निकट आकर उसका एक हाथ पकड़ती हुई कमला सस्नेह बोली, क्या हो गया है तुमको—अजी, क्यों तुम मेरा दिल इस तरह दुखा रहे हो ?

राजीव बोला, सचमुच कमला अब मुझसे और सहा नहीं जाता। अब और सहा नहीं जाता।

टन् से घड़ी में साढ़े बारह की टंकार बजी।

जाने क्या सोच कर कमला बोली, रात काफी हो गयी है। चलो, सोने चलो।

नींद। नींद अब इन आंखों में आती कहाँ। तुम नहीं जानती हो कमला, मेरी नींद कितने दुःस्वप्नों से भरी होती है। फिर अचानक रुक कर राजीव ने कहा, जाओ, कमला तुम जाओ—तुम जा कर सो जाओ—

कमला बोली, नहीं तुम भी चलो। मैं तुम्हारा सिर सहला दूँगी।

राजीव बोला, तुम जाओ, कमला। मैं जरा — जरा देर बाद ही आ रहा हूं।

कमला कमरे से निकल गयी।

किस तरह — किस तरह आज कमला से सारी बातें खोल कर बताये राजीव।

पच्चीस वर्षों से जिसे मृत समझती रही है—आज—आज किस तरह उसको उसका परिचय वह देगा।

ऐसे समय सहसा खिड़की पर एक हल्की आहट होते ही चौंक कर उधर देखते हुए राजीव बोल पड़ा, कौन?

खिड़की के पीछे अरुणांशु दिखाई पड़ा।

बाबू।

कौन अरुण?—राजीव ने जल्दी से जाकर कमरे का दरवाजा बन्द कर दिया। अरुणांशु ने कमरे में प्रवेश किया। सहसा राजीव ने देखा कि अरुणांशु के पैर से खून चू रहा है।

व्यग्र व्याकुल कंठ से राजीव ने कहा, यह क्या? तुम्हारे पैर में इतना खून कैसा अरुण?

खून? पाइप से चढ़ते वक्त एक कील लग गयी थी, शायद उसी से—

राजीव बोल पड़ा, इस्स्। काफी खून निकल रहा है। शायद काफी कट गया है। ठहरो—जरा दवा लगा—

राजीव को घबराते देखकर अरुणांशु ने रोका, नहीं, नहीं आप बतई परेशान न हों बाबू। जरा सा खून—

राजीव ने कहा, जरा सा खून, क्या कह रहे हो अरुण। ओफ—यह तो बहुत सा कट गया है। देखें। देखें—

राजीव अरुणांशु की ओर व्याकुल सा बढ़ आया।

ऐसे ही समय दरवाजे पर अचानक ही दस्तक सुनाई पड़ी।

कमला की आवाज, दरवाजा खोलो। यह क्या, दरवाजा क्यों बन्द कर लिया?

उस आवाज से चौंक कर अरुण ने कहा, माँ । मैं चला बाबू । बात अधूरी रखकर ही खिड़की के रास्ते जिस तरह अन्दर आया था उसी तरह से निकल कर गायब हो गया ।

राजीव ने आगे बढ़कर दरवाजा खोल दिया।

कमला कमरे में आकर बोली, यह क्या, कमरे का दरवाजा क्यों बन्द कर दिया था ?

राजीव ने कमला के सवाल का कोई जवाब नहीं दिया, खामोश रहा। बेबस करुण नेत्रों से उसकी ओर देखता रहा । उसके मुँह से कोई भी बात नहीं निसरती ।

सहसा उसी समय कमरे की फर्श पर नजर पड़ते ही कमला चौंक पड़ी । कमरे में सारे फर्श पर खून के दाग । खून सने पैरों की छाप ।

उस खून की ओर देखती हुई व्याकुल स्वर में उसने अपने पति से पूछा, फर्श पर इतना खून किसका है ? कमरे में इतना खून कहाँ से आया ?

राजीव गूंगी निगाहों से अपनी बीवी की ओर देखता रहा । उसके मुंह से कोई भी बात नहीं निकली ।

अजी । बोलते क्यों नहीं तुम, क्या हुआ है ? खिड़की के पास इतना खून—कहती हुई कमला ही खिड़की की ओर बढ़ गयी और खिड़की से सन्दिग्ध नजरों से बाहर नजर दौड़ाते ही देखा कि अँधेरे में छाया की तरह कोई दीवार फाँद कर जा रहा है । कमला चिल्ला पड़ी, चोर—चोर—

लेकिन क्षण भर में आगे बढ़कर राजीव दोनों हाथों से कमला का मुँह बन्द कर पागल जैसे ही बोल पड़ा, ओह, चुप हो जाओ । चुप ! चिल्लाओ मत, वह चोर नहीं है। उत्तेजना से राजीव का स्वर और उसकी सारी देह उस समय भी काँप रही थी ।

हैरान कमला ने पति की ओर देखकर फौरन पूछा, चोर नहीं ।—तो —कौन है ?

राजीव बोला, नहीं । चोर नहीं ।

कमला ने प्रश्न किया, तो ? तो वह कौन है ? बताओ, बताओ व

कौन है ?

राजीव ने कहा, सिर्फ इतना जान लो कि वह चोर नहीं है। कमला। वह चोर नहीं है। इससे अधिक मत जानने की जिद करो आज। मत जानने की जिद करो। कहते-कहते मानों मर्मभेदी पीड़ा से राजीव ने दोनों हाथों से अपना मुंह ढांप लिया। उस समय उसका सारा शरीर थर-थर कांप रहा था।

अत्यन्त बुद्धिमती कमला समझ गयी कि राज कुछ है लेकिन उस बारे में कोई जिद किये बिना या कोई सवाल पूछे बिना ही वह बोली, चलो। सोने तो चलो।

चलो।

कमला के कंधे का सहारा लेते हुए लड़खड़ाते कदमों से चलकर अपने शयन-कक्ष में आ राजीव ने अपने को बिस्तर पर डाल दिया।

ओह भगवान ! अब तो मुझसे बरदाश्त नहीं होता। मुझे मुक्ति दो प्रभु। मुझे मुक्ति दो।

कमला पति के सिर पर हाथ फेरने लगी।

राजीव ने कहा, तुम सोने जाओ कमला। मुझे नींद आ रही है। बत्ती बुझा जाना।

कमला ने बत्ती बुझा दी लेकिन खुद पति के बगल में ही बैठी रही। आंखें बन्द किये राजीव खामोश बिस्तर पर लेटा है और कमला भी खामोश पति का सिर सहला रही है। किसी के भी मुंह में कोई शब्द नहीं।

कमला।

बताओ।

सन्तान के हत्यारे का प्रायश्चित्त क्या है बता सकती हो ?

यह क्यों कह रहे हो तुम ?

नहीं, कोई बात नहीं।

सुर और नारी

दीवार लाँघकर वाहर के रास्ते पर पहुँचते ही अरुणांशु को एक गाड़ी दीख पड़ी। गाड़ी का दरवाजा पकड़े एक आदमी खड़ा था।

उस आदमी को दूर से भी पहचानने में अरुणांशु को दिक्कत नहीं हुई। वह पहचान सका, यह उसका भाई सुवीर है—कोई दूसरा नहीं। इतनी रात गये सुवीर यहाँ पर ?

चन्द टूटे-फूटे वाक्य उसके कानों में पहुँचे।

तो यही तय रहा मि० घोप ?

जी। उलुवेड़िया की जेटी के पास जहाज से माल फेंक दिया जायेगा, हमारे लोग लंच में इन्तजार करेंगे—

हाँ। लेकिन रुपया कल ही पेशगी पेमेंट कर देना होगा और दस हजार —

ऐसा ही होगा, लेकिन रुपया इस वार कुछ ज्यादा ही माँग रहे हैं आप, मि० राना।

अरुणांशु यह सव क्या सुन रहा है। उसका भाई सुवीर। किस रास्ते पर वह चलने लगा है। भय और शका से अरुणांशु का दिल लरज उठा।

डा० सरकार के घर पर अरुणांशु जब लौट आया उस वक्त रात के करीव पौने एक वजे थे। अपने कमरे में प्रवेश करने को होकर वह चकित सा ठिठककर खड़ा हो गया।

कमरे में वत्ती जल रही है।

झांक कर देखा, कमरे में डा० सरकार की वेटी मीली उसकी कितावें लेकर उलट-पुलट कर देख रही है।

अरुणांशु ने हाथ वढ़ाकर वती वुझा दी और वत्ती वुझते ही चौंककर पलटती हुई मीली ने पूछा, कौन ?

मैं अरुणांशु हूँ।

अरुण बाबू। ओह। अचानक बत्ती के बुझ जाते ही मैं ऐसा डर गयी थी। लेकिन अचानक बिना आहट दिये चुपके से क्यों बत्ती बुझा दी आपने?

आप तो जानती ही हैं—रोशनी में रहना डाक्टर की मनाही है मेरे लिए।

इतनी रात को कहाँ गये थे?

कहाँ जाऊँगा। यहीं जरा बाग में घूम रहा था।

बैठिए। खड़े क्यों हैं? आपके कमरे की किताबें देख रही थी। इतनी किताबें आप पढ़ते हैं?

जी। किताब और यह तार का साज ही मेरे जीवन के दो साथी हैं। दो अवलम्बन हैं।

अँधेरे में अरुण बाबू, आप किताबें कैसे पढ़ लेते हैं?

आदत पड़ गयी है। दिन को बन्द कमरे में बहुत कम रोशनी में भी मैं पढ़ सकता हूँ।

आपको बड़ी तकलीफ है, है न अरुण बाबू?

तकलीफ? नहीं। तकलीफ अब तकलीफ लगती ही नहीं मिस सरकार।

सच। सारा दिन सारी रात चौबीसों घन्टे इस तरह अँधेरे में। मैं होती तो पागल हो गयी होती।

पागल। हाँ, शायद मैं भी हो गया हूँ, वर्ना, आज तक जिन्दा कैसे हूँ?

आज मैं आपके पास एक अनुरोध लेकर आयी थी अरुण बाबू।

अनुरोध?

जी। अब तो लम्बी छुट्टी है मेरी। मुझे आप वीणा बजाना सिखा दें।

अरुणांशु खामोश रहा।

अरुण बाबू — मौली ने फिर पुकारा।

बताइए।

सिखाइएगा नहीं मुझको?

लेकिन अँधेरे में आप सीखेंगी किस तरह?

सुन-सुनकर सीखूंगी। देख लीजियेगा मैं बिल्कुल ठीक सीख लूंगी —

अच्छी बात। ऐसा ही होगा —

सिखाऊँगा नहीं। आज और अभी से मेरी शिक्षा शुरू हो जाय। लीजिए, अपनी वीन तो लें —

निदान अरुणांशु को वीणा लेकर बैठना पड़ा।

गोद के पास वीन को थामे उसके तारों पर हल्की उँगलियों से अरुणांशु ने झंकार छेड़ी।

क्या बजाये वह ?

आज वह अपनी वीणा के तारों पर कौन सा सुर निकाले। इस क्षण उसके सारे हृदय को जिस सुर ने भर दिया है उस सुर को जगाने की शक्ति वीणा के इन तारों में कहाँ है ? वह शक्ति अरुणांशु में कहाँ है ? आज उसका सारा भुवन ही सुरों से छा गया है।

गगन में, पवन में, पत्र में, पुष्प में, जिस सुर का स्पर्श आज लग गया है उसी से वह धन्य हो गया है — पूर्ण हो गया है। कमरे के अन्धकार में भाषा-हीन जो सुर एकत्रित हो गया है उसे वीणा के तारों पर जगाने का दुःसाहस अरुणांशु को नहीं है।

वजाइए। मीली ने अरुणांशु से तकाजा किया।

रिमझिम रिमझिम सुर वीणा के तारों पर अँधेरे कमरे में मुखर हो उठा।

तुमि केमन करे गान करो हे गुनी,
आमि अवाक हये सुनि, केवल सुनि।

इसी तरह वीणा-वादन के माध्यम से ही मीली और अरुणांशु में नये तौर पर परिचय हुआ।

कभी अरुणांशु वजाता, मीली सुनती, फिर कभी मीली वजाती अरुणांशु उसे सुधार देता।

अँधेरे कमरे में सुर की जो ज्योति खिल उठती उसी के प्रकाश में मीली को लगता अरुणांशु भी मानो पहचाने-अनपहचाने, देखे-अनदेखे में एक परम

परिचित मित्र है। अनजान देश का स्वप्न का राजकुँवर सुर के समन्दर में मानों उसका हाथ थाम बहुत—बहुत दूर लिये जा रहा है।

अरुणांशु पुलक से सिहर उठता। मानों उसके अभिशापित जीवन में अब कोई दुख न रहा, सभी माँगना और पाना मानों खत्म हो गया है।

एक प्रकार की खुमारी में अरुणांशु के दिन बीतने लगे।

उस दिन शाम को डा० सरकार अपने लाइब्रेरी कक्ष में बैठे एक मोटी सी डाक्टरी की किताब पढ़ रहा था कि मधु ने आकर एक कार्ड दिया। डाक्टर सरकार ने मधु के हाथों से कार्ड लेकर देखा: गणेन बोस सालीसिटर।

कार्ड की ओर एक नजर डालकर डाक्टर ने कहा, आने को कहो।

मधु के पीछे-पीछे थोड़ी देर बाद ही गणेन बोस लाइब्रेरी कक्ष में आ दाखिल हुआ। कमरे में आते ही गणेन ने हाथ उठाकर डाक्टर सरकार को नमस्कार किया, नमस्कार!

डाक्टर ने कहा, नमस्कार, बैठिए!

काफी आराम से कुर्सी पर बैठने के बाद गणेन ने कहा, आप डाक्टर हैं और काफी व्यस्त रहते हैं इसलिए काम की बात ही शुरू की जाये। मैं सुबीर घोष के बारे में चन्द बातें आपको बतलाने आया हूँ। आप शायद नहीं जानते कि वह मेरा जिगरी दोस्त है।

सुबीर? डाक्टर सरकार ने आश्चर्य करते हुए गणेन की ओर देखा।

जी। आप मुझे न पहचानने पर भी मैं आपको पहचानता हूँ। और निकट भविष्य में सुबीर के साथ आपका जो रिश्ता बनने वाला है वह भी मेरे लिए अजाना नहीं।

बताइए। क्या कहना चाहते हैं आप।

मैं उसका सालीसिटर भी हूँ और दोस्त भी। असली मित्रता हालांकि इस दुनिया में दुलर्भ है, फिर भी—

बताइए।

सुवीर् बाबू की मौजूदा गतिविधि के बारे में शायद आप वाकिफ न हों। मादक-द्रव्यों के तस्कर-व्यापार में वह आजकल बेहद दिलचस्पी ले रहा है। फिरंगी टोले में मिडनाइट होटल नाम वाला होटल सुवीर बाबू का ही है। वहाँ तरह-तरह का जुआ भी चालू है और ऐसी कोई नशीली चीज नहीं जो वहाँ न बिकती हो।

आपने कहा न कि आप उसके दोस्त और सालीसिटर है ?

जी। मैंने बहुतेरे कोशिश की है लेकिन उसे मैं किसी तरह से भी उस रास्ते से हटा नहीं सका, इसलिए सोचा कि आपको बताने पर शायद आप उसे लौटा सकें—

ऐसे ही समय सहसा मीली कमरे में आ गयी।

मीली को देखकर गणेन सचमुच मंत्रमुग्ध-सा रह गया, वह नहीं जानता था कि मीली इतनी सुन्दरी है।

गणेन को जो कुछ बताना था बता चुका था, उसने अब उठकर विदा ली।

मीली ने पिता से पूछा, यह सज्जन कौन हैं बाबू ?

डा० सरकार अनमने से होकर थोड़ी देर पहले गणेन के मुँह सुनी हुई सुवीर के बारे में बातें ही सोच रहा था·········इसलिए कोई जवाब नहीं दिया।

मीली ने कहा, बाबू। चाय लगायी गयी है, चलो।

डाक्टर उठा, बोला, चलो।

षड्यंत्र

आजन्म व्यापारी बाप का बेटा सुवीर व्यापार में मुनाफे के बारे में

ज्यादा समझता था। लेकिन पंकिल जीवन का ऐसा ही प्रभाव है कि चाहे या अनचाहे ही वह नशे की तरह सारे दिमाग पर छा जाता है और दिन पर कब्जा कर लेता है। गणेन के उकसावे में आकर होटल के व्यापार में उतरकर धीरे-धीरे उसी कारोबार में, जो कोकेन और शराब आदि पर्याप्त मुनाफे का तस्कर-व्यापार चुपके-चुपके चोरी-छिपे गणेन तुपे के साथ मिल कर चला रहा था, उसी में सुवीर भी फँसता जा रहा था। लेकिन वह बहुत बुद्धिमान होने के बावजूद सतर्कता की कमी के कारण गणेन की धूर्तबुद्धि के कूट चक्र में पड़कर होटल के तस्कर-व्यापार में कितने खतरनाक ढंग से उलझ गया था यही शुरू में उसकी समझ में नहीं आया था। फिर शुरू-शुरू में मुनाफे की मोटी रकम हाथ में आने के कारण समझने की कोशिश भी नहीं की। इसके बाद अचानक उसने आविष्कार किया कि मुनाफे की रकम कम होने लगी है और उसी के साथ होटल में पुलिस का बार-बार आ धमकना। होटल का रोकड़ मिलाते हुए उसने देखा कि वह एक भयंकर सत्यानाश की ओर बढ़ता चला जा रहा है तो सुवीर सचमुच डर गया। माफिन ने भी उसकी आँखें कुछ-कुछ खोल दी थी। लाचार सुवीर अपना कर्तव्य न तय कर पाने से हिम्मत हारने लग गया था और माफिन की ही सलाह पर होटल माफिन के नाम कर दिया था। होटल की सारी भारी जिम्मेवारी जिस दिन नर्तकी माफिन ने अपने सिर पर स्वेच्छा से लाद ली सुवीर उस दिन समझ भी नहीं सका कि कितना गहरा प्रेम होने से इस तरह दूसरे का जोखिम कोई अपने सिर पर ले लेता है और माफिन के मशविरे के मुताबिक ही सुवीर ने यह बात छिपा रखी थी।

लेकिन घटनाक्रम से मामला ज्यादा दिन दबा नहीं पड़ा रहा। आकस्मिक रूप से यह भेद खुल जाने के साथ-साथ आग जल उठी।

गणेन के चेहरे पर से इतने दिनों का मुखौटा स्वार्थ की आग में जल गया।

उस दिन रात को होटल में अपने कमरे में माफिन चुपचाप बिस्तर

वत्ती वुझाये लेटी थी।

रूपोपर्ज वीनी नर्त्तकी के मन में प्यार का जो दीपक जल उठा था उसी के प्रकाश में माफिन शायद अपने को नये तौर पर आविष्कार कर आनन्द से विभोर हो गयी थी।

नाचना कुछ अच्छा नहीं लगता। हुस्न का खोमचा उठाये अव दर्शकों की कामार्त आँखों के सम्मुख खड़े होने को जी नहीं करता।

इसलिए माफिन ने आज भी साज-सजावट नहीं की। विखरे केश और ढीले कपड़ों में वह शिथिल अलस भंगिमा में लेटी हुई थी।

लेकिन ज्यादा देर लेटे रहना भी अखर गया। किसी समय विस्तर पर धीरे-धीरे उठकर वैठ गयी। वत्ती जलायी। फिर आकर कमरे के ड्रेसिंग टेवुल के सामने गद्देदार छोटे स्टूल पर वैठ गयी। और अनमने ढंग से स्टूल पर वैठे एक सुदृश्य शीशे के पात्र से वालों का एक टेढ़ा सा काँटा उठाकर अनमने होकर देखने लगी।

ऐसे ही समय दरवाजे पर हल्की दस्तक सुन पड़ी।

मृदु स्वर में माफिन ने पूछा, कौन ?

मैं। तुपे। —

हाथ का काँटा ड्रेसिंग टेवुल पर रखकर माफिन ने जाकर दरवाजा खोल दिया।

तुपे ने आकर कमरे में प्रवेश किया।

क्षण भर माफिन की ओर देखने के वाद तुपे ने पूछा, यह क्या माफिन, तुम अभी सजी-धजी नहीं। मामला क्या है ?

माफिन ने समझकर भी ऐसा भान किया मानों कुछ मालूम नहीं, फिर अलस मुद्रा में कहा, क्यों सज-धजकर क्या होगा ?

तुपे ने कहा, सज-धजकर क्या होगा का मतलव ? डायस पर जाना नहीं है क्या ? इधर होटल के सारे गाहक आने लगे हैं।

मैं नाच नहीं सकती। माफिन ने अव कहा।

यह कैसी वात कर रही हो ? नाच नहीं सकोगी का क्या मतलव ?

मतलब……मेरी तबीयत नासाज है……इसके अलावा नाचना मुझे अच्छा भी नही लगता।

नाचना अच्छा नही लगता, तबीयत नासाज है। हूँह ! सुनो, यह सब बनावटी बातों से तुपे भुलावे में नहीं आता। तुम सोचती होगी कि मैं कुछ समझता नहीं। सुनो माफिन, प्रोफ मे उस चीनी नर्तकी लिसी की मृत्यु की बात शायद आज तक नहीं भूली होगी।

नहीं, भूलूँगी क्यों।

माफिन। तीखी आवाज में तुपे ने फिर पुकारा।

क्या।

अपनी खैरियत चाहो तो तैयार हो लो।

तो तुम भी सुन लो तुपे, मैं तुम्हारी तनख्वाह पर पलने वाली नौकरानी नहीं हूँ बल्कि आज तुम्ही मेरे पगार पर पलने वाले नौकर हो। इस होटल की मौजूदा मालकिन मैं हूँ।

माफिन।

हाँ।

माफिन की बात खत्म होते न होते खुले दरवाजे से सुवीर कमरे में आ गया।

कौन ? पलटकर सुवीर को देखते ही क्षणभर में तुपे मे मानों अद्भुत परिवर्तन आ गया, बिल्कुल विनयी बनकर वह बोला, अरे सुवीर बाबू। आओ। आओ। आजकल तो होटल मे आते ही नहीं। अमृत से क्या जी ऊब गया।

लेकिन सुवीर काफी गभीर सा लग रहा था। चेहरा कुछ थमरा हुआ सा।

बैठो। बैठो — ड्रिंक देने को कहता हूँ। तुपे ने फिर कहा।

संजीदे स्वर में सुवीर ने जवाब दिया, नहीं।

तुपे की समझ में आया कि कहीं कोई गड़बड़ी है।

गणेन ने हालांकि उसे छिपे तौर पर पहले ही चेतावनी दे दी थी लेकिन

तुपे इतना यकीन नहीं कर सका था।

फिर भी शायद आखिरी शक को दूर करने के लिए ही इस बार तुपे ने पूछ लिया, तो जो कुछ सुन रहा हूँ सब सच है क्या ?

क्या ?

माफिन कह रही है कि वही इस समय इस होटल की मालकिन है।

हाँ, माफिन ने ठीक ही बताया है।

सुवीर बाबू ?

हाँ तुपे, माफिन ही इस समय होटल की मालकिन है। सुवीर ने दृढ़ शान्त स्वर में कहा। इसके बाद अचानक बातों का रुख बदल कर बोला, लेकिन उससे पहले तुमसे एक बात का जवाब चाहता हूँ तुपे।

बताओ।

उलुबेड़िया जेटी के पास पिछले हफ्ते जो माल जहाज से मिला है वह बजबज तक पहुँचकर लापता कैसे हो गया ?

किस माल की बात कर रहे हो सुवीर बाबू ? तुम्हारी बात मेरी समझ में नहीं आ रही है। लगा सुवीर की बात सुनकर तुपे आसमान से जमीन पर आ गिरा हो।

कुछ भी समझ नहीं पा रहे हो, है न—सुवीर ने पैनी निगाहों से तुपे की ओर देखा।

नहीं। — मतलब—तुपे ने हकलाते हुए विस्मय का ढोंग रचा।

तुपे। मत भूल जाना कि तुम काला नाग लेकर खेल रहे हो। तुम जैसे बर्मी कीड़े को किस तरह मसलकर मारा जाता है सुवीर घोष को खूब मालूम है। अब भी बता रहा हूँ कि अपना नखरा छोड़ो। सुवीर सहसा ही वज्र-सा गरज उठा।

बर्मी तुपे की छोटी-छोटी आँखें मानों सहसा साँप की आँखों की तरह ही चमकने लगीं। और बिजली की कौंध जैसी ही बहुत ही फुर्ती से उसका दाहिना हाथ उसके कमरबन्द में छिपी करोली की ओर बढ़ा लेकिन उससे भी अधिक फुर्ती से सुवीर का दाहिना हाथ पैंट की जेब से एक छोटी सी आटोमैटिक

पिस्तौल के साथ निकल आया।

तुपे ने क्षणभर में समझ लिया कि सुवीर उससे कम सजग या फुर्तीला नही है। और सिर्फ यही नहीं इस क्षण सुवीर की पुतलियों में ऐसा कुछ साफ झलकने लगा जिसके सामने अपने को समेट लेना ही अक्लमन्दी का काम होगा, इस बारे में उसे कतई सन्देह नहीं था।

धीरे-धीरे तुपे ने कमर से अपना हाथ हटा लिया।

सुवीर उस समय भी तुपे की ओर स्थिर निगाहों से देखता सर्द आवाज में बोला, कमर की तरफ हाथ बढाया न तुम्हें कुत्ते की तरह गोली मार कर मारूँगा तुपे। सुनो। अब तुम इस होटल में आगे नही रह सकते, सिर्फ दो दिन की मुहलत दे रहा हूँ तुमको। उसके बाद मुझे तुम्हारी परछाँही तक न दिखाई पड़े। जाओ। —

डंडे से पिटे कुत्ते की तरह सिर झुकाये तुपे कमरे से निकल गया।

स्तम्भित विस्मय से माफिन एक किनारे खड़ी थी। तुपे के कमरे से निकल जाते ही उसने कहा, यह काम तुमने कोई अच्छा नही किया, सुवीर बाबू। —

मानों कुछ भी न हुआ हो इस प्रकार शान्त और विकारशून्य स्वर में सुवीर ने सोने के सिगरेट केस से एक सिगरेट निकालकर उसे सुलगाते हुए बोला, तुपे मुझे भली-भाँति जानता है माफिन। उन्नीस साल की उम्र से मैं इन जैसे लोगों के साथ धन्धा करते आ रहा हूँ लिहाजा तुपे जैसे लोग जानते हैं कि उन जैसे कीड़ों को कैसे मसल डाला जाता है, मेरे लिए कोई अनजानी बात नहीं है।

लेकिन मैं भी उसे पहचानती हूँ। वह खूँखार मिजाज का है। ऐसी कोई बदकारी नहीं जो वह नहीं कर सकता। अँधेरे में अगर कभी पीछे से—

सुवीर ने शान्त स्वर में जवाब दिया, इन जैसे लोगों के साथ धन्धा करूँगा और ऐसी सम्भावनाएँ भी नहीं होंगी इस प्रकार सोचना क्या बेवकूफी नहीं होगी माफिन ?

लेकिन —

माफिन की बात खत्म न होने दे सुवीर ने मुस्कराकर कहा, सिर्फ मन्द

ाल मुझे देखने पर भी वह भलीभाँति जानता है कि सामने की तरह मेरे ोछे भी एक जोड़ी आँखें हैं। एक बार लाल मियाँ को तो बुलवाना।

कमरे से निकल कर माफिन लाल मियाँ को बुला लायी। जिस दिन से ुवीर को पता चल गया था कि गणेन और तुपे उससे कतराकर एक टेढ़ी राह से जाने की कोशिश कर रहे हैं उसी दिन से वह भी चौकन्ना रहने की कोशिश कर रहा है। और इसी कारण दो-तीन नये आदमियों को होटल में लाकर सुवीर ने नियुक्त कर लिया था।

लाल मियाँ उन्हीं में से एक था। यह मोटा-ठिगना आदमी मानों सख्त फौलाद का बना हुआ हो। होटल के गुदाम के पहरे पर सदा डटा रहता है।

लाल मियाँ।

हुजूर!

तुपे बस दो दिन और यहाँ रहेगा। उसके बाद ही यहाँ से चले जाने का आर्डर दिया है मैंने। उस पर हमेशा निगरानी रखोगे। कहीं तीन पाँच देखा कि बस—

लाल मियाँ ने गर्दन हिलाकर हामी भर ली।

रात के आठ बजे से ज्यादा समय नहीं होगा।

डाक्टर के मकान में, अपने कमरे में अरुणांशु अँधेरे में अकेले चहलकदमी कर रहा था। सारे शरीर और मन में एक अनोखे ढंग की चंचलता। अँधेरे में, कमरे में चहलकदमी करते-करते मन ही मन वह बुदबुदाने लगा, मीली। मीली—स्वर्ग की देवी। फूल सी पवित्र, स्निग्ध। ईश्वर। ईश्वर। हे देवता बोलो! तुमने मुझे कुरूप क्यों बनाया। और जब इतना कुरूप ही बनाया तो इन्सान का दिल क्यों दे दिया? क्यों। क्यों—

सहसा बगल के लाईब्रेरी कक्ष से सुवीर और मीली की बात-चीत सुनाई पड़ी—

सुवीर आया है।

मीली सुवीर से कह रही है, नहीं। तो यह कहो कि तुम मेरा गाना नहीं

सुनना चाहते हो।

वाह मई। तुम ही हो कि गा नहीं रही हो, तब से मार्गन के सामने बैठी हँस रही हो और अंट-शंट बक रही हो।

अच्छा, मैं हँस रही हूँ। अच्छी बात। लो मैं नहीं हँसूँगी, मुँह बन्द कर लिया। मीली ने रूठकर कहा।

नहीं। नहीं— मेरी—। गाओ—

नहीं। मैं नहीं गाऊँगी, कतई नहीं गाऊँगी।

अच्छी बात। जब तुम गाओगी ही नहीं तो मैं चला जाऊँ—

मीली चुप किये रही। सुवीर के सचमुच कमरे से निकलते ही उसे सुनाई पड़ा कि मीली ने गाना शुरू कर दिया है।

धीरे-धीरे सुवीर ने फिर कमरे में आ प्रवेश किया और आर्गन के पास जाकर खड़ा हो गया। मीली गाती ही रही।

गाना खत्म होते ही डा० सरकार का स्वर नीचे से सुन पड़ा, मीली! मीली!

मीली झटपट बोल पड़ी, बाबू। बाबू शायद लौट आये। तुम जरा बैठो, मैं अभी आयी।

लाइब्रेरी से निकलकर मीली ने देखा कि उसके पिता जी अभी-अभी लौटे हैं।

मीली ने पिता से पूछा, आज तुमको लौटने में बड़ी देर हो गयी बाबू?

एक जरूरी काम में फँस गया था बेटी। सुवीर आया है क्या?

धीमी आवाज में मीली बोली, जी।

डाक्टर सरकार ने क्षणभर कुछ सोचा, फिर कहा, सुवीर को जरा मेरे कमरे में भेज दोगी बेटी? उसके साथ मुझे कुछ जरूरी बातें करनी हैं। और मधु से कह देना एक कप चाय दे देने को, मैं लाइब्रेरी में हूँ—

सिर्फ चाय? और कुछ खाओगे नहीं बाबू?

नहीं बेटी। अभी सिर्फ एक प्याला चाय ही देने को कहो।

मीली सुवीर को बुलाने के लिए कमरे से निकल गयी।

डा० सरकार अपनी लाइब्रेरी की ओर चल पड़ा।

कमरे में प्रवेश कर डा० सरकार ने स्विच दबाकर बत्ती जलाई फिर एक कुर्सी लेकर बैठ गया।

जरा देर बाद ही सुवीर ने कमरे में प्रवेश किया। सुवीर के पीछे-पीछे मारे कौतूहल के मीली भी चली आयी थी लेकिन वह कमरे में प्रवेश न कर, दरवाजे के बाहर ही खड़ी रही। कौन सी ऐसी बात है बाबू की सुवीर के साथ? बेशक वही बात है।

सुवीर ने कमरे में प्रवेश कर कहा, मुझे याद किया है चाचा जी आपने?

कौन सुवीर? अरे हाँ। बैठो।

सुवीर एक कुर्सी खींच कर डाक्टर के आमने-सामने बैठ गया।

सुव्रत के उस दिन आकर सुवीर और उसके होटल के बारे में बहुत सारी बातें कह जाने के बाद से डाक्टर सरकार के मन में कतई शान्ति नहीं थी। राजीव के प्रति विराग रहने के कारण उसके घर न जाने पर भी डाक्टर सुवीर से सचमुच स्नेह करता था, खास तौर से उस दिन से जब से उसे सुवीर के प्रति अपनी लाडली मातृहारा बेटी के आकर्षण की बात मालूम हो गयी थी। और इसी कारण सुवीर के चाल-चलन के बारे में सुव्रत और गणेन के मुंह अप्रिय बातें सुनने के बाद डाक्टर की अकेली चिन्ता यह हो गयी थी कि सुवीर के पास वह यह बात कैसे छेड़े। क्योंकि एकदम सीधे-सीधे इन बातों को पूछने में डाक्टर को बड़ी झिझक हो रही थी। लेकिन झिझकने से काम नहीं चलेगा, यह बात उससे पूछ ही लेना है।

बैठे हुए सुवीर के मुंह की ओर क्षणभर देखकर इसीलिए बिना किसी भूमिका के उसने सीधे-सीधे असली बात छेड़ ही दी, सुनो सुवीर, तुम जानते ही होगे कि एक तरह तुम मेरी सन्तान जैसे प्रिय हो। वैसे यह भी जानते होगे कि मीली से बढ़कर प्रिय मेरे लिए इस संसार में कुछ भी नहीं है। उसके साथ तुम्हारी शादी करने की मैंने सोची थी। लेकिन हाल में तुम्हारे बारे में कुछ

अप्रिय पर सच्ची बातें मेरे कानों में आयी हैं—

आप क्या बताना चाहते हैं ठीक-ठीक समझ नहीं पा रहा हूँ, काका जी।

मैं बता रहा था कि तुम्हारे हाल के चाल-चलन के बारे में मुझे बहुत सारी बातें सुनने को मिली हैं, मैं उन्हीं के बारे में जानना चाहता हूँ सुवीर।

बहुत ही बुद्धिमान सुवीर डाक्टर के मुँह यह सुनते ही समझ गया कि बेशक उनके कानों में कोई संगीन बात ही पहुँची है। इसलिए अपने को बचाने की अचेष्टा में बात को शुरू में ही उड़ा देने के इरादे से उसने डाक्टर को टोकते हुए कहा, आपने किससे कौन-सी बातें सुनी हैं मुझे नहीं मालूम। —और अगर उड़ती खबरें सुनकर ही अगर आपको यह लगा हो कि—

उड़ती अफ़वाह नहीं। जिनसे मैंने सुना है उनमें से एक तो मेरे बहुत दिन के पुराने परिचित और विश्वसनीय व्यक्ति हैं और दूसरे तो तुम्हारे ही मित्र सालीसिटर गणेन बोस हैं।

डाक्टर के मुँह गणेन का नाम सुनते ही सुवीर चौंक पड़ा। और साथ ही साथ समझ गया कि दरअसल मामला क्या है। और कुछ मानों स्वगत रूप से आक्रोश भरे स्वर में बोला मित्र, मित्र तो है ही। इसीलिए मित्र की गैर मौजूदगी में आकर—

लेकिन उसकी बात समाप्त न हो सकी। डाक्टर ने फिर कहा, इस बारे में तुम्हें क्या कहना है सुवीर, मैं सिर्फ वही सुनना चाहता हूँ।

सुवीर ने क्षणभर कुछ सोचा। फिर धीरे शान्त स्वर में कहा, लेकिन काका जी, आपने जो सवाल किया है इसी दम उसका जवाब देना मेरे लिए मुमकिन नहीं—

मुमकिन नहीं। क्यों?

आज मुझे इजाजत दीजिए काका जी, इसके बाद किसी दिन आऊँगा उस दिन आपको सारी बातें खोलकर बताने की कोशिश करूँगा।

डाक्टर ने तब कहा, ऐसा करने से तो नहीं चलेगा सुवीर। जो प्रश्न मैंने तुमसे किया है उसका जवाब तुमको देना ही पड़ेगा—

बताया तो मैंने आपसे काका जी—

नहीं, अगर तुम्हारे साथ मेरी बेटी का मामला जुड़ा न होता तो तुम्हारी बातों में मैं कतई माथापच्ची न करता लेकिन—

क्षमा करेंगे चाचा जी, इस क्षण इससे ज्यादा कहना मेरे लिए सम्भव नहीं—

सुवीर !

हाँ, इससे अगर आप कुछ धारणा बना लें तो मैं लाचार हूँ—

तो तुम इस वक्त कोई भी बात नहीं बताओगे ?

नहीं, मुझे आप क्षमा कर दें। कहते हुए सुवीर दरवाजे की ओर बढ़ गया।

गुस्सा और अपमान से डाक्टर का सारा शरीर उस वक्त कांप रहा था। उसने कहा, तो तुम भी सुनते जाओ सुवीर। तुम्हारे मौजूदा चाल-चलन के बारे में जब तक मुझे तुम सब कुछ खोलकर नहीं बताते तब तक अगर तुम इस घर में न आओ तो मुझे खुशी होगी।

सुवीर ने भी साथ ही साथ पलटकर क्षणभर डाक्टर के मुख की ओर देखा और कहा, अच्छी बात है। लेकिन यह भी आप जान लीजिए कि उससे सुवीर घोष का कुछ बनता-बिगड़ता नहीं—

सुवीर !

जी, अपने काम के लिए कोई भी जवाबदेही मैंने आज तक किसी को नहीं दी और न किसी को दूँगा।

सुवीर। सुवीर—तुम्हारा इतना अधःपतन हो गया है ? बुरी सोहबत में पड़कर तुम इतना नीचे गिर गये हो ?

समान स्वर में सुवीर ने जवाब दिया, देखिए हो सकता है कि यह आपका घर है और आप चाहें तो अपनी बेटी की शादी मेरे साथ न भी करें। लेकिन अपने घर में पाकर आपने आज मेरा जिस तरह अपमान किया—

डाक्टर चीख पड़ा, निकल जाओ। जाओ—निकल जाओ। नामाकूल कहीं के।

गुस्सा और उत्तेजना से डाक्टर सरकार मानों काँपने लगा।

सुवीर क़मरे से चले जाते हुए बोला, जा रहा हूँ लेकिन जान रखियेगा,

भी यह बात भूलूंगा नहीं।

दनदनाते हुए सीधे पोर्टिको के नीचे पहुँच गया सुधीर। पीछे मीली की आवाज सुनाई पड़ी, सुधीर। सुनो। जरा ठहरो। एक बात सुन जाओ।

सुधीर गाड़ी का दरवाजा खोलकर एकदम गाड़ी पर सवार हो गया। मीली दौड़ती हुई आकर सुधीर की गाड़ी का दरवाजा पकड़कर खड़ी हो गयी। कमरे में बाप और सुधीर में जो बातें हुई है सभी कुछ उसने सुना है।

सुधीर।

तुम्हारे बाबू ने मुझे निकाल दिया है मीली!

तुम तो जानते ही हो कि बाबू खफा होने पर सभी से ऐसी सख्त बातें करते हैं।

सिर्फ सख्त बातें ही नहीं, तुम नहीं जानती—

सुनो तो।

सख्त आवाज में सुधीर ने कहा, नहीं।

अच्छी बात। लेकिन मुझे तो तुम सारी बातें खोलकर बता सकते हो। प्यारे मेरे, मुझे बता दो, मैं बाबू को समझाकर बता दूँगी।

नहीं, अभी इस क्षण किसी को भी मैं कोई बात बता नहीं सकता।

ताज्जुब है। लेकिन ऐसी कौन सी बात तुम्हारी हो सकती है सुधीर, जो तुम मुझसे भी नहीं बता सकते।

मैं हैरान हूँ मीली कि एक ही बात बतलाने के लिए तुम लोग बार-बार मुझ पर जुल्म कर रही हो। कहा तो कि मैं सारी बातें बताऊँगा लेकिन आज इसी दम नहीं। तुम मुझे क्षमा कर दो।

अचानक ऐसे ही समय कमरे के भीतर से डा० सरकार की गम्भीर आवाज सुन पड़ी, मीली। सुनती जाओ।

मीली का हाथ आप ही आप दरवाजे से नीचे आ गया।

सुधीर भी साथ ही साथ गाड़ी स्टार्ट कर चल पड़ा।

आओ। डाक्टर सरकार ने फिर पुकारा।

बाहर के कमरे में दाखिल होकर मीली अपने को आगे और न संभाल

सकी। पिता की गोद में मुंह छिपाकर फफक-फफक कर रोने लगी।

डाक्टर सरकार अपनी इस मातृहारा सन्तान को प्राणों से भी अधिक चाहता था।

रोती हुई बेटी के सिर पर धीरे-धीरे हाथ सहलाते हुए डा० सरकार ने कहा, तू जानती नहीं है बेटी कि उसका कहाँ तक अधःपतन हुआ है। वह कहाँ उतर गया है।

साज़िश

सुवीर के अलग रुख अपनाते ही गणेन ने क्षणभर भी वक्त नहीं गँवाया। वह समझ रहा था कि सतर्क न होने पर सुवीर के हाथों से उसके बचने का कोई जरीया नहीं। इसलिए वह तुपे को ललचाकर अपने गुट में खींचकर उसके साथ छिपकर सलाह-मशविरा करने लग गया।

होटल में तुपे के कमरे में ही गणेन और तुपे में ये ही सब बातें हो रही थीं।

गणेन बता रहा था, मकड़ी के जाले में मक्खी फँस जाने से जिस तरह मकड़ी अपनी आठों बाँहों के दबाव से पीसकर उस मक्खी को थोड़ा-थोड़ा करके लील जाती है—उसी तरह से हम लोग भी सुवीर को लील जायेंगे। अब सुनो तुपे, मैंने एक मतलब गाँठा है—देख तो आना आसपास कोई है तो नहीं।

तुपे ने बाहर निकलकर चारों तरफ अच्छी तरह से देख लिया कि कहीं पर कोई नहीं है। गणेन की हिदायत के मुताबिक उसने दरवाजा बन्द कर लिया। गणेन ने कहा, सुनो तुपे, जरा ध्यान लगाकर सुनो जो बताता हूँ। सुवीर तुम्हारा दुश्मन है। हम दोनों का दुश्मन है। यह होटल उसने माफिन को

दिया है—देने दो। लेकिन हम लोग भी उसे आसानी से बख्शेंगे नहीं।

तुपे ने कहा, लेकिन माकिन अब होटल की मालकिन है।

गणेन ने जवाब दिया, अरे वह तो एक मामूली औरत भर है। उसे अपने बस में करने में कितनी देर लगती है।

सिर्फ यही नहीं, मैं जानता हूँ, वह शैतानिन सुवीर से मुहब्बत करती है। तुपे ने फिर कहा।

गणेन मुस्कुराया, तभी तो एक ढेले में दो चिड़ियाँ आ गिरेंगी यह तय किया है। सुवीर की वागदत्ता पत्नी को चुरा लाऊँगा—और उसी के साथ-साथ सुवीर को भी। बस एक ढेले में दो चिड़ियाँ।

तुपे ने कहा, यह कैसे सम्भव होगा?

होगा, होगा—सब कुछ उस सुधीर की मदद से ही होगा। तुम बस चुपचाप देखते रहो कि मैं कैसे क्या करता रहता हूँ।

ऐसे ही समय बन्द दरवाजे पर दस्तक पड़ी।

कौन? गणेन ने पूछा?

होटल में गणेन का ही एक अनुचर सुलेमान आकर कमरे में दाखिल हुआ।

क्या खबर है सुलेमान? गणेन ने सवाल किया।

सुवीर बाबू! लरजती आवाज में सुलेमान ने कहा।

सुवीर बाबू। कहाँ।

होटल के पीछे वाले दरवाजे के पास उनकी गाड़ी आकर लगी है—देखे आ रहा हूँ।

ठीक है। तू जा।

सुलेमान चला गया। अब तुपे ने झटपट कहा, मैं नीचे चलता हूँ गणेन बाबू। सुवीर बाबू अगर मुझे देख लें तो शायद—

नहीं तुम बैठो तुपे।

लेकिन सुवीर बाबू अगर—

उसे बाधा देकर गणेन ने कहा, तुम तो मारे दहशत के ही मरे जा रहे

बैठो, बैठो—आने तो दो उसे ।

सुलेमान के चले जाने के बाद गणेन ने जान-बूझकर कमरे का दरवाजा
...र से बन्द नहीं किया । उठंगा ही रहने दिया ।

थोड़ी देर बाद ही बाहर पैरों की आहट सुनाई पड़ी और साथ ही साथ
...क धक्के से दरवाजा खोलकर सुबीर ने कमरे में प्रवेश किया । सिर के बाल
अस्तव्यस्त, दोनों आँखें लाल, एक शर्ट और फलालेन का स्लैक पहने हुए
सुबीर काँप रहा था । समझने में दिक्कत नहीं होती कि सुबीर ड्रिंक करके ही
आया है ।

बात भी ऐसी ही है । अपमानित और जलील होकर वह एक बार में
जाकर गट-गट कुछ शराब गले में उँड़ेलकर सीधे होटल में चला आया है ।
सुबीर ने कमरे में दाखिल होते ही गणेन से सीधे, सपाट और कठोर स्वर में
कहा, यह रहे गणेन । यू ट्रेटर ! विश्वासघाती !

गणेन मानो कुछ समझ न पा रहा हो ऐसा विस्मय का भान करता हुआ
बोला, मामला क्या है सुबीर ? यह सब क्या बोल रहे हो ?

सुबीर और भी बिगड़ गया, बोला, क्या बोल रहा हूँ ? बन रहे हो । कु...
भी समझ नहीं पा रहे हो, है न ?

इस तरह चिल्ला क्यों रहे हो ?

सुबीर बोला, चिल्ला रहा हूँ । तुम्हारा खून ही कर डालना चाहिए ...
डा० सरकार से तुम मेरे नाम क्या बता आये हो ?

गणेन मानों आसमान से गिर पड़ा । बोला, डा० सरकार से मैं ...
खिलाफ कह आया हूँ । डा० सरकार कौन हैं ? कौन हैं वे ? उनको प...
तो दरकिनार, उनका नाम भी मैंने कभी नहीं सुना । कौन ? बताना ...
वह कौन हैं ?

सुबीर ने व्यंग भरे स्वर में कहा, कौन हैं वे, कभी उनका ना...
सुना तुमने, उनको पहचानते तक नहीं हो । है न ? बहुत खूब । अ...
तुम सब कुछ नकारने की कोशिश कर रहे हो । क्यों तुम मेरे ...
अनाप-शनाप उनसे बक नहीं आये हो ?

गणेन ने कहा, यकीन मानो, सुवीर। कभी उनके नजदीक भी मैं गया नहीं हूँ। वेल तुपे। — कहते-कहते गणेन तुपे की ओर पलटा और बोला, तुमको मैं थोड़ी देर पहले बता रहा था तुपे। मेरा एक मित्र सालिसिटर— डा० सरकार के भी सालिसिटर—उन्हीं से डा० सरकार ने कहा है कि तुम्हारा चाल-चलन खराब है। तुम्हारे साथ अपनी बेटी की शादी करने से बेहतर है कि लड़की को खुदकुशी कर लेने को कहूँ।

सुवीर ने अब तेज आवाज में कहा, अब भी तुम सब बातें इनकार करने की कोशिश कर रहे हो गणेन। अब भी तुम बताना चाहते हो कि तुम डा० सरकार के पास जाकर मेरे नाम अनाप-शनाप नहीं बक आये हो?

अरे, नहीं भई नहीं, — क्यों सुवीर, मौली के साथ तुम्हारी शादी हो या न हो इसमें मेरा क्या बनता-बिगड़ता है। और सुनो, आज चाहे तुम गणेन पर यकीन न करो, उनमें बहुत सारे ऐब हों लेकिन एक बात याद रखना, गणेन पीछे से छुरा मारने का आदी नहीं है। लड़ना ही हो तो सामने-सामने लड़ूँगा। वर्ना यह क्यों नहीं समझ रहे हो जैसे तुम्हारे मातहत बहुत सारे लोग हैं मेरे भी कोई कम लोग नहीं हैं। क्या तुम्हारा ख्याल है कि मेरा अगर ऐसा कोई इरादा होता तो क्या इतनी आसानी से तुम मुझे पा सकते थे?

गणेन!

सुनो, जल्दबाजी मत करो। अभी उस दिन सब कुछ जाने-बूझे बिना तुपे को यह होटल छोड़ देने का आर्डर दे दिया। यह क्या तुमने कोई अच्छा काम किया है? जानते ही होंगे वह तुम्हारा कितना शुभेच्छु है। क्या तुम जानते हो कि इस होटल का सब कुछ, अगर वह टेक्टफुली मैनेज न करता होता तो इतने दिनों में हम सभी के हाथों में हथकड़ियाँ पड़ गयी होतीं। गणेन की आखिरी बातें सुनकर भकभूर सुवीर कुछ अचकचा सा गया। उसके दिल में एक झिझक सी आ गयी।

गणेन ने फिर कहा, सुनो सुवीर, मारे गुस्से के इस वक्त कोई बचकाना हरकत मत कर डालो। एक तो हम लोगों के सिर पर नंगी तलवार लटक रही है तिसपर इस वक्त तुम भी नासमझी करो तो हम लोगों

ारा कैसे होगा।

ुवीर बिल्कुल चुप।

कनखियों से सुवीर के चेहरे की ओर देखकर गणेन मामला समझ

। इसलिए फिर बोल पड़ा, मैं अब समझ पा रहा हूँ सुवीर कि उन्होंने

को चरका दिया है।

चरका ?

बेशक।

सुवीर बोला, गणेन। क्या बक रहे हो तुम ?

क्षणभर में सिर्फ एक ही चाल में उसने सुवीर को चित कर दिया है यह

समझ कर गणेन ने इस बार कहा, सुनो सुवीर। थोड़ी देर पहले तुपे के साथ

मेरी यही बात हो रही थी और तुपे ही बता रहा था कि तुम्हें सारी बातें

बता दूँ —

सुवीर ने रुँधे स्वर में कहा, ताज्जुब है। और मुझे तो उन्होंने बताया

कि तुम्हीं जाकर सब अनाप-शनाप बक आये हो। ओफ, कितना खतरनाक

शख्स है वह।

गणेन ने मुस्कराते हुए कहा, ऐसा तो वे कहेंगे ही। अपने सगे आदमी

का जिक्र करने पर खास असर नहीं होगा तभी मेरे सिर सारा कसूर म

दिया है और तुम भी बेवकूफ की तरह वही सुनकर लपकते हुए चले आ

हो — मैं होता तो क्या करता जानते हो ?

सुवीर ने गणेन के मुँह की ओर ताका।

गणेन ने कहा, ऐसा सबक देते तुम्हारे उस डा० सरकार को

जिन्दगी भर याद रखते। ओफ कितना शातिर है !

तुपे ने भी हामी भरी — बेशक यह जलालत तुम कभी न बरदाश

सुवीर बाबू।

गणेन को अब तक अहसास हो गया था कि उसकी चाल बे

गयी, सुवीर के दिल में सन्देह झाँकने लगा है, इसलिए उसने शतरं

आखिरी प्यादे की चाल चल दी। बोला, सुनो, सुवीर, मीली

सचमुच प्यार करती है ?

सुवीर ने कोई जवाब नहीं दिया।

ऐसा हो तो बड़ी आसानी से मीली से शादी कर सकते हो।

नहीं, ऐसा अब नहीं हो सकता। उसके साथ मेरा सारा रिश्ता खत्म हो चुका है।

किसने खत्म किया है ? उसने खुद ?

नहीं, उसके बाप ने —

सुनो सुवीर, तुमसे एक बात बताता हूँ, इस देश की लड़कियाँ अगर कभी किसी से सच्चा प्यार कर लेती हैं तो उसके लिए जान तक दे सकती हैं।

नहीं, ऐसा अब मुमकिन नहीं है।

मुमकिन नहीं, क्यों मुमकिन नहीं ? बेवकूफी से उस शैतान डाक्टर पर खफा होकर इतनी बड़ी गलती मत करना सुवीर।

गलती ?

बेशक, मैं साबित कर दूँगा कि तुम कितनी बड़ी गलती करने जा रहे हो। शादी नहीं करेगा, कोई दिल्लगी है ? फिर गणेन जरा रुक कर सुवीर के और नजदीक जाकर बोला, तुम अगर मेरी सलाह के मुताबिक चलो तो मैं सारा इन्तजाम कर सकता हूँ — शादी तो होगी ही, यहाँ तक कि उस शख्स को भी सबक मिल जायेगा जो कि एक कमीने को मिलना चाहिए।

सुवीर ने पूछा, किस तरह ?

आओ, बगल के कमरे में चलो, मैंने मन ही मन एक प्लान बना डाला है। चलो, सब कुछ तुमसे बताता हूँ। गणेन ने कहा।

अच्छी बात है, चलो।

फल्गु

रात के अँधेरे में अरुणांशु अकेले अपने कमरे में बैठा बीन बजा रहा था। डा० सरकार के साथ तर-तकरार कर उस रात सुवीर के चले जाने के बाद से यह पाँच-छह दिन मीली अरुणांशु के कमरे में भी नहीं आयी। इन दिनों करीब-करीब हर रात को ही मीली अरुणांशु के कमरे में आती थी लेकिन अचरज की बात यह है अरुणांशु ने उसे देखा नहीं। जो मकान दिनोरात मीली की हँसी और गाने से मुखर रहा करता था, अचानक ही सब कुछ मानों खामोश हो गया था।

कँच सा एक शब्द हुआ और कमरे का उठंगा हुआ दरवाजा खुल गया। अरुणांशु चौंक पड़ा। अगले ही क्षण उसे दिखाई पड़ा कि कोई छाया की तरह उसके कमरे में दाखिल हुआ।

अँधेरे में बीन बजाते हुए ही अरुणांशु को पता चल गया कि मीली ने उसके कमरे में प्रवेश किया। क्योंकि वह पैंछट तो उसकी पहचानी हुई थी।

बजाना रोककर अरुणांशु ने कहा, आइए। कई रोज से आयी नहीं आप मीली देवी ?

सुनिए अरुण बाबू, आप तो उम्र में बड़े ही होंगे, और भी कई मामलों में मुझसे बड़े हैं। आप जब मुझे आप कह कर सम्बोधित करते हैं तो मुझे बड़ा संकोच होता है।

अरुणांशु चुप रहा।

अब से आप मुझे तुम कहकर पुकारा करें।

अच्छी बात।

इसके बाद दोनों ही कुछ देर तक अँधेरे में चुपचाप बैठे रहे।

ऐसे ही समय कमरे की खामोशी को तोड़ती हुई मीली ही बोल पड़ी, अरुण बाबू।

बताओ।

क्यों आपके पिता जी तो नहीं हैं न ?

अरुणांशु का दिल धक् सा हो रह गया। उसके पिता। और वह क्या जवाब दे यह उसको समझ में नहीं आया। वह चुप्पी साधे रहा। क्यों, क्या आपकी माँ भी नहीं हैं ? फिर मीली ने प्रश्न किया। फिर भी अरुणांशु ने कोई जवाब नहीं दिया।

बात क्यों नहीं करते हैं ?

क्या बताऊँ ?

आपकी माँ ?

हाँ, मेरी माँ हैं। अरुणांशु ने धीमी आवाज में कहा।

आपकी माँ आपको बहुत चाहती होंगी, है न।

लेकिन यह सब बात रहने दो मीली। अरुणांशु के स्वर में ऐसा कुछ था कि मीली से आगे कुछ बोला न गया। वह भी चुप हो गयी।

फिर अरुणांशु ही बोला, तुम्हारा दिल आज कुछ काबू में नहीं है मीली।

मीली ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। चुप ही किये रही। सुनो आज तुमको एक नयी धुन बजाकर सुनाता हूँ। अरुणांशु ने कहा।

नहीं रहने दीजिए। जानते हैं आप, काफी छुटपने में जब मुझे भली-भाँति होश भी नहीं था, सुना है मेरी माँ चल बसी थी। कहते-कहते मीली की आवाज आँसू से भारी हो गयी। और जो माँ आज उसे अच्छी तरह याद भी नहीं पड़ती, उसी माँ के बारे में सोचते हुए दुख और रुलाई से उसका दिल अचानक भर आया।

अरुणांशु ने कहा, लेकिन माँ का अभाव तो तुम्हें कभी महसूस भी नहीं करना पड़ा मीली। डाक्टर जी तुमसे जितना स्नेह करते हैं यह तो मैं जानता हूँ।

जी। पिता जी मुझे सचमुच बेहद चाहते हैं। कहती हुई मीली चुप हो गयी।

ऐसे ही समय अरुणांशु अचानक बोल पड़ा, आज कई दिनों से सुधीर

बाबू को आते नहीं देख रहा हूँ।

मीली अरुणांशु की बातों पर चौंक पड़ी। सुबीर? क्या आप उसे जानते हैं?

अरुणांशु भी अचानक ही यह बात कहकर सकपका सा गया था। इस-लिए इस बार झटपट अपने वक्तव्य को सुधारते हुए बोला, उनसे परिचित होने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ लेकिन उनको इस घर में कई बार देखा है।

यह सब बातें रहने दीजिए अरुणांशु बाबू। इससे बेहतर है कि कई दिनों से आपका बजाना नहीं सुना है, कुछ बजा कर आप सुनावें।

इससे बेहतर होगा कि तुम वह धुन बजाकर सुनाओ जो तुमको मैं सिखा रहा था मीली। अरुणांशु ने कहा।

नहीं। नहीं — आप बजाइए मैं सुनूं।

अरुणांशु ने आगे और विरोध नहीं किया, बीन को अँधेरे में ही बगल से हाथ बढ़ाकर उठा लिया। और उँगलियों के स्पर्श से बीन के तार में धुन जगाने लगा।

अरुणांशु बसन्त-बहार बजाता।

बहुत देर तक एक के बाद दूसरा दो-तीन धुन बजाने के बाद अरुणांशु जब रुका, अचानक मीली ने प्रश्न किया, क्यों अरुणांशु बाबू, यह बताइए कि आप करुण राग क्यों इतना पसन्द करते हैं? आपका बजाना सुनने पर यह लगने लगता है कि आपकी वीणा केवल रुदन से भरी हुई है।

मृदुकंठ से अरुणांशु ने कहा, रुदन? जिसके अपने दिल में रुदन भरा हुआ है मीली, वही समझ सकता है, वही दूसरे का रुदन सुनता है।

क्यों, इतनी बातें आपको कैसे मालूम हो गयीं? क्या आप —

क्या है मीली?

मीली ने फिर कहा, आपने भी क्या कभी किसी से प्यार किया था अरुण बाबू?

मैं। हाँ — प्यार क्यों नहीं किया। मुझे प्यार है इस आकाश से, धरती से और धरती पर जो जहाँ है सभी से।

क्यों अरुण बाबू, इतने दिन आपसे हमारी मुलाकात है लेकिन कभी आपको अपने बारे में बातें करते नहीं सुना —

जिसको अपनी कोई बात बतानी ही नहीं है वह क्या बतायेगा बताओ।

नहीं। नहीं — ऐसा भी क्या कभी हो सकता है ? आपका घर-द्वार, देश माँ-बाप, भाई-बहन —

नहीं। नहीं — यह सब बातें मुझसे मत पूछो। मानो आर्तनाद के स्वर में ही अरुणांशु मीली के जवाब में बोल पड़ा।

काफी जहीन लड़की मीली ने अरुणांशु के आर्त स्वर से क्षण भर में समझ लिया कि वही अरुणांशु की सबसे बड़ी व्यथा शायद जमी हुई हो। और इसीलिए बातचीत में वे बड़ी ही सावधानी से सदा उस पक्ष को छिपाये रहते हैं।

थोड़ी ही देर में अचानक ही शायद अपने ही झोंके में अरुणांशु ने फिर कहा, क्यों, बता सकती हो मीली, मनुष्य की सन्तान होकर भी जो देखने में अति कुरूप दानव के आकार का हो, घिनावना और भयकर हो, उसका स्थान कहाँ पर है ?

आप दरअसल क्या बता रहे हैं अरुण बाबू —

समझ नहीं पा रही होंगी — मैं कह रहा था कि जो मनुष्य शक्ल-सूरत में ऐसा भयकर और कुरूप हो, जिसे देखते ही लोगों को आतंकित सा होना पड़ता है मनुष्य के समाज में तो उसका कोई स्थान नहीं है, लेकिन उसका स्थान है कहाँ ? वह जाय तो कहाँ जाय ?

क्या बता रहे हैं आप अरुण बाबू, मनुष्य क्या बदसूरत नहीं होता ? सभी लोग क्या देखने में खूबसूरत होते हैं ? और कुरूप हुआ तो क्या हुआ ? है तो वह हमारे ही तरह इन्सान—

नहीं। नहीं — तुम ठीक-ठीक समझ नहीं पा रही हो मीली। वह इन्सान ही नहीं है। मनुष्य से जनमे होने पर भी उसका चेहरा-मुहरा कुछ भी मनुष्य

सा नहीं है। दानव सा, भूत सा चेहरा है उसका —

होने से भी क्या ? मनुष्य की कोख से जिसका जन्म हुआ हो वह तो मनुष्य ही है —

कहा तो तुमसे, मनुष्य की कोख से जन्म लेने पर भी मनुष्य नहीं, यहाँ तक कि उसे देखने पर तुम, हाँ, शायद तुम भी दूसरे लोगों की तरह आतंकित हो उठो।

यह तो आप ज्यादती कर रहे हैं अरुण बाबू, मैं तो सोच ही नहीं सकती कि वास्तव में क्या ऐसा भी हो सकता है जैसा आप बता रहे हैं।

हो सकता है मीली, हो सकता है। मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जिसके घिनावने भयंकर कुरूप चेहरे के लिए उसके जन्मदाता पिता ने उसे जन्म-क्षण में ही त्याग दिया था।

क्या कह रहे हैं आप ?

ऐसा ही। और जीवन में, इतनी बड़ी दुनिया में, अपने वीभत्स दानव से रूप के लिए सिर्फ दो व्यक्तियों के अलावा किसी अन्य से कोई सहानुभूति या स्नेह उसे नहीं मिला।

हाय। लेकिन अपने रूप के लिए वह स्वयं कोई जिम्मेवार तो नहीं है—

जिम्मेवार क्यों नहीं। उसकी तकदीर ही जिम्मेवार है। लेकिन ताज्जुब है कि वह आदमी इतना अभागा है कि जन्म-क्षण में परित्यक्त होकर भी वह मरा नहीं। हजारों अपमान-जलालत, लानत-मलामत, अवहेलना-उपेक्षा पाकर भी वह जिन्दा रहा। अगर उसके बाप ने उसे जन्म-क्षण में त्याग न कर उसका गला दबाकर उसे मार डाला होता तो शायद आगे की जिन्दगी में उसे इस चरम दुख का भार ढोते हुए न फिरना पड़ता। सभी लोगों ने तो उसे मृत ही जाना था — उसे सचमुच मार डालने से अधिक हानि क्या होती। लोगों ने तो उसे मृत ही जान रखा था —

मृत ही जाना था। मीली विस्मय से बोल पड़ी।

हाँ, उस वीभत्स आकार के बच्चे को त्याग करने के साथ ही साथ बाप ने घोषणा कर दी थी कि उसकी सन्तान मृत है। माँ को भी बाद में मालूम

हुआ कि उसकी सन्तान मृत ही जनमी थी।

ऐसा भी क्या कभी होता है?

इस दुनिया में क्या होता और क्या नहीं होता है यह सोचोगी तो तुम दंग ही रह जाओगी मौली।

नहीं। नहीं —,अरुण बाबू, यह मैं यकीन नहीं करती।

यकीन नहीं करती, है न?

नहीं।

फिर रहने दो, तुम्हारी यकीन बरकरार रहे।

एक बड़ी सी लम्बी सांस अरुणाशु के दिल को झकझोरती अंधेरे में निकल गयी।

पाताल के अँधेरे में

सुव्रत ने कमरे में ड्रेसिंग टेबुल के सामने खड़े मेक-अप ले रहा था।

निकट ही दीवार पर टंगी वाल-क्लाक पर दिखाई दे रहा था कि रात के दस बजने में अब देर नहीं।

आईने की चिकनी सतह पर सुव्रत की परछाँही देखकर ही पता लग जाता है — कृत्रिम रूप-सज्जा के कमाल से सुव्रत धीरे-धीरे एक खालिस चीनी में रूपान्तरित हो चुका है।

पुलिस के जासूस विभाग का एक बड़ा अधिकारी सुव्रत राय नहीं, एक मामूली चीनी है। थोड़ी देर बाद ही सुव्रत इस रात को एक दुःसाहसी अभियान पर निकलेगा।

नौकर ने आकर कमरे के बन्द दरवाजे पर दस्तक दी, बाबू!

सा नहीं है। दानव सा, भूत सा चेहरा है उसका —

होने से भी क्या ? मनुष्य की कोख से जिसका जन्म हुआ हो वह तो मनुष्य ही है —

कहा तो तुमसे, मनुष्य की कोख से जन्म लेने पर भी मनुष्य नहीं, यहाँ तक कि उसे देखने पर तुम, हाँ, शायद तुम भी दूसरे लोगों की तरह आतंकित हो उठो।

यह तो आप ज्यादती कर रहे हैं अरुण बाबू, मैं तो सोच ही नहीं सकती कि वास्तव में क्या ऐसा भी हो सकता है जैसा आप बता रहे हैं।

हो सकता है मीली, हो सकता है। मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जिसके घिनावने भयंकर कुरूप चेहरे के लिए उसके जन्मदाता पिता ने उसे जन्म-क्षण में ही त्याग दिया था।

क्या कह रहे हैं आप ?

ऐसा ही। और जीवन में, इतनी बड़ी दुनिया में, अपने वीभत्स दानव से रूप के लिए सिर्फ दो व्यक्तियों के अलावा किसी अन्य से कोई सहानुभूति या स्नेह उसे नहीं मिला।

हाय। लेकिन अपने रूप के लिए वह स्वयं कोई जिम्मेवार तो नहीं है—

जिम्मेवार क्यों नहीं। उसकी तकदीर ही जिम्मेवार है। लेकिन ताज्जुब है कि वह आदमी इतना अभागा है कि जन्म-क्षण में परित्यक्त होकर भी वह मरा नहीं। हजारों अपमान-जलालत, लानत-मलामत, अवहेलना-उपेक्षा पाकर भी वह जिन्दा रहा। अगर उसके बाप ने उसे जन्म-क्षण में त्याग न कर उसका गला दबाकर उसे मार डाला होता तो शायद आगे की जिन्दगी में उसे इस चरम दुख का भार ढोते हुए न फिरना पड़ता। सभी लोगों ने तो उसे मृत ही जाना था — उसे सचमुच मार डालने से अधिक हानि क्या होती। लोगों ने तो उसे मृत ही जान रखा था —

मृत ही जाना था। मीली विस्मय से बोल पड़ी।

हाँ, उस वीभत्स आकार के बच्चे को त्याग करने के साथ ही साथ बाप ने घोषणा कर दी थी कि उसकी सन्तान मृत है। माँ को भी बाद में मालूम

हुम्रा कि उसकी सन्तान मृत ही जनमी थी।

ऐसा भी क्या कभी होता है?

इस दुनिया में क्या होता और क्या नहीं होता है यह सोचोगी तो तुम दंग हो रह जाम्रोगी मोली।

नहीं। नहीं — ग्ररुण बाबू, यह मैं यकीन नहीं करती।

यकीन नहीं करती, है न?

नहीं।

फिर रहने दो, तुम्हारी यकीन बरकरार रहे।

एक बड़ी सी लम्बी सांस ग्ररुणाांशु के दिल को झकझोरती ग्रंधेरे में निकल गयी।

पाताल के अँधेरे में

सुव्रत ने कमरे में ड्रेसिंग टेबुल के सामने खड़े मेक-ग्रप ले रहा था।

निकट ही दीवार पर टंगी वाल-क्लाक पर दिखाई दे रहा था कि रात के दस बजने में ग्रब देर नहीं।

ग्राईने की चिकनी सतह पर सुव्रत की परछाँही देखकर ही पता लग जाता है — कृत्रिम रूप-सज्जा के कमाल से सुव्रत धीरे-धीरे एक खालिस चीनी में रूपान्तरित हो चुका है।

पुलिस के जासूस विभाग का एक बड़ा ग्रधिकारी सुव्रत राय नहीं, एक मामूली चीनी है। थोड़ी देर बाद ही सुव्रत इस रात को एक दु:साहसी ग्रभियान पर निकलेगा।

नौकर ने ग्राकर कमरे के बन्द दरवाजे पर दस्तक दी, बाबू।

सा नहीं है। दानव सा, भूत सा चेहरा है उसका —

होने से भी क्या ? मनुष्य की कोख से जिसका जन्म हुआ हो वह तो मनुष्य ही है —

कहा तो तुमसे, मनुष्य की कोख से जन्म लेने पर भी मनुष्य नहीं, यहाँ तक कि उसे देखने पर तुम, हाँ, शायद तुम भी दूसरे लोगों की तरह आतंकित हो उठो।

यह तो आप ज्यादती कर रहे हैं अरुण बाबू, मैं तो सोच ही नहीं सकती कि वास्तव में क्या ऐसा भी हो सकता है जैसा आप बता रहे हैं।

हो सकता है मौली, हो सकता है। मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जि[illegible] घिनावने भयंकर कुरूप चेहरे के लिए उसके जन्मदा[illegible] ने उसे जन्म[illegible] में ही त्याग [illegible]।

हुआ कि उसकी सन्तान मृत ही जनमी थी।

ऐसा भी क्या कभी होता है?

इस दुनिया में क्या होता और क्या नहीं होता है यह सोचोगी तो तुम दंग ही रह जाओगी मीली।

नहीं। नहीं — अरुण बाबू, यह मैं यकीन नहीं करती।

यकीन नहीं करती, है न?

नहीं।

फिर रहने दो, तुम्हारी यकीन बरकरार रहे।

एक बड़ी सी लम्बी सांस अरुणाशु के दिल को झकझोरती अंधेरे में निकल गयी।

पाताल के अँधेरे में

सुव्रत ने कमरे में ड्रेसिंग टेबुल के सामने खड़े मेक-अप ले रहा था।

निकट ही दीवार पर टंगी वाल-क्लाक पर दिखाई दे रहा था कि रात के दस बजने में अब देर नहीं।

आईने की चिकनी सतह पर सुव्रत की परछांही देखकर ही पता लग जाता है — कृत्रिम रूप-सज्जा के कमाल से सुव्रत धीरे-धीरे एक खालिस चीनी में रूपान्तरित हो चुका है।

पुलिस के जासूस विभाग का एक बड़ा अधिकारी सुव्रत राय नहीं, एक मामूली चीनी है। थोड़ी देर बाद ही सुव्रत इस रात को एक दुस्साहसी अभियान पर निकलेगा।

नौकर ने आकर कमरे के बन्द दरवाजे पर दस्तक दी, बाबू!

कौन है रे ?

मैं यादव हूँ।

क्या खबर है यादव ?

लिगफू आया है।

लिगफू को नीचे कमरे में ही बिठा। मैं आ रहा हूँ।

थोड़ी देर बाद चीनी की रूप-सज्जा में सुव्रत जब बाहर के कमरे में लिगफू के सामने आकर खड़ा हो गया तो लिगफू दंग रह गया। सुव्रत को देखकर शुरू-शुरू में वह पहचान भी नहीं सका।

सुव्रत राय के घर पर यह कौन आ गया ?

आज तीस साल से कलकत्ते में रहने की वजह से लिगफू यहाँ की जुबान टूटी-फूटी बोल लेता है।

लिगफू को अचरज से अपने मुँह की ओर ताकते देखकर सुव्रत बोला, क्यों लिगफू ? मुझे पहचान नहीं पा रहे हो ?

बाबू छाब। — इत् इज़ ए मिराकेल — तुमको शुरू में मैं बिल्कुल पहचान नहीं सका।

ठीक है, चलो अब। जब तुम भी मुझको पहचान नहीं सके तो वे भी मुझपर कतई शक नहीं कर सकेंगे। अब मैं बेफिक्र हूँ।

लेकिन बाबू छाब, तुम सचमुच वहाँ जाना चाहते हो ?

जाना चाहता हूँ ? तुम्हारे साथ सलाह-मशविरा कर इतनी साज-सज्जा की मेहनत फिर क्यों की ? चलो। चलो — अब देर नहीं करनी चाहिए।

फिर भी लिगफू मानों आनाकानी करने लगा।

चलो। देर करने से क्या फायदा ?

लेकिन बाबू छाब। वह डेन बड़ी खूँखार जगह है। एक खंडहर के तहखाने में। बात-बात में वहाँ छुरे और पिस्तौल चल पड़ते हैं, किसी का कत्ल हो जाता है तो उसे मिट्टी में ही दफना देते हैं, बाहर के किसी चिड़िया-चुनमुन को भी पता नहीं लग पाता। किसी तरह से भी अगर उनको मालूम हो जाय —

मालूम हो जाय तो छुरे पिस्तौल ही तो चलेंगे। तो मैं भी कोई निहत्था नहीं हूँ और मेरा निशाना कितना तगड़ा है यह तो तुम भी अच्छी तरह जानते हो लिगफू —

हाँ, लिगफू भी भली-भाँति जानता है।

बिना कुछ और एतराज किये लिगफू ने कहा, तो चलो।

गर्दोन आदि का कोर्नर और अफीम के तस्कर-व्यापार का अड्डा, डेन।

बेलेघाटा इलाके में एक पुराना मकान। अंग्रेजी 'ई' हरूफ के आकार का।

दुमंजिला मकान।

लम्बे अरसे से मरम्मत आदि के अभाव में वह अब सचमुच खस्ताहाल हो गया है।

ज्यादातर दरवाजे खिड़कियाँ ही गायब हैं।

पलस्तर उखड़े कमरे आदमी के रहने लायक नहीं हैं।

फिर भी इस मकान भर में हर रात के अँधेरे में विभिन्न भाषा-भाषी और भिन्न-भिन्न जाति के लोगों की एक कासमोपोलिटन भीड़ इकट्ठी हो जाती है।

हालाँकि बाहर से उसे डेन के रूप में पहचानने का कोई जरीया नहीं है क्योंकि उस खस्ताहाल पुराने मकान के एक-एक कमरे में असंख्य किरायेदार किसी कदर गुजारा करते हैं।

उत्कल-निवासी, पंजाबी, बिहारी, पठान, सिक्ख से लेकर बंगाली तक एक पँचमेल समाज और वर्ग के नर-नारियों की भीड़।

दिनभर एक प्रकार का विचित्र कलरव छत्ते में बसी मधु-मक्खियों की गुंजन की तरह गूँजता रहता। मामूली बातों पर कलह-कोलाहल, फिर गाढ़ी दोस्ती।

अजीब-अजीब किस्म के लोग। रुचि नहीं, शिक्षा नहीं, उनमें केवल

निचले स्तर की जीवन-यात्रा की एकरसता और भद्दा कमीनापन है।

इसी मकान के पिछवाड़े जमीन के नीचे एक हालनुमा कमरे में डेन है यानी जिस जगह छुपा हुआ पोशीदा कारोबार चलता है।

पार्क स्ट्रीट में सुवीर घोष के मिडनाइट होटल के साथ इस डेन का एक अदृश्य योगसूत्र या अटूट बन्धन है।

कोकैन-अफीम का असली खरीद-फरोख्त इसी डेन में रात के अँधेरे में चालू रहती है। और यहाँ भी गणेन का एक दफ्तर है।

जिस आदमी पर यहाँ की देखभाल का भार है वह दरअसल किस देश का, किस जाति या धर्म का है यह किसी की भी समझ के बाहर की बात है।

इस आदमी का असली या सच्चा नाम क्या है वह भी किसी को मालूम नहीं है लेकिन यहाँ के सभी लोग उसे ईरानी साहब कहकर ही जानते हैं।

लम्बाई में वह आदमी शायद पाँच फुट से एकाध इंच ऊँचा हो।

न दुबला न मोटा, बदन पर चढ़ी आधी बाँह वाली कमीज में से बाँह के जो मांसल हिस्से दिखाई पड़ते हैं, देखने से ही लगता है कि इस्पात से बने हैं। उन पर दो नंगी नारी मूर्तियाँ गुदने से गुदी हुई हैं। सीने पर ऐसी ही एक नारी का ऊपरी अंग अंकित है।

लेकिन उन आहनी बाँहों में कैसी गजब की ताकत छिपी हुई है यह सिर्फ उन्हीं को मालूम है जो उनके हाथों घूँसा-मुक्का थप्पड़-झापड़ खा चुके हों।

ईरानी साहब के बदन का रंग हब्शियों जैसा काला है, सिर के बाल खिचड़ी हैं और तरतीब से बैक-ब्रश किये हुए। हमेशा एक सफेद ट्राउजर और सफेद टुइल की हाफशर्ट पहने रहते हैं। पैरों में क्रैप-सोल के जूते—इसलिए चलते वक्त कोई आवाज नहीं होती। और उनके हाथ में एक फुट लम्बी चमड़े से मढ़ी लोहे की छड़ होती है। लोग उसे छड़ नहीं कहते, कहते हैं ईरानी साहब की संटी।

ईरानी साहब के चेहरे की ओर देखो तो वहाँ पैशाचिक निर्दयता के

सिवा कुछ दिखाई नहीं पड़ेगा। चौड़ा माथा। रोएँदार भवें। नन्हीं-नन्हीं गाल लाल-लाल दो आँखें। उन आँखों में मानो सदा साँप की कुटिल निगाह कुलबुला रही हो।

पहली जवानी में किसी समय सगीन भातशक की बीमारी से नाक की ब्रिज नीचे बैठ गयी है और इस समय नाक का बीच वाला हिस्सा बिल्कुल गायब होकर अचानक ही मानो ऊपर की मोटी उल्टी हुई होंठ में बिल्कुल ऊपर ही दो सूराख दो ओर फैल गये हैं। चौकोर जबड़े। और नूर दाढ़ी।

तीन बार कत्ल के इलजाम पर और तीन-चार बार किस्म-किस्म के जुर्म के लिए, पहले वाले मामले में सबूत के अभाव में कुल सात बार में दसेक साल ईरानी साहब जेल काट आये हैं।

ईरानी पर ही इस डेन की देखभाल का जिम्मा होने पर भी यहाँ का पूरम-पूर मालिक गर्ग़ोन बोस ही है। इसलिए करीब-करीब हर रात को ही गर्ग़ोन बोस को इस डेन में आते-जाते देखा गया है।

नीचे वाली मंजिल की एक चोर-कोठरी में छिपे जीने से सात सीढ़ी नीचे उतरने के बाद तहखाने वाला यह डेन दिखाई पड़ता है।

हाल के कमरे के चारों तरफ डेढ़ आदमी के समान ऊँची रेलिंग से घिरा लकड़ी का एक मंच सा बना है।

ज्यादातर निचले तबके के विभिन्न जाति के नशेबाज ही यहाँ आकर रात को अड्डा जमाते हैं। कोकेन, अफीम, चरस, गाँजा, शराब तो है ही और साथ ही जूए का अड्डा भी। एक तरफ नशा तो दूसरी ओर जुआ — रात के अँधेरे में यह तहखाना मानो नरक सा गुलजार हो उठता।

कोकेन आदि के व्यापारी भी यहीं आकर लेन-देन की बातें करते, मोल-तोल करते फिर ईरानी का विश्वसनीय अनुचर रमजान उनको मिडनाइट होटल में तुपे के पास भेज देता।

व्यापार की असली बातचीत या लेन-देन होटल में ही होती, मुखौर या गर्ग़ोन की सलाह के मुताबिक तुपे के जरिये से।

उस दिन रात को लिगफू ही सुव्रत के पास पहले खबर ले आया था, कुछ दिनों पहले 'संघाई' नामक चीनी जहाज से बहुत रुपयों का जो कोकेन बजबज से कुछ पहले ही गायब हो चुका था उसी के लेन-देन के बारे में उस डेन में प्राथमिक बातचीत होगी।

और जिस आदमी के साथ बातचीत होगी उससे चन्द रोज पहले सौभाग्य से लिगफू का परिचय हो गया था।

लिगफू छिपे-छिपे इस लाइन में काम करने पर भी बीच-बीच में सरकार की मुखबिरी कर अच्छी-खासी रकम कमा लेता था।

और लिगफू को परकाये रहने से कभी-कभी काफी काम बनता है इसलिए सब कुछ जान-बूझकर भी सुव्रत उसे शह दिये हुए था।

उस दिन रात को निश्चित समय पर लिगफू और सु चाऊ (छद्मवेशी सुव्रत) छिपे दरवाजे से डेन में दाखिल हुए।

सीलिंग से कमरे में कुछ लटकती हुई बत्तियों से कमरे को रोशन करने का इन्तजाम है पर वह बहुत ही नाकाफी है।

दम घुटाने वाले धुएँ का एक परदा मानों गाढ़े कुहरे की तरह सारी जगह पर झुका हुआ है। मद्धिम रोशनी और धुएँ में सारी जगह एक खौफनाक शक्ल अख्तियार किये हुए है। एक तेज-तुर्श महक से सारे कमरे की ऊमस मानों सीसे की तरह वजनी हो गयी है। जी मितलाने लगता। उबकाई से दिमाग भिन्नाने लगता।

इनके पैरों की आहट पाते ही अचानक कमरे की किसी जगह से ईरानी साहब आ टपके।

क्या हाल-चाल है लिगफू ?

लिगफू से सवाल करने पर भी सुव्रत ने कनखियों से मालूम कर लिया कि ईरानी की तेज तलाशी आँखें उसी को खामोश ढंग से सिर से पैर तक जाँच-परख रही हैं।

हमारा दोस्त । सुब्राऊ । रेस्तराँ का काम करता, अभी कुछ दिन हुए हाँग-काँग से आया है ।

हूँ । क्या तुम्हारे दोस्त के पास कुछ माल-टाल भी है ? — ईरानी ने पूछा ।

एक अजीब सी मानीखेज ढंग से मुस्कुराते हुए वह बोला, है क्यों नहीं । वर्ना इतनी तकलीफ उठाकर यहाँ आता ही क्यों ।

सफेद या काला ?

दोनों ही है । गणेन बाबू हैं कि नहीं ।

हैं । प्राइवेट कमरे में टीपू सुलतान से बातें कर रहा है ।

कौन ।

नवाबजादा । —

मुस्कुराकर ईरानी ने सिर हिलाकर कहा, हाँ ।

इस लाइन में नवाबजादा टीपू सुलतान बड़ा शातिर है ।

और लिगफू पहले ही खबर पाकर सुब्रत को उसका पीछा करने ले आया है क्योंकि वही आज माल का विक्रेता है ।

लिगफू के साथ छद्मवेश में इस डेन में आने के सुब्रत के दो उद्देश्य थे, एक तो डेन को अपनी आँखों से देख लेना यहाँ का हालचाल और कामकाज समझ लेना और दूसरा, चोरी के माल के असली गुदाम का पता लगता है या नहीं, यह आजमा लेना । और इसी के साथ-साथ उस रात को जो सौदा होने की बात है उसकी भी टोह अगर लग जाये तो लगा लेना ।

छोटे-मोटे पर सुब्रत का कोई आकर्षण नहीं । बड़े-बड़े ही उसके शिकार हैं । और बिल्कुल रंगे हाथ सबको न पकड़ पाने से कोई भी फायदा नहीं यह भी उनके लिए अनजाना नहीं है ।

थोड़ी देर में ही ईरानी की मध्यस्थता में एक सुरंग वाले रास्ते से लिगफू और सुब्रत इस इमारत से सटी बगीचे वाली खस्ताहाल एक कोठी के दुमंजिले

मरे में पहुँच गये।

रे में एक मेज के सामने कुर्सी पर गणेन बैठा था उसी के सामने और

ो कुर्सियाँ थीं।

मरे में गणेन अकेले इनके इन्तजार में थे।

लगफू को देखकर गणेन ने सादर सम्भाषण किया, आओ लिंगफू।

ा ने मुझसे पहले ही सब कुछ बताया है। कितने रुपये का माल

ा।

कोई बीस हजार का होगा। — सब सफेद रवा होगा।

लालच से गणेन की पुतलियाँ मानों चमक उठीं।

माल कब मिल सकेगा।

जब बतावें।

अच्छी बात, छह-सात दिन के बाद तुम ईरानी से पता लगा लेना —

हाँ।

अच्छी बात है, ऐसा ही होगा। लेकिन रुपया नकद मिलना चाहिए और हाथों हाथ चाहिए। — लिंगफू ने कहा।

ऐसा ही होगा।

आपसे एक बात थी गणेन बाबू। — दबी जबान में अचानक लिंगफू बोल पड़ा।

आँखों के इशारे गणेन ने ईरानी को कमरे से चले जाने को कहा। ईरानी कमरे से चला गया।

हाँ, बताओ। — कौतूहल भरी नजरों से लिंगफू की ओर देखकर इ... बार गणेन ने कहा।

इतना लिंगफू ने सुब्रत की सलाह के मुताबिक ही कहा।

लेन-देन क्या सुवीर बाबू के सामने ही होगा ?

क्यों, क्या बात है ?

अच्छी बात है। तो यही तय रहा।

हाँ।

इसके बाद दोनो वहाँ से चल दिये।

वज्र-विद्युत

राजीव के परिवर्त्तन से दिल ही दिल कमला बेहद शकित अनुभव करने लगी थी। जिस व्यक्ति को विवाह के उपरान्त आज तक कभी उत्साहशून्य, उद्यमशून्य और विषण्ण होते नही देखा गया आजकल उसके चेहरे की ओर ताका नही जाता। सिर्फ चन्द महीनो में ही मानो राजीव की उम्र सन सन-दस साल बढ़ गयी है। सदा ही वह अनमना-सा, उमगशून्य-सा। रह-रह कर यकायक चौंक पड़ता। राजीव हमेशा से ही अल्पभाषी था। आजकल मानो किसी से भी बातें करना बिल्कुल बन्द ही कर दिया है। एक की बजाय दो बात करना पड़े तो भिन्ना उठता। अच्छी तरह से खाना नहीं खाता। खाने बैठ कर अचानक ही उठ जाता। कहा जाय तो बताता, भूख नही। रात को सोता नही, रात भर कमरे मे या छत पर चहलकदमी ही करता था। बात-बेबक्त शराब पीने की मात्रा भी मानों बढ़ गयी है। कमला ने कितनी ही बार पूछा, बताओ भी, तुम्हें हो क्या गया है?

क्यो। क्या होना है? राजीव ने कहा।

अजी, तुम मेरी आँखो को धोखा नही दे सकते। सुवीर की सालगिरह के दिन से ही देख रही हूँ कि तुम कुछ बदल गये हो।

राजीव चौंक पड़ा। बोल पड़ा, नही। कुछ भी नहीं।

कमला को बड़ा भय होता। आजकल वह हर वक्त दूर से छाया की तरह अपने पति पर निगरानी रखे है।

पति के अपने मुंह कुछ न मानने पर भी कमला यह तो समझ गयी कि उसे कुछ हो गया है लेकिन हुआ क्या है यह जानने का कोई जरीया नहीं था। राजीव ने मानों बिल्कुल मौनव्रत अपना लिया हो।

इसी बीच एक दिन रात को पति-पत्नी में बातें हो रही थीं।

राजीव से कमला कह रही थी, कई रोज से सोच रही हूँ कि तुमसे एक बात बताऊँ। मीली का इम्तहान तो हो चुका है। तय था कि इम्तहान के बाद ही सुवीर और मीली का व्याह हो जायेगा — इसके अलावा मुन्ना भी कह रहा था कि महीने भर के बाद कारोबार के बारे में क्या-कुछ सीखने वह अमरीका चला जायेगा, तो —

राजीव ने बीवी को बीच ही में टोकते हुए कहा, क्या मुन्ना ने तुमसे इस बारे में कुछ बताया है ?

हाँ, बता रहा था कि साल भर के लिए अमरीका चला जायेगा —

यह व्याह शायद सचमुच आखिर तक नहीं हो सकेगा कमला। — राजीव ने धीरे स्वर में कहा।

नहीं हो सकेगा। मतलब ? — विस्मित सवालिया निगाह से कमला ने पति के मुख की ओर देखा।

हाँ, तुमसे मैं चन्द रोज से बतलाने का इरादा करते हुए भी बता न सका, कमला। सात आठ दिन हुए सुहृद का एक खत मिला है मुझे —

खत। सुहृद देवर जी का खत। कैसा खत ? कमला का उतावलापन बढ़ता चला गया।

ठहरो, वह खत मेरे दराज में ही है, पढ़कर सुनाता हूँ।

राजीव ने आगे बढ़कर राइटिंग टेबुल के ड्रायर से एक लिफाफे से खत निकाल कर आंखों के सामने खोलकर पढ़ना शुरू किया। सुनो —

प्रिय राजीव,

सचमुच जब हम सोचते हैं कि हम कितने बेबस हैं, एक मामूली वादा भी आखिर तक पूरा कर पाना हम लोगों के लिए दुस्वार है तो बड़ा अफसोस होता है। बड़े दुख के साथ ही तुम्हें सूचित करना पड़ रहा है कि मेरी बेटी मीली के साथ तुम्हारे बेटे सुवीर का ब्याह अब और सम्भव नहीं रहा। इस शादी के सिलसिले मे हम दोनों ने एक दूसरे से जो वादा किया था, उससे तुमको मैंने स्वेच्छा से मुक्त कर दिया और तुमसे विनीत प्रार्थना है कि तुम भी मुझे मुक्त कर दोगे। मैं समझ रहा हूँ कि उन दोनों में मेरे बिल्कुल न चाहते हुए भी जो मधुर सम्बन्ध बन गया था और लड़की का मुँह ताक कर ही जिसे मैंने कभी और भी दृढ़ और सघन बनाना चाहा था, शायद ईश्वर की ऐसी मर्जी नही रही —

राजीव को चिट्ठी पढ़ने से रोक कर सहसा कमला बोल पड़ी, इन सारी बातो का मतलब क्या है ? यह चिट्ठी तुम्हें देवर जी ने लिखी है। देवर जी —

हाँ। — देखना चाहती हो तो अपनी आँखो से ही देखो न।

लेकिन इतने दिनो के बाद इन सब बातो का क्या मायने है ?

मायने है, सुनो —

राजीव फिर चिट्ठी पढ़ने लगा —

लेकिन तुम शायद पूछो और तुम्हारा पूछना बिल्कुल जायज भी है कि अचानक ऐसी संभावना को मैं तोड देना ही क्यो चाहता हूं। इसलिए सब बातें मैं तुम्हें खुलासे से ही लिख रहा हूँ।

तुम जानते ही हो कि मीली मेरी इकलौती है। मातृहारा दो साल की बेटी मीली को इतने दिनो तक पाल-पोस कर बडा किया है मैंने। उस मीली को जान-बूझ कर मैं सर्वनाश और बदहाली की राह पर धकेल दूँ, तुम जानते ही हो, ऐसा मुझसे सम्भव नही। और बेशक तुम भी इसमें सम्मत नही होगे।

और तुम यह भी जानते ही हो कि सदा से सत्य और न्याय को ही जीवन का काम्य माना है मैंने। उस दृष्टि से भी आज उनका मिलन सम्भव नही।

शायद तुम नही जानते हो, लेकिन मुझे किसी ढग से मालूम हो गया है

कि सुवीर आज चरम सर्वनाश के रास्ते पर एक-एक सीढ़ी नीचे उतरता चला जा रहा है। आज मैं साफगोई ही बरतूंगा राजीव, कि तुम्हारे और भाभी के लाड़ ने ही उसे आज एक शरीफ आदमी बनने से रोका है। तुम या भाभी कभी भी अपने अकेले बेटे के प्रति सजग नहीं थे। इसलिए जो होना था हो गया है। निम्नस्तर के समाज जीवन के नीच पाप और लालसा की कीच में तुम लोगों का सुवीर आज गले तक डूब गया है। यहाँ तक कि वह अपना साधारण शराफत का सलूक भी भूल चुका है।

कमला ने अब काफी झुंझलाते स्वर में ही पति को टोकते हुए कहा, रहने दो। उनकी बेटी के साथ शादी न होने पर भी मेरे बेटे की शादी के लिए लड़कियों की कमी नहीं होगी। तुम्हारी हाल की बातों पर मैं यकीन करना नहीं चाहती थी, अब देख रही हूँ कि तुम्हीं ने उनको ठीक समझा था। इन्सान में इतनी तबदीली आ सकती है—

नाराज मत हो कमला, सुनो। सुहृद ने जो कुछ लिखा है वह झूठ नहीं है—

सुनो मैं उसकी माँ हूँ—अपने बेटे को मैं नहीं जानती?

ऐसे ही समय सहसा कमरे में प्रवेश कर सुवीर ने माँ और बाबू के चेहरों की ओर देखकर अनुमान कर लिया कि कुछ हुआ है। उसने माँ की ओर रुख-कर सवाल किया, क्या हुआ है माँ?

कमला ने सवाल का कोई जवाब नहीं दिया। खामोश बनी रही।

राजीव बोले, तुम्हारी माँ के मुँह सुना कि तुम अमरीका जा रहे हो सुवीर।

जी।

लेकिन रुपया कहाँ से मिलेगा?

माँ-बेटे ने इस आखिरी बात पर एक साथ आश्चर्य करते हुए राजीव के मुँह की ओर देखा।

सुनो सुवीर। राजीव ने कहा, तुम्हारी जहाँ मर्जी जा सकते हो लेकिन मुझसे एक छदाम की मदद भी तुम्हें अब नहीं मिलेगी यह जान लेना।

आप मुझे रुपया नहीं देंगे ?

नहीं। जब तक तुम भटने को सुधार नहीं लेते।

माँ। इन सब बातों का क्या मतलब है ? सुवीर ने अब की बार माँ से ही पूछा।

माँ से सवाल करने से कोई फायदा नहीं सुवीर। तुम्हारे बारे में मुझे जो बातें सुनने को मिली हैं उससे मैं समझ गया हूँ कि तुम अध:पतन की आखिरी सीढ़ी पर पहुँच गये हो — यहाँ तक कि सुहृद भी तुम्हारे वर्तमान घिनावने परिचय से ऊब कर —

हाँ। अब सब समझ पा रहा हूँ — यह सब उसी की कारस्तानी है। नीच कमीना।

सुवीर। बेहयाई की एक हद होती है। — राजीव गरज पड़ा।

तो आप भी सुन लें बाबू। मुझे आपकी एक कौड़ी भी नहीं चाहिए। मुझे पैसों की कमी नहीं होगी।

सुवीर। इम्पार्टिनेन्ट। — तुम्हारे चेहरे की ओर देखने में भी मुझे नफरत हो रही है। जाओ। तुम यहाँ से चले जाओ।

हाँ, चला ही जाऊँगा। मैं भी अब इस घर से कोई रिश्ता रखना नहीं चाहता। अभी चला जाऊँगा। — वह भी बराबर की तेज़ी से बोला।

हाँ, अभी जाओ। आज से सोच लूँगा कि मेरा — मेरा कोई बेटा नहीं था।

सुवीर ने पलटकर पिता से तेज आवाज में कहा, ऐसा ही सोच लें।

कमला चीख पड़ी, मुन्ना। मुन्ना। सुवीर सुन। सुन जा।

नहीं। नहीं — इस घर में अब पल भर भी नहीं। कहते-कहते आँधी की रफ्तार से सुवीर सीढ़ी तय कर चला गया।

मुन्ना। मेरा अच्छा बेटा, सुन जा। सुन तो — कमला भागने लगी।

राजीव ने रोका, नहीं। नहीं — जाने दो, उसे जाने दो कमला, जाने दो। राजीव ने कमला का हाथ पकड़ लिया।

अजी तुम क्या कह रहे हो ?

हाँ । हाँ — कमला । यह मेरे पाप का फल है । महापाप का दंड है ।
ा । निष्ठुर नियति है ।
नहीं । नहीं — मैं उसे नहीं जाने दूँगी । तुम मुझे छोड़ दो । मुन्ना ।
। सुवीर ।

कठोर निर्मम स्वर में राजीव ने कहा, कमला, उसे जाने ही देना पड़ेगा,
ो एक मासूम वेगुनाह को घर से निकालकर जो महापाप मैंने किया था
ज उस महापाप का भीपण दंड मुझे सिर नवा कर लेना ही पड़ेगा । इसी
ह से लेना होगा ।

राजीव की वात खत्म होने के साथ ही साथ वाल क्लाक पर रात वारह
टंकोरे वजने लगे ।

राजीव मानों चौंक पड़ा, रात के वारह वजे हैं, पच्चीस साल पहले के
रात वारह वजे के साथ क्या पच्चीस साल वाद के रात वारह वजे सब कुछ
का अन्त होगा ।

लेकिन कमला पति की आखिरी वातों पर कोई कान दिये विना ही
सीढ़ी से नीचे उतर गयी, और पुकारती रही, मुन्ना । मुन्ना । सुन । सुन ।
सुन — राजा वेटा मेरा ।

रात वारह के टंकोर उस समय भी खत्म नहीं हुए थे — वजते ही जा
रहे थे ।

टन्न । टन्न । टन्न ।

उस समय राजीव पागल जैसा ही अपने आप से वुदवुदा रहा था, कोई
भी नहीं रहेगा, नहीं रहेगा, कुछ भी नहीं रहेगा । अपने हाथों से आग जलायी
है मैंने, जलूंगा नहीं । जलेगा, सव कुछ धुधुयाता जलेगा । सव — सव कुछ
जल कर खाक हो जायेगा ।

मीली को दोपहर में एक आदमी के हाथ एक चिट्ठी मिली ।
विस्तर पर पड़ी अकेली वह सुवीर की चिन्ता में विभोर थी । आ

आठ दिन से सुवीर को एक बार के लिए भी देख नहीं सकी थी। पता नहीं इस जीवन में फिर कभी मुलाकात हो या न हो।

चिट्ठी सुवीर की थी।

सुवीर ने लिखा है —

मीली,

अन्तिम विदा से पूर्व आखिरी बार के लिए इस जीवन की अन्तिम भेंट करना चाहता हूँ।

कल रात बारह बजे तुम्हारे घर के बाग के दक्षिणी दरवाजे के सामने आकर खड़े हो जाना। मैं आऊँगा। भूलना नहीं, ठीक रात बारह बजे।

तुम्हारा सुवीर

•

कल रात बारह बजे।

हाँ, मीली बेशक उससे भेंट करेगी।

आठ दिन भी नहीं गुजरे लेकिन लगता है मानों मीली ने एक युग हो गया सुवीर को देखा नहीं है। सुवीर। सुवीर। आठ दिन के बाद सुवीर की चिट्ठी पाकर मीली के चेहरे पर हँसी खिल आई। सुवीर। सुवीर ने उसे बुलाया है।

लेकिन कल रात बारह बजे।

आज की रात, कल का सारा दिन फिर रात के बारह बजे तक इन्तजार करना पड़ेगा, फिर कहीं सुवीर से भेंट होगी।

मीली शाम को घर में नहीं थी। डा० सरकार के साथ मार्केट गयी है। नौकर-चाकर भी अपने-अपने काम में लगे हुए हैं। ऐसे समय शाम के अँधेरे में खामोशी से अपने कमरे से निकलकर चुपचाप चौकस निगाहों से इधर-

उधर देखते हुए अरुणांशु सीढ़ी से ऊपर चढ़ गया, कुछ-कुछ चौकन्ने चोर की तरह।

बरामदे की आखिरी छोर पर मीली का कमरा है। अरुणांशु दुबके पैर मीली के कमरे के बन्द दरवाजे के सामने आकर खड़ा हो गया। फिर एकबार भीत शंकित दृष्टि से इधर-उधर देखा।

दिल में किसी ने मानों पुकारा, अरुणांशु कहाँ जा रहे हो? क्यों तुम चोर की तरह दुबके पैर इस कमरे के सामने आकर खड़े हो गये हो, क्यों? तुम्हारा मतलब क्या है बताना। तुम्हें इस कमरे में किस चीज की जरूरत है?

किसी अस्वाभाविक चंचलता से उसका दिल धड़क उठा। शरीर भर में न जाने कैसी उत्तेजना। दिल कहता, अरुणांशु। लौट जाओ। लौट जाओ।

साथ ही साथ मन में मानों कोई दूसरा बोल पड़ता, लौट क्यों जाऊँ? मैं चोरी करने नहीं आया हूँ। सिर्फ कमरे में ड्रेसिंग टेबुल पर जो छोटी सी फोटो है — मीली की वह फोटो।

दिल फिर कहता, ओ, मीली की फोटो। लेकिन क्या तुम जानते नहीं हो कि दूसरे की चीज बिना बताये लेने से चोरी करना हो जाता है। तुम चोर हो। तुम चोर हो। तुम चोर हो।

दिल धड़क रहा है।

नहीं। नहीं — मैं चोर नहीं हूँ। मामूली सी एक फोटो कोई कीमती चीज तो है नहीं। एक मामूली सी फोटो। कितनी ही सारी फोटो मीली की इस घर में हैं। एक ले ली जाय तो चोरी क्यों होगी।

दरवाजा ठेल कर अरुणांशु ने कमरे में प्रवेश किया। खट् से स्विच दबाकर बत्ती जलायी।

वह रही। मीली मुस्कुरा रही है।

हाथ बढ़ाकर ड्रेसिंग टेबुल के सामने आकर अरुणांशु ने आग्रह से फोटो ले ली। कुरते के नीचे फोटो छिपाकर वह बाहर निकल आया। बत्ती बुझाकर

दरवाजे उटका कर सीधे तेज चाल अपने कमरे में दाखिल होकर अरुणांशु ने भीतर से दरवाजे की अर्गला चढ़ा दी।

ओफ। अब भी दिल धड़क रहा है। मीली। मीली। मीली स्वर्ग की देवी। देख-देख कर भी आँखों की प्यास मिटती नहीं। मीली कितनी सुन्दर है। संसार की सारी सुन्दरताओं से तिल-तिल सँजोकर तिलोत्तमा बन गयी है।

अपलक नजरों से अरुणांशु मीली की फोटो की ओर देखता रहा।

भगवान। मैंने तुम्हारे पास कौन-सा अपराध किया था। कौन-सा पाप किया था कि तुमने मुझे इतना कुरूप बना कर सिरजा। और अगर ऐसा कुरूप ही बनाया तो इन्सान का दिल क्यों इसमें दे दिया। क्यों मेरी सारी बोधशक्ति को पथरा नहीं दिया? वह इससे कहीं बेहतर था। कहीं बेहतर।

आज रात बारह बजे सुवीर ने बाग के दक्खिनी दरवाजे पर मिलने को कहा है। व्याकुल आग्रह से मीली अपना एक-एक पल बिताने लगी। इस समय रात के बस ग्यारह बजे हैं।

डा० सरकार एक मरीज के जरूरी बुलावे पर रात के नौ बजे निकल गये हैं।

कब लौटेंगे कुछ मालूम नहीं।

अरुणांशु के कमरे का दरवाजा भी बाहर से बन्द है। थोड़ी देर पहले शायद वह भी बाहर निकल गया है।

कभी-कभी इसी तरह ज्यादा रात बीते अरुणांशु कहीं चला जाता है।

मीली ने एक दिन पूछा था तो अरुणांशु ने जवाब दिया था, रात को अकेले अँधेरे सुनसान पार्क में घूमना उसे अच्छा लगता है। इसलिए वह पार्क में घूमने जाता है।

मीली बार-बार घड़ी की ओर देखती।

रात के ग्यारह बज कर ग्यारह मिनट हुए हैं। अब भी उनचास मिनट बाकी हैं। सचमुच। यह घड़ी भी कैसी सुस्त चल रही है।

घड़ी की सूइयाँ मानों चल ही नहीं रहीं। रुकी हुई हैं।

लुंठन

टन्न। टन्न — रात बारह के टंकोर बज रहे हैं।

फुर्तीले कदमों से अँधेरा जीना तय कर मीली नीचे उतर गयी।

लाइब्रेरी-कक्ष के पीछे का दरवाजा खोलकर बाग में आकर खड़ी हो गयी। ओफ, कितना अँधेरा है यह बाग।

अँधेरे में ही मीली दक्षिण की ओर बढ़ी।

वह रहा — अँधेरे में एक आग की चिनगारी जैसी दिखाई दे रही है? हाँ, शायद इन्तजार करते हुए सुवीर की सिगरेट का सुलगता सिरा हो। सुवीर ही है।

और जरा आगे बढ़कर धीमी आवाज में मीली ने पुकारा, सुवीर।

सूखी पत्तियों पर एक हल्की सी खसफस हुई।

कोई आगे बढ़ आया।

सुवीर। तुम कहाँ हो? मैं मीली यहाँ हूँ।

अँधेरे में ही दबी आवाज सुनाई पड़ा, मीली।

सुवीर।

यहाँ।

शब्द का पीछा करते अँधेरे में जरा और आगे बढ़ते ही सहसा दो लौह-

बाँहों ने मीली को पल भर में बाँध लिया।

घटना की आकस्मिकता से, भय से आतंकित मीली एक अस्पष्ट आर्तनाद कर उठी लेकिन वह आर्तनाद भी गले में ही डूब गया। एक कपड़े में किसी ने उसका मुँह बाँध लिया और उसका गला रुँध गया। एक मीठी सी महक भी उसकी नाक में आयी। वही मीठी सी सुगन्ध।

सारा कुछ दम्म से डोल गया।

अँधेरे में चुपचाप ईरानी ने मीली के अचेतन शिथिल शरीर को कन्धे पर उठा लिया और बाग के दरवाजे से निकल बाग के पीछे की सँकरी गली में आकर खड़ा हो गया।

गली पार कर ईरानी सीधे गली के मोड़ पर बड़ी सड़क पर खड़ी काले रंग की सेलून गाड़ी के सामने आ खड़ा हुआ।

कोई परछाईं सा फुटबोर्ड पर खड़ा था। उसने पूछा, लाये।

हाँ, ईरानी ने जवाब दिया।

ऐन उसी वक्त अरुणांशु भी लौट रहा था।

अचानक ही अरुणांशु की नजरों में पड़ा, दूर गैस की रोशनी में ईरानी अचेतन मीली के शरीर को कंधे पर लादे गाड़ी के सामने आ खड़ा हुआ है।

अरुणांशु चौंक पड़ा। माजरा क्या है ?

ईरानी दूसरे आदमी की सहायता से मीली का अचेतन शरीर गाड़ी में रख रहा था, दूर से गैस की रोशनी में पल भर मीली का चेहरा अरुणांशु को दिख गया।

यह क्या। मीली को कोई चुराये ले जा रहा है। मीली।

पग-पग अँधेरे में बढ़ता अरुणांशु बिल्कुल गाड़ी के पीछे आकर खड़ा हो गया।

स्टार्ट देकर गाड़ी के छूटते ही अरुणांशु भी फुर्ती से गाड़ी के पं बम्पर पर बैठ गया और अँधेरे में छाया की तरह बम्पर को मजबूती से . . रहा।

ाड़ी पूरी रफ़्तार से सामने की ओर भाग रही थी ।

वेलेघाटा का वही खस्तादम दुमंजिला मकान ।

गणेन वोस का वह कमरा ।

एक कुर्सी पर मजवूत रस्सी से कसकर हाथ-पैर वँधे हालत में सुवीर वैठा है ।

सामने तुपे खड़ा है ।

सुवीर आज अपने ही फन्दे में फँस गया है ।

शैतान गणेन वोस की सलाह से सुवीर ने मीली को खत लिखा था कि वारह वजे आकर वाग में मिले, लेकिन उससे पूर्व ही वह इनके हाथों में कैद हो गया है ।

सामने तुपे खड़ा था । उसके मुँह में एक पतली सी पाइप ।

तुपे सुवीर से कह रहा था, सुनो सुवीर वावू, तुमने क्या तय किया ? मेरे प्रस्ताव पर तैयार हो या नहीं ?

सुवीर ने आगभरी नजरों से तुपे की ओर देखा ।

तुपे ने फिर कहा, यह आँखें लाल करने से कोई फायदा नहीं सुवीर वा अव तो तुम पूरी तौर पर मेरी मुट्ठियों में हो — कहते हुए स्टैम्प लगा क्या-कुछ टाइप किया हुआ एक कागज सुवीर की आँखों के सामने फै हुए वोला—क्यों झूठमूठ अपनी दुर्गत वनवाते हो । इस दानपत्र पर दस कर दो, अभी तुम्हें मैं छोड़ दूँगा, सिर्फ एक दस्तखत । वस, रिहाई जायेगी ।

सुवीर गरज उठा, अगर तूने सोच रखा हो कि ऐसे तिकड़म से होटल का दानपत्र लिखवा लेगा तो तू गलती पर है —

तुपे ने फिर कहा, क्यों झूठमूठ झमेला वढ़ा रहे हो सुवीर वा मानुस की तरह जो वता रहा हूँ मान जाओ । तुम्हें तो वता ही तुम्हारे दिली दोस्त गणेन तुम्हारी ही चिट्ठी की मदद से तुम्हारी

उड़ा लाने गये हैं और कुछ ही देर में शायद तुम्हारी मीनी को लेकर यहाँ आ पहुँचे। होटल तो हाथ से निकल ही जायेगा और अपनी प्यारी मीली को भी साथ ही साथ गँवा दोगे — इससे बेहतर है कि होटल तुम मेरे नाम लिख दो, तुम्हारी मीली तुम्हें वापस मिल जाय।

शैतान। कमीने। रुद्ध आक्रोश से फिर बन्दी सुवीर गुर्रा उठा।

जो मर्जी कहो। अब भी वक्त रहते अच्छी तरह सोच लो कि मीली और होटल दोनों ही गँवाना चाहते हो या होटल देकर मीली को चाहते हो। होटल मेरे नाम लिख दो, बदले में गणेन के हाथों से मीली को लेकर तुम्हारे हाथ सौंप दूँगा। गणेन तुम्हारी मीली, तुम्हारी जान और होटल सब कुछ चाहता है। लेकिन तुम्हारी जान या तुम्हारी मीली पर मुझे कोई लालच नहीं। मैं सिर्फ तुम्हारा होटल चाहता हूँ। फेयर डीलिंग। — बताओ। — राजी हो।

नहीं, तेरी जो मर्जी सो कर, मेरी जान में जान रहते मैं इस कागज पर दस्तखत नहीं करूँगा।

मीली के लिए भी नहीं। —

नहीं।

तो यही तुम्हारी आखिरी बात है ?

सुवीर ने कोई जवाब नहीं दिया।

अच्छी बात। तो मर —

लुपे ने अब आगे बढ़ कर दीवार पर एक स्विच दबा दी और दीवार का एक हिस्सा बिना शब्द किये अलग हट गया और एक संध दिखाई पड़ी। उस संध में एक सुरंग सी दिखाई पड़ी। लुपे उस सुरंग के रास्ते गायब हो गया। कमरे में सुवीर अकेला बन्द रह गया।

ओफ। धूर्त गणेन के प्रस्ताव पर राजी होकर उसने कितनी बड़ी गलती कर डाली है।

इस शैतान के इरादों को वह क्यों न समझ सका।

उधर इस मकान के गेट से उस गाड़ी के अन्दर दाखिल होते ही अरुणांशु
में गाड़ी के पीछे से खामोश अनदेखे नीचे उतर गया।
गाड़ी और जरा आगे बढ़कर बरामदे के सामने ठहर गयी।
गाड़ी से चालक व तीन और आदमियों ने मिलकर मीली के अचेत
रीर को उतारा और अन्दर ले गये। साथ ही साथ पीछे का दरवाजा
भीतर से बन्द हो गया।

अरुणांशु ने दूर से सब कुछ देखा।

थोड़ी देर बाद आगे बढ़कर दरवाजे पर धक्का देकर उसने समझा कि
दरवाजा भीतर से बन्द है। खोलने का कोई जरिया नहीं। लेकिन मकान में
अब किस रास्ते दाखिल हुआ जाय।

अरुणांशु मकान के चारों ओर बेचैन-सा घूमता हुआ देखने लगा, किस
रास्ते किस ढंग से उस मकान में दाखिल हुआ जा सकता है। मकान में प्रवेश
करने का कोई रास्ता मिलता है या नहीं।

मीली—मीली को लेकर ये लोग इस मकान में दाखिल हुए हैं। अचेत
मीली। जैसे भी हो अरुणांशु को इस मकान में दाखिल होना ही है। अरुणां
तड़फड़ाने लगा।

अचेतन मीली की शिथिल देह ढोकर दुमंजिले के कमरे में इन लो
प्रवेश किया। चार व्यक्तियों में — एक था गणेन बोस और एक था ई
बाकी दो गणेन के फर्माबरदार थे। उसी के बुरे कामों में बेत
सहयोगी।

कमरे में एक चारपाई पड़ी थी।

गणेन के इशारे से ईरानी और बाकी दो आदमियों ने मीली
शरीर को चारपाई पर लिटा दिया।

ऐसे ही समय तुपे कमरे में दाखिल हुआ, अरे यह तो माल बरामद कर लाये।

गणेन ने गर्व से हँसते हुए, कहा गणेन बोन का प्लैन कभी बेकार नहीं जाता तुपे। देखा न। कहा था न उस दिन तुमको कि एक छोटी सी चिट्ठी भर मिल जाय — लेकिन उधर का क्या हाल-चाल है। सुबीर —

वह सब ठीक ही है — तुम बेफिक्र रहो गणेन बाबू। तुपे ने तसल्ली दी।

बिल्कुल उसी वक्त दिखाई पड़ा कि उस कमरे के बाहर एक लटकायी खिड़की के बाहर कान सटाये बर्मी नर्तकी माफिन खड़ी है।

तुपे का उसने छाया की तरह खामोशी से पीछा किया है और उसके अनजाने ही उस ट्रेन में होटल से आयी है।

कुछ दिनों से ही माफिन ने तुपे और गणेन में खुसुर-फुसुर होते देख कर कुछ भाँप लिया था और हर वक्त सतर्क सी उनके चलने-फिरने पर निगरानी रखे हुई थी।

गोकि तुपे और गणेन को इसका सुनगुन नहीं लग पाया था।

कमरे के भीतर।

गणेन बोला, तो अब देर करने से कोई फायदा नहीं तुपे।

प्लैन के मुताबिक सुबीर को यहीं खतम कर एक बोरे में उसकी लाश भर लो। गनी बैग में भर लाश को गाड़ी पर उठाकर तुम लोग सीधे बागबाजार के गंगा के कुठीघाट पर चले जाओ। बरगद नीचे लच खड़ी होगी। लच लेकर तुम लोग सीधे उलूबेड़े चले जाओगे और बीच गंगा में बोरा फेंक आओगे।

हूँह। और तुम। —तुपे ने प्रश्न किया।

मैं फिलहाल इधर सँभालता हूँ। तुम उधर का काम कर लौट आओ, उसके बाद सारा इन्तजाम होगा।

इन्तजाम अगर पहले ही खतम हो जाता तो क्या बेहतर न होता गणेन बाबू।

तुपे की आवाज से मानों चौंककर ही गणेन ने तुपे की ओर पलटकर
ा।

वर्मी तुपे की छोटी-छोटी आँखों में न जाने इस क्षण किस बात का संकेत
ाक उठा है।

तुम। तुम क्या आखिरकार मुझ पर एतबार नहीं कर रहे हो तुपे ? —
न ने कहा।

एक जालिम मुस्कुराहट से वर्मी तुपे का चेहरा मानों क्षणभर में भयंकर
उठा। तुपे ने कहा, यह कोई एतवार और गैर-एतवारी की बात नहीं
ेन बाबू। हम लोग बर्मी हैं। इसके अलावा मैं —

बातें करते-करते, बात खत्म किये बिना ही तुपे पलभर में ही जेब से
तौल पकड़े दाहिना हाथ निकालकर उसे मुट्ठी में दबाता हुआ बोला,
ा खेलने बैठकर तुपे उधार का कारोबार नहीं करता गणेन बाबू, जो कुछ
ा नकद-ठनाठन। हाथों हाथ।

कोने में दुबके शेर की तरह गणेन गुस्से से गरज उठा, तुपे— वर्मी कुत्ता—
ही : ही : कर तुपे हँस पड़ा। भेड़िए की खूंखार हँसी।

और तुपे के कुछ समझने से पहले ही गणेन की आँखों के इशारे से ईरानी
: गणेन के दो अनुचर लमहे भर में शेर की तरह पीछे से तुपे पर टूट पड़े।

शैतान तुपे भी शायद मामला भाँप गया था। उन तीनों के झपटते ही
ने हाथ के पिस्तौल का घोड़ा दबा दिया था।

मौत की डरावनी चीख मार कर गणेन के अनुचरों में एक लहूलुहान
ी चूमने लगा, लेकिन बाकी दोनों ने तुपे को धर दबाया था।

वर्मी तुपे भी इतनी आसानी से काबू में आनेवाला आसामी नहीं था,
ने भी पलटकर हमला किया— हमलावरों से गुत्थमगुत्था होने लगा।
न वह अकेला था। और मुकाबला करने वाले दो थे।

वर्मी तुपे के शरीर में देव जैसी ताकत थी और शुरू में ईरानी और
: अनुचर से तुपे झट काबू में नहीं आ रहा था। तब गणेन भी तुपे पर
ड़ा।

उस समय भी सुवीर लाचार सा बंधी हालत में अकेले उस कमरे में कुर्सी पर बैठा था।

तुपे जो कुछ कह गया वह अगर सच हो तो इतनी देर में मीली की शैतान गणेन के हाथों क्या दशा हुई होगी कौन जाने। ओह। एकबार अगर किसी तरह से उसे छुटकारा मिल जाता तो वह उन सभी को खबर ले लेता।

लेकिन कोई चारा नहीं। सख्त रस्सी से बंधा हुआ है वह।

बेबस आक्रोश में सुवीर पिंजरे में बन्द शेर की तरह मन ही मन गुर्राता रहा।

और वर्मी मालकिन।

अब तक वह बाहर बरामदे में कान पसारे खड़ी थी।

उन सभी को आपस में लड़ते देखकर गुप्त रास्ते से वह एक दूसरे कमरे के लिए क्षणभर भी देर किये बिना उस तरफ दौड़ी जहाँ टेलीफोन था।

धीरे-धीरे तुपे निढाल हो गया।

अकेले तीन जने के साथ कब तक लड़ता रहेगा। अन्त में लाचार हो वह उनके हाथों में कैद हो गया।

ईरानी और उसके साथी ने तुपे को एक रस्सी से कसकर बांध डाला।

गणेन ने बन्दी तुपे के बदन पर एक लात जमाते हुए कहा, वर्मी कुत्ते! देख, तुझे अब कौन सी सजा देते हैं। तूने सोचा था कि बंगाल में आकर तू अपनी करिश्मा दिखायेगा। तुमको और सुवीर को एक साथ बोरे में भर कर जिन्दा गंगा के पानी में डुबो दूंगा। —

नहीं। नही — गणेन बाबू। दुहाई तुम्हारी —

हा : हा : कर गणेन पैशाचिक निर्दय ठहाका लगाने लगा, हाँ, पानी के नीचे दम घुटकर मर जायेगा।

फिर ईरानी और उसके साथी की ओर ताककर गणेन ने कहा, ईरानी, वंका। तुम लोग इस कमरे में पहरे पर रहो, मैं झट उधर देख आता हूँ।

मीली की ओर ताक कर गणेन ने देखा कि मीली उस वक्त भी क्लोरोफर्म के असर से सो रही है।

गणेन कमरे का दरवाजा खोलकर निकल गया।

कमरे में उत्तेजित स्वर में माफिन फोन पर लालवाजार से बातें कर रही थी।

हेलो। लालवाजार पुलिस स्टेशन। — हेलो —

दूसरी ओर से फोन पर लालवाजार से जवाव आया, यस। लालवाजार पुलिस स्टेशन स्पीकिंग...

माफिन बोली, पुलिस स्टेशन। सूपर सुव्रत राय हैं। उनको बताइए मैं वेलेघाटा रोड से बुला रही हूँ — खास जरूरी काम है।

इस बार सुव्रत का स्वर सुनाई पड़ा, मैं सुव्रत राय ही बोल रहा हूँ — कौन हैं आप? क्या चाहिए?

सुव्रत वावू, सुवीर घोष के वेलेघाटा वाले ओपियम डेन से मैं माफिन, मिडनाइट होटल की माफिन वोल रही हूँ। जी हाँ, —डा० सुहृद सरकार की वेटी को ये लोग पकड़कर लाये हैं। सुवीर घोष को ये लोग कैद कर रखे हैं और शायद अभी उसकी हत्या भी करने वाले हैं।

अँय।

जी हाँ। जल्दी चले आइए— गुदाम भी यहीं पर है, वरामद हो जायगा, सारा चोरी का माल यहीं मिल जायेगा—क्लिक।

गणेन ने आकर कमरे में प्रवेश किया, आखिरी सारी बातें ही उसे सुनाई पड़ी हैं।

हा: हा: कर गणेन हँस पड़ा।

गणेन के ठहाके से चौंक कर माफिन ने पलटकर देखा, गणेन पीछे

खड़ा है और उसके हाथ में एक छोटी सी पिस्तौल है। गणेन की आँखों में हिंसक मौत की खूँखारी।

बर्मी सुन्दरी माकिन — गणेन बोल पड़ा, तुपे और तेरे प्यारे गुरीर के साथ ही फिर तू भी जाना चाहती है।

जाना ही अगर पड़े तो जाऊँगी। लेकिन तुमको भी साथ लेती जाऊँगी। जरा देर हो गयी गणेन बाबू। पुलिस बस आ ही पहुँची — माकिन ने मुस्कुराकर कहा।

गलत बात सुन्दरी ! गलत बात। आज तक गणेन बोस की जिन्दगी में किसी काम में देर नहीं हुई। फिर भी अगर आज उसे कुछ देर हो ही गयी हो तो हम उस गलती का मुआवजा अकेले नहीं भरेंगे। कहते-कहते अपने हाथ में कसकर पकड़ी हुई पिस्तौल से गोली चलाने के पूर्व क्षण पर स्थिर-प्रतिज्ञ हुआ।

लेकिन गणेन के कुछ समझने से पहले ही माकिन ने पलभर में अपनी कमर से छोटा सा हाथीदाँत के हत्थेवाला पैना छूरा निकाल लिया और निष्ठुर हँसी हँसती हुई बोली, सो क्या मैं नहीं जानती गणेन बाबू। हम लोगों की इतने दिनों की जान-पहचान है। लेकिन मैं भी कोई बंगाली युवती नहीं — बर्मी हूँ। बर्मी औरत ही देखा है तुमने गणेन बाबू, शेरनी नहीं —

पलक झपते ही हाथ उठाकर माकिन ने अपने हाथ का छूरा दूर खड़े गणेन की ओर जोर से फेंका।

गणेन के थोड़ा सा एक ओर कतराने के बावजूद वह छूरा गणेन के बायें हाथ के ऊपरी हिस्से में लगभग आधा धँस गया और उसी के साथ-साथ अपने अनजाने ही उसके हाथ से पिस्तौल गिर पड़ी।

दर्द से तड़पता गणेन और भी ज्यादा खूँखार हो उठा।

लमहे भर में अपने हाथ से छूरा खींचकर निकाल लिया और माकिन पर टूट पड़ा।

शैतान ! डायन !

दोनों एक दूसरे से गुथे जमीन पर लुढ़क गये।

लेकिन प्रचंड बलशाली गर्गोन से माफिन कैसे लड़ सकती थी ?

आसानी से ही माफिन को चितकर उसके सीने पर गर्गोन चढ़ बैठा — शैतान की औलाद।

कहकर हाथ बढ़ाकर जमीन से छुरा उठाकर माफिन के सीने में पूरा का पूरा गर्गोन ने भोंक दिया।

ताजे लाल खून से माफिन के बदन का कपड़ा भीग गया।

खुद भी घायल गर्गोन उठकर खड़ा हो गया, फिर जमीन पर लोहूलुहान पड़ी माफिन की ओर एक बार देखकर अपना घायल बायाँ हाथ दाहिने हाथ से दबाकर लड़खड़ाते हुए वह कमरे से बाहर निकल गया।

कुछ देर खून सनी हालत में फर्श पर पड़े रहने के बाद माफिन हाँफती हुई उठकर बैठ गयी।

उसका सारा अंग काँप रहा था, डोल रहा था।

सीने से माफिन ने छुरा निकाल लिया।

फिर घुटनों के बल किसी तरह घिसटती हुई वह कमरे से निकल गयी — जमीन से छुरे को उठाकर।

माफिन का फोन पाकर सुव्रत व्यस्त हो उठा।

टेबुल पर घंटी बजाते ही एक लाल पगड़ीधारी ने प्रवेश कर सलाम किया।

सर्जेंट डेविस — जल्द —

थोड़ी ही देर में सर्जेंट डेविस ने कमरे में प्रवेश कर सैल्यूट किया, यस सर।

सुव्रत ने कहा, सर्जेंट क्विक। दस बारह आर्मेड पुलिस लेकर दो जीप

पर अभी निकलूँगा — बेलेघाटा के एक डेन पर छापा मारना है।

सर्जेंट चला गया, आइ एम गेटिंग रेडी सर।

बीसेक मिनट में दो जीप लालबाजार से निकलकर तेज हेडलाइट जलाये तीर की रफ्तार से बेलेघाटा की ओर भागी।

आमने-सामने

सुवीर उस समय भी कुर्सी पर बंधी हालत में बैठा था।

लहूलुहान मालिन घुटनों के बल चलती कमरे में आयी, बोली, सुवीर।

यह क्या मालिन। सुवीर बोल पड़ा।

फिर मालिन पर नजर पड़ते ही सुवीर सिहर उठा। मालिन का सारा शरीर खून से लाल हो गया है। उसने दबी चीख से पूछा, मालिन। इतना खून? यह खून कैसा?

फर्श पर घिसटती हुई जल्दी सुवीर के सामने पहुँचकर मालिन किसी तरह से हाथ के छुरे से सुवीर के शरीर का बन्धन काटती हुई दबी आवाज में बोली, गणेश बाबू ने मुझे छुरा मारा है, तुम्हारी मौसी को ये बदमाश पकड़ लाये हैं। जल्दी भागो, इतनी देर में ये तुम्हारी मौसी को लेकर शायद भाग रहे हैं — कहते-कहते सुवीर का बन्धन काट सामने ही मालिन लुढ़क कर गिरने लगी। फौरन सुवीर ने हाथ बढ़ाकर मालिन को गिरने से बचा लिया, कहा, मालिन।

आह, सुवीर जल्दी जाओ। — देर मत करो, अब वक्त न रहा — किसी तरह हाँफती हुई बड़ी मुश्किल से मालिन ने कहा।

लेकिन सुवीर समझ गया था कि मालिन का अन्तिम समय आ गया।

शायद इसीलिए उसे इस हालत में छोड़ जाने को जी नहीं कर रहा था। इसलिए वह बोला, लेकिन तुम। तुमको इस हालत में —

मैं। मेरे लिए सोच मत करो। मेरा तो बस खात्मा ही है। आह —

नहीं। नहीं — माफिन। तुम्हें इस हालत में छोड़कर मैं —

आह सुवीर, जाओ भी। देर मत करो। वर्ना उधर सब चौपट हो जायेगा। जाओ — जाओ।

माफिन —

जाओ सुवीर। जाओ —

चुनांचे सुवीर माफिन को वहीं छोड़कर जाने के लिए तैयार हो गया।

फिर भी संकोच और झिझक सुवीर की गयी नहीं। जिसने अपनी जान तक देकर उसे मुक्त कर दिया उसके आखिरी क्षणों में वह किस मुँह से उसे छोड़ जाय। इसलिए झिझकते कदमों से चलकर भी वह ठिठक कर खड़ा हो जाने लगा।

इस विदेशी नर्त्तकी के साथ उसकी जान-पहचान ही कितनी है। सिर्फ यही नहीं। आज इस क्षण जो सत्य उसके मन में दिन की रोशनी की तरह स्पष्ट उभर आया है वह तो उसकी कल्पना से परे था। हालांकि किसी दिन भी तो इस नारी ने मुँह खोलकर कोई बात उसे नहीं बतायी।

एक जिस्म की सौदागरिन नर्त्तकी के दिल में भी इस प्रकार का प्रेम जाग्रत हो सकता है यह क्या वह कभी सोच सकता था।

इसलिए दरवाजे तक पहुँचने से पहले ही माफिन की मद्धिम आवाज उसके कानों में आते ही उसने चौंककर पीछे देखा।

सुवीर।

झटपट आगे बढ़कर सुवीर माफिन के सामने खड़ा हो गया। मौत के दर्द से विकृत चेहरे की ओर देखता हुआ उसने कहा, क्या है माफिन —

जाने से पूर्व सिर्फ एक बात —

क्या। क्या है माफिन, बताओ-बताओ — बड़े ही कष्ट से सुवीर के

मुख की ओर देखकर सहज-सरल धीमी आवाज़ में मालिन ने कहा — [illegible]
जान लो —

मालिन।

कि बदचलन मलांकी भी नारी है —

मालिन। सुधीर ने तड़प भरी आवाज़ में कहा।

जाने क्यों उसकी आंखों के कोर आंसू से भर गए।

क्षीण स्वर उस समय भी अस्पष्ट और असम्बद्ध।

मालिन —

हाँ, इतना जान लो कि वे सिर्फ रोना ही नहीं जानती, मरना भी जानती हैं — कहते-कहते मालिन की गर्दन एक ओर झुक गयी।

उसी क्षण बाहर कई जूतों की आवाज़ सुनाई पड़ी। सार्जेंट जॉनसन और तीन कांस्टेबल पुलिस कमरे में जूता खटखटाते हुए दाखिल हुए।

सुधीर को भागने का मौका नहीं मिला।

सार्जेंट ने आदेश दिया, महावीर सिंह। इसे हथकड़ी पहनाओ।

सुधीर बंद हो गया।

घायल गर्णेन फिर उस पुराने कमरे में लौट आया।

मीली उस समय भी अचेतन पड़ी है। गर्णेन के अनुचर ईरानी और बंका पहरे पर थे। कमरे में घुसकर गर्णेन ने उनसे कहा, तुम लोग नीचे गाड़ी में जाकर इन्तजार करो, मैं आ रहा हूँ।

ईरानी और बंका चले गये।

मीली की अचेतन देह को कंधे पर उठाकर गर्णेन ने दीवार पर एक बटन दबाया और फौरन ही एक छिपा हुआ जीना सामने दिखाई पड़ा। गर्णेन झटपट उसी सीढ़ी से मीली को लेकर बढ़ गया। गर्णेन के प्रस्थान के साथ ही साथ गुप्त पथ आवरित हो दीवार में अदृश्य हो गया।

ठीक अगले ही क्षण अरुणांशु मीली को हर कहीं ढूंढ़ते हुए उस कमरे में आ पहुँचा। सूने कमरे के एक कोने में एक स्टूल पर एक मुमबत्ती टिमटिमा रही है। मुमबत्ती की रोशनी में अरुणांशु ने खोजी निगाहों से कमरे की चारों ओर देखा। कमरा सूना है, कमरे में कोई भी नही है।

लेकिन उसी समय अचानक अनमना सा इधर-उधर देखते-देखते उसकी नजरें पैनी हो गयीं। कोने में एक चारपाई है — वह भी खाली है। एक कमरे की फर्श की धूल में बहुत सारे पैरों की छाप—इधर-उधर फैले हुए।

कमरे की फर्श पर उन अनपहचाने इधर-उधर फैले पैरों की छाप मानों खोजी दिमाग पर रोशनी फेंकने लगी। किसके, किसके पैरों की छाप हैं ये ? अरुणांशु ने और भी गौर किया कि वे छाप कभी एक आदमी के नहीं। तरह तरह के पैरों की छाप। और सिर्फ नंगे पैरों की नहीं, जूते पहने पैरों की छाप भी है उनमें।

अरुणांशु को यह भाँपने में देर नहीं लगी कि वेशक कुछ देर पहले ही इस कमरे में एक से ज्यादा लोग थे। लेकिन भीतर से जब कमरे का अकेला दरवाजा अन्दर से बन्द है तो वे किस रास्ते से गायब हो गये ? उसी समय चारपाई के नीचे एक ओर और एक चीज ने उसकी दृष्टि आकर्पित की।

घास की एक चप्पल। चप्पल पहचानने में अरुणांशु को देर नहीं लगी आगे बढ़ कर अरुणांशु ने चप्पल उठा ली।

तो बेशक वे लोग मीली को इस कमरे में ले आये थे।

लेकिन बरामदे से बेशक कोई गया नहीं, वर्ना उसकी नजरों में पड़ता। तो फिर वे किस रास्ते मीली को लेकर भागे ?

बेशक कोई रास्ता होगा जिससे होकर वे मीली को लेकर खिसक गये हैं। ऐसे ही समय अरुण का उस बन्द गुप्त द्वार के रास्ते में एक साड़ी के आँचल का टुकड़ा लटकता दीख पड़ा। अरुणांशु चौंक पड़ा। आगे बढ़ा। यह तो मीली की हरे रंग की रेशमी साड़ी के आँचल का टुकड़ा है। लेकिन—

शुरू में अरुणांशु की समझ में कुछ भी नहीं आया। फिर उस कपड़े के टुकड़े को जोर से खींचते ही वह निकल आया। अब देखा दीवार में उस जगह बाल भर जगह की दरार है। समझ गया कि बेशक दीवार के उस हिस्से में कोई गुप्त-द्वार का रास्ता है। अरुणांशु ने दीवार पर धक्का मारा पर ठोस दीवार टस से मस न हुई। तब उसे लगा इस दरवाजे को खोलने का कहीं इसी कमरे में कोई संकेत है। *लेकिन वह कहाँ है ? पागल की तरह* अरुणांशु इधर-उधर वह संकेत ढूंढने लगा और देखते-देखते रोशनी की स्विच के पास ही एक बटन दिखाई पड़ी।

बटन के दबाते ही दीवार में गुप्त-द्वार पथ फिर से प्रकट हुआ।

क्षणभर भी देर किये बिना अरुणांशु ने उसी गुप्त-द्वार पथ से अनिश्चयता में प्रवेश किया।

अन्तिम पृष्ठ

अंधेरा। कुछ भी नजर नहीं आता। आँखों को रोशनी

ी गयी।

एक-एक सीढ़ी सामने की ओर उतरती चली गयी है।

इतनी देर में अरुणांशु को याद आयी कि अँधेरी रात में चलने-फिरने की सुविधा के लिए उसकी जेव में हमेशा एक टार्च रहता है। टार्च की वात याद पड़ते ही जेव में हाथ डालकर उसने टार्च निकाला और जलाया। टार्च की रोशनी में उसने देखा कि सीढ़ी खत्म हो गयी है और सामने एक गन्दी सी सँकरी कूड़े से भरी गली है।

टार्च की रोशनी की सहायता से अरुणांशु भरसक तेज कदमों से उसी गली से सामने की ओर अनजान की ओर वढ़ने लगा।

गली टेढ़ी-मेढ़ी चली गयी है। हवा रुकी हुई। कूड़े-करकट की वदवू से अजीव वेचैनी सी हो रही थी लेकिन किसी ओर खयाल किये विना अरुणांशु आगे वढ़ चला। मीली। जैसे भी संभव हो मीली का उद्धार करना है।

कुछ दूर आगे वढ़ने के वाद अचानक एक भारी पगचाप मानों अरुणांशु को सुनाई पड़ी।

संशय से अरुणांशु ठहर गया। आवाज ! हाँ। साफ-साफ किसी क पैंछट। उसके सामने-सामने मानों कोई चल रहा है।

आशा और आनन्द से अरुणांशु को रोमांच हो आया। उसने चलने रफ्तार तेज कर दी।

गली का रास्ता एक कम चौड़ा सपाट जमीन पर पहुँचते ही अरुण को दिखाई पड़ा — सिर्फ कुछ हाथ की दूरी पर एक आदमी, उसके पर मीली का अचेतन शरीर। वह आदमी सामने की ओर चल था।

गणेन को भी पीछे आते हुए अरुणांशु के पैरों की आहट मिल गयी साथ ही साथ वह भी पलट कर खड़ा हो गया। लेकिन सामने वह है। भूत-प्रेत है या दानव। इस गलियारे का निवासी कोई जिन्न या प्रे तो नहीं है।

भय और आतंक से गणेन एकबारगी गूंगा हो गया।

ठहरो।

मरणाशु के गले की आवाज से गणेन समझ सका कि यह भूत या प्रेत नहीं, आदमी ही लेकिन कितनी भयंकर शक्ल-सूरत का।

मरणाशु पग-पग आगे बढ़ आया।

गणेन ने कन्धे से मीसी का अचेतन शरीर जमीन पर उतारकर रख दिया। सीधा आमने-सामने खड़ा हो गया गणेन। आग बरसाती आँखों से गणेन मरणाशु की ओर देखता रहा।

मरणाशु भी खड़ा हो गया।

दो लड़ाकू खूंखार शेर मानो एक-दूसरे का सामना कर रहे हों। अभी एक दूसरे पर टूट पड़ेंगे।

गणेन ने चुपचाप अपनी कमर में खोंसे हुए छूरे को निकालने की कोशिश करते ही मरणाशु उस सकरे अंधेरे गलियारे में ही शेर की तरह गणेन पर टूट पड़ा।

घटना की आकस्मिकता से गणेन मानों जरा अचकचा गया था लेकिन अगले ही क्षण उसने भी उल्टे हमला किया। एक दूसरे से गुंथ गये थे। दैहिक बल में कोई किसी से उन्नीस नहीं।

लेकिन घायल गणेन क्रमशः मरणाशु की देव जैसी ताकत के दबाव से थक कर निढाल होने लगा। मरणाशु गणेन को जमीन पर गिराकर उसके सीने पर चढ़ बैठने की कोशिश करने लगा पर कामयाब न हो सका।

लुढ़कते हुए दोनों के कपड़े ही धूल से गन्दे और फटकर चिथड़े-चिथड़े हो गये। दोनों ही एक दूसरे के घूंसे-मुक्के से लहूलुहान। दोनों के बदन में कई स्थानों से खून चू रहा था। लेकिन गणेन के छूरे की मार से मरणाशु ज्यादा घायल हुआ।

दोनों के ही बदन खून और धूल से सने। दोनों ही एक दूसरे को संगीन चोट मारने को तत्पर। दोनों ही जान पर खेलने वाले।

धीरे-धीरे किसी समय मरणाशु गणेन को जमीन पर चित गिराकर...

दोनों हाथों से सारा बल लगाकर उसका गला घोंटने लगा। निर्दय पेषण से गणेन की आँखों की पुतलियाँ कोटर से बाहर निकल आयीं।

निर्दय और सख्त दबाव।

धीरे-धीरे साँस रुककर गणेन का शरीर निश्चल हो गया।

गणेन की निश्चित मृत्यु हुई है जानकर अरुणांशु हाँफते-हाँफते गणेन का सन्न पड़ा निश्चल शरीर छोड़कर उठ खड़ा हुआ।

मीली अब भी अचेतन है। थके और लस्त-पस्त अरुणांशु ने झुक कर मीली का अचेतन शरीर परम स्नेह से अपनी बाँहों में ले लिया।

आह। सारे अंग में मानों चन्दन का स्निग्ध स्पर्श आ लगा।

मीली का शरीर मानों फूलों का एक गुच्छा हो।

फूल जैसे मीली के कोमल शरीर को अपने सीने से चिपकाये लड़खड़ाते पैरों से अरुणांशु पहले वाले गली के रास्ते लौट चला। पीछे अन्धेरे सूनसान गलियारे में गणेन की लाश पड़ी रही।

चलते-चलते मीली का शरीर हिल उठा, अरुणांशु समझ गया मीली होश में आ रही है।

इधर सुव्रत उस कमरे में दो लाल-पगड़ी वालों के साथ दाखिल हुआ, साथ में गिरफ्तार ईरानी।

वही कमरा। जिस कमरे से गुप्त सुरंग के रास्ते मीली को लेकर गणेन गायब हो गया था और पीछे-पीछे अरुणांशु ने भी उनका पीछा किया था।

यही कमरा है न? ईरानी से सुव्रत ने पूछा।

जी, यही कमरा।

कहाँ है वह सुरंग का रास्ता?

ईरानी ने आगे बढ़ कर बटन दबाया। और साथ ही साथ दीवार में सुरंग का रास्ता प्रकट हो गया। और साथ ही साथ भीतर से एक शब्द सुनाई पड़ा और नारी कंठ की चीख — छोड़ दो, छोड़ दो।

आगे बढ़ते ही सुव्रत ने देखा कि सामने से अरुणांशु लड़खड़ाते हुए आ रहा है, कन्धे पर मीली और वह ताबड़तोड़ अरुणांशु को मुक्का-घूंसा मार रही है, चिल्ला रही है और कह रही है छोड़ दो, छोड़ दो।

सुव्रत एक तरफ हो गया।

और अरुणांशु के मीली को लेकर कमरे में दाखिल होते ही हाथ में पकड़े पिस्तौल को तानकर कहा, ठहरो, अपने सिर पर हाथ उठाओ।

अरुणांशु ने मीली को कमरे में उतार दिया।

और मीली अरुणांशु के मुख की ओर देखते ही चिल्ला उठी, भूत। यह कौन। भूत। भूत।

अरुणांशु से अब खड़ा नहीं रहा गया।

दोनों हाथों से मुँह ढाँपकर वह बैठ गया और चिल्लाकर बोला, ले चलिए।

और कहने के साथ ही साथ इतनी देर में वह बेहोश हो गया।

माँ

अस्पताल।

घायल अरुणांशु को गिरफ्तार कर सुव्रत सीधे उसे पहले अस्पताल में ले आया।

अरुणांशु को भी कोई कम चोट नहीं लगी थी।

काफी खून के वह जाने से वह उस वक्त मौत के दरवाजे पर था।

मीली को सुव्रत ने घर भेज दिया था।

डाक्टर अरुणांशु को एक इजेक्शन लगा रहा था, अरुणांशु ने कहा, कृपया एक काम करेंगे आप डाक्टर साहव।

वताओ —

डा० सुहृद सरकार को एक सन्देशा भेज दीजिए कि अरुणांशु उनको एक वार देखना चाहता है।

सुव्रत वगल में खड़ा था, उसी ने कहा, अभी भिजवाता हूँ।

सुव्रत ने फोन से डा० सरकार को सूचित किया।

रात के करीव साढ़े तीन वजे डा० सुहृद सरकार अस्पताल आ पहुँचे। अरुणांशु वेंडेज वँधी हालत में अस्पताल की चारपाई पर लेटा हुआ था।

यह क्या। यह सव क्या है अरुणांशु। मैं कुछ भी नहीं समझ पा रहा हूँ —

मीली देवी लौट गयी हैं न ? अरुणांशु ने पहले ही पूछा।

मीली। क्यों वह तो घर ही पर है — डाक्टर सरकार आश्चर्य करने लगे।

सुव्रत ने ही अव जवाव दिया, कोई डर नहीं, उसे मैंने घर भेज दिया डा० सरकार।

मीली को घर भेज दिया है। क्या कह रहे हैं मि० राय।

जी, चलिए वगल के कमरे में आपको सव कुछ वता रहा हूँ —

सुव्रत डा० सरकार को लेकर वगल के कमरे में गया।

सक्षेप में सुव्रत के मुँह सव कुछ सुनकर डा० सरकार की समझ में आया कि आज कितनी वड़ी विपत्ति से उनकी वेटी वचकर निकल आयी है और यह भी समझ सका कि इसी अरुणांशु ने ही उसका उद्धार किया है।

अरुणांशु इसी वीच संक्षेप में सुव्रत को अपना वयान दे चुका था

डा० सरकार फिर भाग कर भरुणांशु के कमरे में गया।

तुम। तुम्हीं ने मेरी बेटी मौली को भाज बचाया है। क्या कहकर मैं तुम्हें धन्यवाद दूँ भरुण !

ऐसा मत कहिए डाक्टर जी ! भापका ऋण मैं इस जीवन में चुका नहीं सकूँगा — फिर जरा रुककर बोला, डाक्टर जी —

बोलो भरुणांशु।

मेरी दो विनती है —

बताभो।

एक भनुरोध यह है कि मौली देवी को कभी मेरा सच्चा परिचय न दीजिएगा।

क्यों भरुणांशु ?

नहीं। बताइए, नहीं देंगे।

भच्छी बात है। ऐसा ही होगा —

भौर — भरुणांशु हिचकिचाने लगा।

बोलो भौर क्या कहना चाहते हो —

मेरी मृत्यु के बाद — भभी नहीं, मेरी मृत्यु के बाद मेरे बाबू को चुपके से एक समाचार दे दीजियेगा — कहकर भरुणांशु हाँफने लगा। डा० मुकुन्द सरकार की भाँखें नम हो भायीं।

मैं राजीव को भभी फोन से इत्तला —

नहीं। नहीं — डाक्टर जी। भभी नहीं, भभी नहीं, मेरी मृत्यु के बाद — मेरी मृत्यु के बाद।

भस्पताल के डा० मुकर्जी ने भागे बढ़कर कहा, उनके साथ ज्यादा बातें मत करें डाक्टर सरकार।

हालांकि भरुणांशु के मर्ज की हालत देखकर डाक्टर सरकार खुद ही समझ गये थे कि मरीज का हाल कतई भच्छा नहीं है फिर भी डा० मुकर्जी को इशारे से बगल के कमरे में ले जाकर उन्होंने पूछा, डा० मुकर्जी, मरीज का हाल भापको कैसा लग रहा है ?

आप भी तो डाक्टर हैं। आप तो खुद ही समझ रहे हैं। मैं क्या बताऊँ...
० सरकार।

आप लोगों का फोन कहाँ है डा० मुकर्जी।

आफिस वाले कमरे में।

डा० सुहृद सरकार दफ्तर वाले कमरे की ओर चल दिये।

रात सवा चार बजे फोन की आवाज से राजीव की नींद टूट गयी। लगातार घंटी बजती जा रही थी।

नाखुश-सा आँखें रगड़ते हुए बिस्तर से उठकर राजीव ने फोन उठा लिया।

हलो...कौन ? यस्। राजीव बोल रहा हूँ।

दूसरी ओर से जवाब आया, कौन राजीव। मैं सुहृद हूँ। हाँ-हाँ... अभी इसी दम क्या तुम एकबार अस्पताल आ सकोगे ?

अस्पताल.. अचानक...यह मामला क्या है ?

वह नहीं चाहता था।...सुहृद सरकार का स्वर सुनाई पड़ा।... लेकि मेरा कर्तव्य समझकर ही मैं फोन कर रहा हूँ। जितने दिन जीवित था तुम स्वीकारा नहीं। आज— आज वह मृत्युशय्या पर है। इस वक्त अ एकबार।

कौन ? कौन...अरुण ?

जी हाँ ..वही अभागा···तुम्हारी पहली औलाद।

बहुत देर तक फोन टनटनाता रहा और उस आवाज से बगल के में कमला की भी नींद उचट चुकी थी। वह बिस्तर छोड़कर पति को पति के कमरे में आ रही थी। ऐसे ही समय दरवाजे के पास अन्तिम बातें उसके कानों में गयीं।

और कौतूहल से ही कमला कमरे में प्रवेश न कर दरवाजे के प खड़े ही पति की बातें सुनती रही। राजीव बोल रहा था, और उ

हाँ। वही अभागा बदसूरत...जन्म-क्षण में ही त्यागा हुआ, उपेक्षित हम लोगों का पहला बेटा है। वही हर रात को तुम्हारे पैरों के नीचे मुट्ठी भर फूल रखकर प्रणाम कर जाता था। स्वप्न नहीं....निर्दय सत्य है। वही अभागा हमारा पहला बेटा अरुणांशु है। जरा सी भी स्वीकृति नहीं मिली जिसे फिर भी उसने कभी जरा सी भी शिकायत नहीं की। वही। वही आज मौत के मुँह में पड़ा है कमला। इसीलिए। इसीलिए सुहृद ने फोन किया था...

अजी। इतने दिन, इतने दिनों से तुमने मुझे यह बात बतायी क्यों नहीं ? यह तुमने क्या कर डाला ?... यह तुमने क्या कर डाला ?

मुझसे नहीं हो सका कमला — मैं बता न सका। मेरा अपना बदसूरत चेहरा जो होश में आने के बाद पग-पग पर मेरा व्यंग करता रहा है। वह जब उससे भी अधिक बदसूरत बनकर जन्मा, मेरी सृष्टि पर मैं ही उन्मादी सा बन गया। अपनी कुरूपता के कारण अच्छी तरह से देखभाल कर जब तुमको घर में लाकर भी सृष्टि की सारी आशाओं के मूल में कुठाराघात हुआ तो क्षणभर में मुझे लगा मैं पराजित हो गया हूँ। मुझे लगा, इसके बाद मेरे उस कुरूप बच्चे को देखकर सभी कहने लगेंगे, देखो, कौवे का बच्चा कौवा ही पदा होता है। मुझसे नहीं हो सका। कमला, मुझे बरदाश्त नहीं हुआ। आक्रोश, लज्जा और धिक्कार से मानों मैं उन्मादी बन गया। इसीलिए— इसीलिए उसे जन्म-क्षण में ही मैंने मार डालना चाहा था।

उफ्। यातना से पीड़ित हो कमला ने मुँह ढाँप लिया।

हाँ। सोच सकती हो कमला। कितनी मर्मान्तिक वेदना से अपनी सन्तान — अपनी पहली सन्तान को, बाप होकर भी मैं अपने हाथों से हत्या करने को उतारू हो गया था। लेकिन डाक्टर। मेरे बचपन के सुहृद ने उस महापाप से मेरी रक्षा की। मुझसे छीनकर वह उसे ले गया। फिर होश में आने के बाद तुमको मालूम हुआ कि पहली सन्तान हम लोगों की मृत ही जन्मी थी।

क्यों। क्यों तुमने ऐसा काम किया था ? मैं —

सोचा था, तुम भी — तुम भी शायद उसे बरदाश्त न कर सको —

मैं बरदाश्त न कर सकती। अपनी सन्तान को कहीं उसकी माँ बरदाश्त

नहीं कर सकती। क्यों, क्यों तुम्हें ऐसा ख्याल हुआ ? क्यों नहीं समझा तुमने कि मैं उसकी माँ हूँ ? वह मेरी ही कोख से पैदा हुआ है। मेरे ही खून की देन है। तुम कैसे जान सकोगे, कितनी वेदना, कितनी माया से दस महीने दस दिन तिल-तिल कर अपने शरीर का खून देकर मैंने उसका गर्भ में पालन किया है। उफ ! यह तुमने क्या किया ?

क्षमा कर दो, क्षमा कर दो कमला, मैं मूर्ख हूँ। भूल। इतनी बड़ी भूल मैंने की है।

वेदना की असीम आत्मग्लानि और बेबस हाहाकार से कमला की दोनों आँखों से झर-झर आँसू झरने लगे और गाल और ठोड़ी को भिगोने लगे।

और राजीव मानो धिक्कार से धरती में समा जाना चाहने लगा।

क्या बतावे। बता भी क्या सकता है। वह जानता ही था कि ऐसा एक क्षण आयेगा। इसी तरह कमला के सामने खड़े होकर उसे अपने अपराध के लिए जवाबदेही करनी पड़ेगी। क्षमाशून्य लज्जा की अपार ग्लानि उसे इसी तरह अपने सिर लेनी होगी।

कमला ने आँसू भरे स्वर में कहा, हाय रे मेरा बचवा। इसीलिए उस दिन पकड़े जाकर पिटे जाने पर भी उसने मेरे मुँह की ओर देखा, फिर भी मैं अभागी डायन उसे पहचान नहीं सकी। नींद में उसने मेरे पैर पकड़े थे और मैंने लात मारकर उसे दूर कर दिया था। उफ, यह मैंने क्या किया, यह मैंने क्या किया। लेकिन अब भी तुम खड़े हो। चलो। चलो—

हाँ, कमला चलो।

दोनों उसी हालत में नीचे उतरकर गाड़ी में बैठ गये।

राजीव ने आँधी की तरह गाड़ी भगायी।

अस्पताल में उस वक्त भी मरणासन्न को ब्लड प्लाज्मा दिया जा रहा था।

लेकिन हालत में कोई सुधार नहीं आया था।

धीरे-धीरे हालत बिगड़ती ही जा रही थी।

डा० सरकार खुद अरुणांशु का नब्ज पकड़े बैठे थे।

डा० मुकर्जी ने फिर कमरे में प्रवेश किया, हाथ में अरुणांशु के बयान वाली फाइल।

डा० सरकार, अरुणांशु बाबू के घर का पता और बाप का नाम फिर क्या लिखूं ?

लिखिए राजीवचन्द्र घोष — पिता —

सभी लोगों ने एक साथ राजीव घोष की आवाज से चौंककर दरवाजे की ओर देखा। दरवाजे से राजीव घोष प्रवेश कर रहे थे और उनके पीछे-पीछे उनकी पत्नी कमला देवी।

डा० मुकर्जी पहले से ही रायबहादुर राजीव घोष को जानते थे। उन्होंने विस्मय से कहा, यह क्या रायबहादुर जी आप ?.

राजीव धीर शान्त कदमों से आगे बढ़ते हुए बोला, जी हाँ, डा० मुकर्जी। मैं ही हूँ। अरुणांशु मेरा ही बेटा है। जी हाँ, वही मेरी पहली सन्तान है।

आपका बेटा —। डा० मुकर्जी का विस्मय मानों दूर ही नहीं हो पा रहा है।

जी हाँ। अरुणांशु मेरा ही बेटा है।

कहते-कहते राजीव सीधे अरुणांशु के बिस्तर के सामने आकर खड़ा हो गया और आंसू भरे स्वर में पुकारा, अरुण।

अरुणांशु ने आँखें खोलकर कहा, कौन ?

अरुणांशु, मैं हूँ। मुझे पहचान नहीं रहे हो बेटा।

बाबू। आप ? आप आये हैं ? बाबू—

हाँ अरुण। छिपकर नहीं — सबके सामने से होकर आज मैं आया हूँ। सभी को बतलाने आया हूँ कि तुम्हीं — तुम्हीं मेरी पहली सन्तान हो।

बाबू।

इतने दिनों बा अभागे की दोनों आँखें आँसुओं से धुंधली पड़ गयीं।

सिर्फ मैं ही नहीं अरुण — देखो तुम्हारी माँ भी आयी है—

माँ। मेरी माँ — अरुणांशु ने कहा।

तब तक कमला लपक कर आयी और दो बाँहों के व्याकुल बन्धन में अरुणांशु का सिर पकड़ लिया, अरुण बेटा—

माँ।

अरे बुद्धू लड़का, तूने यह क्या किया ?

माँ। माँ। तुम सचमुच आयी हो माँ। तुम सचमुच आ गयी हो माँ।

हाँ बेटा। लेकिन तूने मुझे पहले यह बात क्यों न बताई बेटा ?— क्यों तूने मुझे नींद से जगाकर सारी बातें खोलकर नहीं बतायीं। पहले ही दिन तूने मुझसे क्यों नहीं कहा, माँ, मैं तुम्हारा अरुण हूँ। तुम्हारा बेटा।

माँ। मेरी माँ। लेकिन तुम मुझसे नफरत न करतीं माँ — है न ? मेरा भद्दा सा चेहरा —बेटा कहकर क्या मुझे तुम अपनी छाती से लगा लेतीं ?

माँ के पास क्या सन्तान का कोई दूसरा रूप होता है बेटा। वह केवल सन्तान है। तू मेरी कितनी आशाओं और सपनों का लाड़ला है बेटा।

माँ।

क्या बेटा ?

मुझे बड़ी नींद आ रही है माँ। बड़ी नींद, अरुण की आवाज भर्रा गयी।

सोओगे बेटा। सो जा। सो जा। हाय कितनी ही रातें तू मेरे लिए सो नहीं सका। सो जा। आज तुझे कोई मेरी गोद से छीन कर नहीं ले जा सकता।

दोनों हाथों से कमला ने अरुणांशु का सिर अपने सीने में जकड़ लिया।

अरुणांशु की दोनों आँखें बन्द हो आयीं।

तकिये के किनारे उसका सिर धीरे-धीरे ढुलक गया।

राजीव ने व्याकुल स्वर में डाक्टर की ओर सन्दिग्ध भाव से देखते हुए पूछा, क्या हुआ ? क्या हुआ डाक्टर —

डाक्टर ने झट मरीज का नब्ज देखा।

सब खत्म हो गया।

कमला चीख पड़ी, अरे, नहीं नहीं — तुझे मैं नहीं सोने दूँगी बेटा। तुझे मैं नहीं सोने दूँगी। अरे मत सो — मत सो — ओ. अरुण। अरुण —

लेकिन इतने दिनों में अरुणांशु सचमुच सो गया था।

राजीव के जीवन में पच्चीस वर्ष पहले जो उल्का आ गिरी थी — आज पच्चीस वर्ष के बाद वाकई वह राख बनकर निःशेष हो गयी।